हिंदी की समसामयिक ई – पत्रिका

अकस्मात

आज़ादी अंक
15 अगस्त,

प्रधान संपादक : **अशोक आत्रेय**
विशेष संपादक : **नंदिनी सिधारेड्डी**
अतिथि संपादक : **'द्विवागीश' गुड्ला परमेश्वर**
सहयोग : **सुभाष दीपक**

(हिंदी-तेलुगु कथा विशेषांक)

संपादकीय

हिंदी तेलुगु कहानी के अँधेरे-उजियारे पक्ष

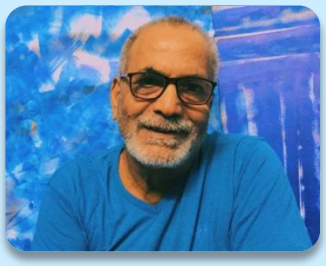

अशोक आत्रेय

हिंदी-तेलुगु संचयन 'परिवेश ' के संबंध में मैं अपनी बात कहने के लिए चौदह कहानीकारों की चौदह कहानियों में से केवल ऐसे चौदह बिन्दुओं का आकलन करूंगा जिससे हर कथाकार की कहानी दूसरे कथा लेखक से अपनी भिन्नता व मौलिकता रखते हुए भी अपने कथ्य शिल्प व वैचारिक पृष्ठभूमि में कहीं भी कमजोर साबित नहीं हो। कहने का तात्पर्य इतना सा है कि हर कथाकार की अपनी रचनात्मकता का सर्वोत्तम अपने पाठक को दे सके। यहां संपादक होने के नाते मेरा और हमारे अतिथि संपादक तथा अन्य संपादकों का इतना तो दायित्व बनता ही है तो चलिए वह निजता व मौलिकता व भिन्नता क्या और कैसी है इसे जरा सा देखते चलें। पहले तेलुगु कथाकारों पर बात करलें।

इस संचयन के पहले कथाकार सी एच मधु की कहानी - क्या मैं मर गया ? विश्वव्यापी मजदूर संघटनों की आत्मा के स्तर तक उतरती और उनके चिर परिचित संदर्भों के ऊहापोह से गुजरती ऐसी रचना है जो अपने कथ्य शिल्प व वैचारिक भावभूमि में समान्तर दो या उनसे अधिक संसारों से होकर गुजरती है और अपने सामान्य यथार्थ से कहीं आगे ले जाकर ऐसी अति यथार्थवादी संरचना में बदल देती है जिसमें हमारे जीवन के संघर्ष व्यक्ति व परिवार की संवेदनाएं और श्रमिक संगठनों के क्रूर विरोधाभासों की अंतरंग दुनिया उजागर होती चली जाती है। इस संघर्ष में सैक्स भी अपनी एक बिल्कुल नयी मार्मिक सच्चाई के रूप में कयी प्रकार की विसंगतियों और मर्यादा-अमर्यादा की भित्तियां खोलता चला जाता है। अंतपंत में जैसे सबकुछ एक नपुंसकत्व का अहसास- जो अवैध संबंधों में भी एक स्त्री को किसी नपुंसक संतान की संभावित मां बनने से रोक देती है लेकिन गहराई से 'चरम बिन्दु की संतुष्टि के बहाने या गरज या आशंका से' क्या मैं मर गया ? के निष्कर्षहीन निष्कर्ष व आधुनिक जीवन मूल्य के रूप में स्त्री -पुरुष संबधों की अनगढ परिणति के रूप में उसका दोहरा चरित्र सामने आता है। यह अपने ढंग की एक अनूठी कथा रचना कही जा सकती है।

इसमें वर्ग चेतना संघर्ष लाठी भाटा जंग बंदूक हत्या हडताल अपने औपचारिक रूप में कालक्रम की एक क्रूर नियति बनकर मजदूर नेता की जिंदगी के विविध उतार चढाव व उद्वेगों से निर्मित होते हुए एक तरह पराजय बोध का ही रूप कथा बनकर सामने आता है। एक अच्छी कलात्मक अति यथार्थवादी रचना है यह। इस अनगढ संवेदना को कला मर्म से अभिव्यक्त करते अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के कलाकार लक्ष्मागौड के रेखांकन हमारी एक बड़ी उपलब्धि है जिसे हमारे लिए हेमंत शेष ने उपलब्ध कराया है।

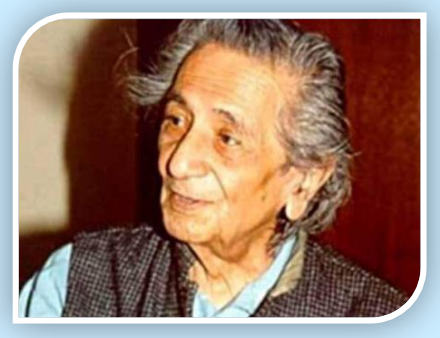

इस समानांतर सृजन पर नयी कहानी से नयी कहानी तक : कहानी की मूलधारा में टकराव, बिखराव व वैषम्य-इधर जब नयी कहानी अपने उद्भव व विकास के जब बिल्कुल प्रारंभिक दौर से गुजर रही थी तभी देश की राजधानी दिल्ली में कुछ व्यक्त- अव्यक्त गुटों की पालेबंदी का भी हल्का सा आभास होने लगा था। इस संबंध में कृष्ण बलदेव वैद की ये पंक्तियां हमारा ध्यान सहज ही में इस दिशा में खींच लेती हैं। बैद की उनके ही शब्दों में उनकी एक तरह की आत्म साक्षात्कार की किताब ' शिकस्त की आवाज' के एक विशेष संदर्भ से जो नयी कहानी के आसपास के ही बनते बिगडते दिन कहे जा सकते है , एक रोचक बात सामने आती है। दिल्ली में बनने वाले ' कल्चरल फारम में उर्दू, हिन्दी, अंग्रेजी , पंजाबी ज़बानों के गठजोड से बनी मंडली तब एक दूसरे की रचनाओं की धज्जियां उडाया करते थे। बहस अक्सर ऊंची और बेतकल्लुफ होती थी। बाकायदा हाजिर होने वालों में भीष्म साहनी जगतराम साहनी, फिक्र तौंसवी, नरेश मेहता, इस्सर, निर्मल वर्मा, अश्क, राकेश, महेन्द्र भल्ला, नरेश कुमार शाद,गोपीचंद नारंग, वगैरह हुआ करते थे। और उन्ही दिनों इलाहाबाद और उसी किश्म के उत्तर प्रदेशीय नौजवान दिल्ली पर विजय पाने के ख्वाबों में मस्त यहां वहां टहलते, चहकते पान चबाते नजर आते थे। मिसाल के तौर पर मनोहर श्याम जोशी, रघुवीर सहाय, श्रीकांत वर्मा, कमलेश्वर। कभी कभी उनका रुख भी हमारी तरफ हो जाता था। इन्हे हम फोरमिये " बाहर के" समझते थे। और शुरू शुरू में शायद हमें महज पंजाबी या नीम पंजाबी मसखरी जिनसे हिन्दी साहित्य को कोई उम्मीद नहीं होनी चाहिए, उर्दू या पंजाबी अदब को भले ही हो।

मेरी समझ में दिल्ली का वह साहित्यिक दौर अपने संक्रमण में नये पुराने अनुभवों हिन्दी व दूसरी भाषाओं व प्रादेशिक संवाद और संघर्ष का वह स्वाभाविक व जरूरी दौर था जब देश आजादी और नव निर्माण के समन्वयवादी जीवन मूल्यों की छटपटाहट से गुजर रहा था और हिन्दी कहानी व कविता भी इससे दूर कैसे रह सकती थी। हमने देखा भी है तब जिस कदर विविधता से भरी साहित्यिक रचनाएं और प्रादेशिक भाषाओं से अनुदित होकर जो रचनाएं सामने आ रही थी उनमें इस प्रकार के संक्रमण की छायाएं साफ साफ देखी जा सकती थी। टाइम्स आफ इंडिया व हिन्दुस्तान टाइम्स की पत्रिकाओं के साथ ही हिन्दी उर्दू और दूसरी प्रादेशिक भाषाओं से भी साहित्यिक आन्दोलनों की धीमी धीमी आंच सुलगना शुरू हो गयी थी।

इधर हम कथाकार कृष्ण बलदेव वैद के जिस संदर्भ से नयी कहानी के दौर से भी जुड़कर अपनी बात कह रहे हैं उसमें बैद की किसी भी प्रकार की सक्रिय उपस्थिति नहीं थी लेकिन उनके लेखन का प्रभाव व कुछ अलग किस्म की चमक नजर आने लगी थी। बैद नये कहानीकारों में वैसे शामिल भी नहीं थे जबकि उनके शब्दों में ही नयी कहानियों की धूम और धुंध थी। वे कहते हैं कि ' अब सोचता हूं तो अपनी सीमाओं और सन्नाटों के बावजूद वह दौर मुझे अपनी खामोश निडरता और खुफिया तैयारियों व तब्दीलियों का दौर नजर आता है।

नयी कहानी के आदिकाल से उसके मध्यकाल तक की अवधि में जिसमें नयी कहानी की ' आधुनिक कथा दृष्टि व बैद की उपस्थिति निर्मल वर्मा से अधिक मूल्यवान और हर तरह से प्रभावी कही जाएगी। बल्कि एक स्तर पर साफ साफ हिन्दी की कहानी के उद्धारक के रूप में हमें बैद की उपलब्धियों को स्वीकार करना होगा। कहानी में उनकी पकड़ जुम्बिश व संघर्ष असरदार व गहरा रहा है। जबकि आश्चर्य तो यह है कि बैद यह मानते हैं कि ' आधुनिक हिन्दी कहानी मेरी दृष्टि में न उतनी आधुनिक है न उतनी उत्कृष्ट जितनी कि उसके मासूम आत्ममुग्ध अल्मबरदार उसे समझते हैं।' यह बात और भी गंभीर है कि बैद ऐसी स्थिति को अपने साहित्य का दुर्भाग्य मानते हैं।

कहानी से कहानी तक

मुझे स्वयं अपनी कहानियों की परिस्थितियां ज्यादा स्पष्ट रूप से याद नहीं रहतीं। केवल एक धुंधली सी स्मृति छाया की तरह हर कहानी के साथ जुड़ी रह गई हैं- निर्मल वर्मा

हम 'कथा समीक्षा वृत्त' के अन्तर्गत विश्व कहानी की पड़ताल कर रहे हैं- कुछ सूत्रों से ही, जो फिलहाल हिन्दी कथाओं अथवा विदेशी कहानियों के हिन्दी अनुवाद या अन्य माध्यमों से उन बुनियादी सवालों के उत्तर ढूंढने की एक तलाश होगी जो कहानी के विकास को किसी न किसी अवधारणा के रूप में उजागर करेगी। जैसी हमने घोषणा की है कि यह परिचर्चा बिना किसी भूमिका या नीति-निर्धारण के ही केवल कहानीकारों पाठकों व आलोचकों के बीच एक रचनात्मक संवाद बनेगी इसलिए हम अपने सहयोगियों से विश्व के कथा कैनवस व धरोहर को ही साक्षी मान कर उसके सही परिप्रेक्ष्य में कहानी को समझने की एक विनम्र कोशिश करेंगे। इस निमित्त इस हस्तक्षेप में भी हम आपसे जुड़ने का आग्रह भी कर रहे हैं। आप खुले दिल से अपनी बात कह सकते हैं । हम आवश्यक संपादन के साथ आपकी बातचीत को 'कथा समीक्षा वृत्त' के हित में अधिकाधिक साहित्यिक मित्रों के बीच पहुंचाने का प्रयास करेंगे। हो सकता है 'कोई धुंधली सी स्मृति आपका भी पीछा कर रही हो।' सुप्रसिद्ध कथाकार निर्मल वर्मा की तरह !

निर्मल वर्मा किसलिए ? -1

हमने शुरूआती तौर पर ही निर्मल वर्मा का चयन इस सीरीज में इसलिए किया है क्योंकि उनका रचना संसार भारतीय कथा परंपरा व उनके पाश्चात्य प्रभावों को विविध भावनात्मक रूपों, भाषा - संरचना, शिल्प व उनकी तार्किक परिणितियों तक ले जाने व देखने परखने का प्रथम दृष्टया अवसर प्रदान करता है। उनकी तुलना में हमारी समझ में इस रचनात्मक व्याप्ति को आज की हिन्दी कहानी को उसके तमाम सरोकारों के साथ ग्रहण करने की प्रामाणिक ऊर्जा को वहन करने में कोई दूसरा कहानीकार उसी दौर का उतना समर्थ नहीं है। कृष्ण बलदेव वैद का हम दूसरे संदर्भ में चर्चा करेंगे। यह विनम्र दावा हम शायद पहली बार किसी भी मंच (वृत्त) पर इसलिए भी करना चाहते हैं ताकि हम विश्व कहानी के परिप्रेक्ष्य में हिन्दी कहानी की दशा, दिशा व संभावनाओं को लेकर कोई साफ निर्णय ले सकें। इस मौलिक आधार के बिना हम हिन्दी कहानी का कोई सही मूल्यांकन कर पाएंगे इसमें मुझे संदेह है।

अब यह सही समय है कि कहानी के केवल कुच-मर्दन करते रहने , कीचड़ में कमल की द्वंद्वात्मकता या संभोग से समाधि तक के अद्वैतवादी सनसनीखेज संसार में इसकी निरर्थक खोजबीन करते रहने के बजाय हम मौलिक व वैज्ञानिक स्तर पर उसके संपूर्ण दैहिक दैविक व भौतिक तापों पर भी कुछ सोच समझ कर विचार करना शुरू करें । इसका साफ कारण यही है कि हमने कहानी के साथ अब तक गरीब की जोरू जैसा ही व्यवहार किया है और मनमाने ढंग से इसके सर्वाधिक शक्तिशाली माध्यम को निहित स्वार्थों में इसका उपयोग किया है। हिन्दी कहानी चाहे जहां पहुंच गयी है लेकिन इसकी समालोचना अभी भी बुद्धू के बक्से में ही बंद है । बौद्धिकता की अभी इसे संतुलित आंच हवा या पानी लगना बाकी है। हम इस बुनियादी कमजोरी

और इससे जुड़े दायित्व को लेकर ही हिन्दी कथा को विश्व कहानी के परिप्रेक्ष्य में जानने व समझने के किंचित इच्छुक हैं। चलिए बात यहीं से और आगे बढाएं - निर्मल वर्मा किसलिए? इसके कुछ संकेत कुछ इस प्रकार के हैं-

हिन्दी की नयी कहानी आन्दोलन के वे 'चौथे कोण' माने जाते हैं। दर्शन की भाषा में त्रिकोण में तीन ही कोण होते हैं । चौथा कोण आते ही चूंकि त्रिकोण स्वतः नष्ट हो जाता है - इसलिए हम निर्मल को इस तथाकथित त्रयी- 'मोराक' बंधुओं (यह नाम मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव व कमलेश्वर के लिए समर्थ आलोचक प्रकाश परिमल ने 'वातायन' में दिया था) से हर सूरत में अलग मान कर ही बात करेंगे । यह हमारे प्रस्ताव या प्रवेश-बिन्दु के रूप में शायद मददगार साबित हो। निर्मल को आज भी हम इस त्रयी के - 'लाभ हानि जीवन मरण यश अपयश ' से दूर ही मान रहे हैं। लेकिन यह विधि हाथ नहीं सोची समझी चाल है - कथा शतरंज की। इसका रोचक पक्ष यही है कि निर्मल वर्मा को नयी कहानी के 'त्रिकोण' का एक 'चौथा अपरिहार्य कोण' भी मानना होगा । फिर यह भी तो साफ है कि इन परिस्थितियों से ही तो कहानी की आगे की यात्रा संभव हुई जिससे कहानी ने आगे जाकर अन्तर्राष्ट्रीय स्तरों को छुआ है।

हम उपरोक्त आधार पर ही यह जानना चाहते हैं कि एक ही समय की कथा-धाराओं या एक ही लेखक द्वारा लिखी गई विभिन्न रचनाओं में अच्छी या बुरी रचना को जांचने परखने का कौन सा पैमाना होता है। उसके आधार पर हम कहानी या किसी भी अन्य कलाओं को किन तत्त्वों के आधार पर स्तरीय, कम स्तरीय या घटिया दर्जे का करार देते हैं ? यह एक व्यावहारिक और बुनियादी सवाल है और इस दिशा में काफी कम चिंतन हुआ है। कहानी की भाषा उसके शिल्प और मूल्यों के संक्रमण के आधार पर ही हम उसका समुचित मूल्यांकन कर सकते हैं। यहां मैं एक अलग ही तरह का उदाहरण आपके सामने रख रहा हूं। नयी कहानी के एक प्रमुख कथाकार व विचारक राजेन्द्र यादव के संपादन में राधाकृष्ण प्रकाशन के 'एक दुनिया समानांतर' कहानी संग्रह के कवर के आखरी पृष्ठ पर अमरकांत की कहानी जिंदगी और जोंक की कुछ पंक्तियों को ही उद्धृत किया गया है और उसे ही ' स्वतंत्रता के बाद की सर्वश्रेष्ठ कहानियों के कथा संचयन' के लिए इस रूप में मान्यता व महत्व दिया है जिससे यह बात संभवतः जाहिर होती है कि अमरकांत की यह कहानी भारतीय कहानियों में अपना केन्द्रीय स्थान रखती है। अपनी भाषा संवेदना व शिल्प में।

यह भूखण्ड अभी भी तप रहा है -2

विश्व-कथा आज जिस जिस दायरे में आ गई है वह काफी हद तक बहुआयामी है । यह कोई नयी बात नहीं है। यह सब पहले भी था । हो सकता है, आधा- अधूरा रहा हो । लेकिन आज इसका चरित्र पूरी तरह से ग्लोबलीय है ।

दरअसल कहानी का सीधा संबंध मनुष्य से है और वह देश देशान्तर की सभी कहानियों में विविध रूपों में देखने को मिलता है। इन सभी रूपों में अलग-अलग देशों के एक दूसरे से संपर्क से होने वाले प्रभावों का भी सीधा असर देखने को मिलता है। कहानियों का प्रारंभिक दौर विश्व के धर्मग्रंथों के प्रसार प्रचार के साथ साथ लोक-जीवन से जुड़ी कथाओं के माध्यम से भी सामने आया। इस सबमें पुरुष स्त्री प्रकृति पशु-पक्षी गांव कस्बों व नगरों व महानगरों के बीच कहानी का दायरा विस्तृत होता गया और कहानी विश्व भर के विभिन्न भाषा समुदायों के बीच संवाद का एक सबल व सजीव माध्यम बन गयी।

मानवीय रिश्तों की वैश्विक आधारशिला पर ही सकल विश्व की कहानियां विकसित हुई। इनमें मूलरूप से सृष्टि की उत्पत्ति और उसके अंत को लेकर विश्व के सभी मानव समुदायों व सभ्यताओं ने अपनी अपनी कहानियां कहीं । मानव की उत्पत्ति से जुडे सवालों को ईश्वर के अस्तित्व के रूप में एक समाधान के रूप में खोजा गया। और इसी कथा के इर्द गिर्द पौराणिक आख्यानों की रचना हुई। सृष्टि की रचना एक अज्ञात सत्ता ईश्वर ने की यह विश्वभर के धर्मों ने एक स्वर में स्वीकार कर लिया गया और इस मिथकीय अवधारणा पर सारी दुनियां में थोडे बहुत फेर बदल के साथ कहानियों की रचना हुई। यह दौर मनुष्य की सामाजिक उपस्थिति व सभ्यता का वह दौर था जब मानव व्यवहार में भाषा का समुचित विकास हो गया था।

प्रकृति व मनुष्य के बीच आदिम युग के बाद सह अस्तित्व का रिश्ता कायम हो चुका था। और विश्व मानव ने अपनी अपनी जमीन व भूखण्डों पर सभ्यता के शिलालेख लिख दिए थे। मानव सभ्यता और संस्कृति के इसी बृहद् परिवेश में ही कथा-शिशु ने भी अपनी आंखें खोलीं और धीरे धीरे यह शिशु एक पूर्ण मनुष्य और महामानव में बदल गया ।

पूरे ब्रह्माण्ड में मानव की इस बृहद उपस्थिति के कारण मानवता के विकास की अवधारणाएं भी बदली और सारी दुनिया धीरे धीरे ग्लोबल हो गयी। हमने इस दुनिया को आंवले की तरह हथेली पर रख कर उस का सिंहावलोकन भी करना सीख लिया। फिलहाल हम विश्वकथा को भी इसी नजरिये से देखने समझने का एक विनम्र प्रयास कर रहे हैं।

यह प्रयास भारतीय भूखण्ड या बाईपास से इसलिए हो रहा है क्योंकि भारतवर्ष विश्व की प्राचीनतम सभ्यताओं में से एक है। भारत का भूखण्ड भी अभी तप रहा है - ऐसा कहा है एक कवि ने भी ।

कहानी कही एक कटे शीश ने-3

प्रजापति ब्रह्मा के पुत्र मनु द्वारा मैथुनी-सृष्टि शुरू करने से पूर्व सब कुछ सृजन-विहीन, निर्जीव व भाव शून्य था। इस अकेलेपन से ऊब कर ब्रह्मा ने विष्णु के परामर्श से अपने कमण्डल से जल की कुछ बूंदी छिड़कीं और तत्क्षण यह सृष्टि सभी जीव जंतुओं और वनस्पतियों के साथ आनंद से लहलहा उठी। इसी क्षण विद्याओं और कलाओं की देवी सरस्वती का भी प्रादुर्भाव हो गया। देवी सरस्वती के कर-कमलों में वीणा भी थी जिसकी एक झंकार के साथ सारी सृष्टि जैसे सृजनात्मक हो गई। बस इसी सम्मोहन में बंध कर ही परमपिता ब्रह्मा के हृदय में सौन्दर्य और सृजन की देवी सरस्वती से संभोग करने की अनुभूति हुई और वे अपनी ही कामना से उत्पन्न इस लावण्या से रतिकर्म के लिए आसक्त हो गये। उनमें काम की पाशविक भावना उत्पन्न भी हो गई और सब कुछ भूल कर उन्होने सरस्वती के साथ कामवासना से पाशविक कर्म किया। कहते हैं सरस्वती ने इससे बचने के लिए चारों दिशाओं में दौड़ भी लगाई लेकिन ब्रह्मा अपने चार मुख करके सरस्वती को वासना से देखते रहे। अंततोगत्वा सरस्वती को उनसे बचने के लिए आकाश में भी छिपना पड़ा। लेकिन ब्रह्मा ने अपना पांचवा सिर उत्पन्न करके वहां जाकर भी अपनी काम वासना की तृप्ति स्वयं को मृग और सरस्वती को मृगी बना कर पूरी की। परमपिता के इस दुराचार से सारे देवी देवताओं में तमस भाव पैदा हो गया और पशुपतिनाथ बनकर आदि देव शिव ने ब्रह्मा के पांचवें सिर को उसके धड़ से अलग कर दिया जिससे एक नक्षत्र मृगशिर की भी उत्पत्ति हुई। इसी के शीश ने ही कही यह कहानी।

एक मृग के रूप में पाशविक वृत्ति का वैसे तो संहार शिव द्वारा हो गया लेकिन बाद में सृष्टि यज्ञ को चालू रखने के लिए मैथुनी-सृष्टि की शुरूआत मनु द्वारा की गई।

सृजन, पोषण और संहार से जुड़ी इस सृष्टि भारतीय परंपरा में त्रिदेव या त्रयी के रूप में मान्य हैं। कुछ वैसी ही मान्यता सहज रूप से हिन्दी की आधुनिक कहानी की परंपरा में मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव व कमलेश्वर ने भी प्राप्त की है। हमने

इसी संदर्भ में इन ' मोराक' बंधुओं को त्रयी के रूप में स्वीकार भी किया है, लेकिन विवादास्पद रूप से इस' त्रिकोण का एक आभासीय चौथा कोण' निर्मल वर्मा को भी माना है। इसी सिलसिले में नयी कहानियों पर हुई विशद विवादास्पद चर्चाओं के बीच अपनी बातचीत को शुरू करने के लिए एक आभासीय (वर्चुअल) बिन्दु राजेन्द्र यादव के कहानी संग्रह की कुछ प्रतिनिधि कथाओं को मानते हुए उस पुस्तक की भूमिका को अपने संवाद के लिए अपरिहार्य मान लिया है। फिलहाल इसका 27 वां वर्ष 2022 का नवीन संस्करण हमारे पास इस लेखन माला के लिए उपलब्ध है ही। इसके अतिरिक्त हम बीच बीच में अन्य आवश्यक संदर्भों व विमर्श से भी लाभ उठाते रहेंगे ताकि विश्व कहानी में हिन्दी कथा के स्थान का अनुमान लगा सकें जिसका फैलाव कहानी और आठवें दशक तक की कहानियों तक महसूस किया जा सकता है।

दिगन्त की खिड़की खोलनी होगी - 4

संयोगवश 'एक दुनिया समानांतर में भी संचयन के संपादक व वरिष्ठ कथाकार राजेन्द्र यादव ने सृष्टिकर्ता ब्रह्मा और नयी सृष्टि के अन्वेषक विश्वामित्र को लेकर एक सवाल शायद इसलिए उठाया है ताकि वे इस समीकरण के माध्यम से अपने कथा चयन की ' समानांतर दुनिया' का भी कोई जोड़ बैठा सकें। यह रूपक यादव को इतना लुभावना लगा है कि अपनी इस सुदीर्घ प्रस्तावना की शुरूआत और समापन दोनों इसी से किया गया है और उसके बीच में कहानी की अपनी समझ व संकलित कहानियों का गुलदस्ता प्रस्तुत करके उसका अपनी तरह का विश्लेषण किया है। यादव कहते हैं - अक्सर एक प्रश्न मुझे तंग करता है : विश्वामित्र नायक हैं या खलनायक ? जिस संसार में उन्होने सृष्टि की थी वह कैसा था ? उसके लोग, मकान, नगर और व्यवस्था- प्रबंध कैसे थे ? वे लोग स्थापित संसार से कितने भिन्न थे? ऋषि का यह कार्य गलत था या सही?

'अक्सर यही प्रश्न मुझे तंग करता है। विशेष रूप से आज का कथा- जब जब अपने युग संदर्भों और बोध के साथ मुझे खींचता है तो एक तप - जर्जर व्यक्ति मेरे सामने आ खड़ा होता है। एक समानांतर सृष्टि का निर्माता, दुर्दांत आत्मविश्वास या डैस्परेंट हताशा से खौलता हुआ अकेला एक व्यक्ति इस दुनिया से अलग एक नये और भिन्न संसार की परिकल्पना को साकार करने की पीड़ा में आतुर व्यस्त, उपेक्षित शक्ति!' गनीमत है कि इसी प्रस्तावना के समाहार तक आते आते यादव अपने ही प्रश्न का एक समाधान तो ढूंढ लेते है - उनके अपने ही शब्दों में कुछ इस तरह ! ' मुझे पता नहीं इस नई दुनिया के अन्वेषक और सृष्टि को इतिहास क्या कहना चाहेगा - विश्वामित्र या ब्रह्मा ? वह खलनायक बनकर उठेगा या नायक ? आज तो सचमुच, विश्वासपूर्वक यह जानना भी असम्भव है कि इन दोनों में खलनायक कौन है ?' इसके ठीक पहले राजेन्द्र यादव ने जो कहा है वह शायद अधिक विचारणीय है।

'और मुझे लगता है आज की हमारी नई कहानी जहां आ गई है, वह उसका समाप्त होना नहीं है, आगे गति न होने के कारण बिखर जाना है किसी बंद दरवाजे पर सिर पटककर सांस तोड देना है शायद जिन्दगी भी किसी ऐसे ही बंद प्रारंभ की दहलीज पर आगई है मगर जिन्दगी और कहानी को दरवाजा तो खोलना ही होगा।'

फिलहाल हम यहां यादव के एक ऐसे रोचक प्रसंग की ही चर्चा से अपनी बात को आगे विस्तार देना चाहते है जब वे हमारी कुछ हजार वर्ष की नगरीय सभ्यताओं पर नगर नियोजन के आधार यह जानना चाहते हैं कि विश्वामित्र की नयी दुनिया या स्वर्ग कैसा रहा होगा। हमारे पौराणिक ग्रंथों व वैदिक संस्कृति के आधार पर आज तो यह सब कल्पनातीत ही कहा जाएगा। आज रामराज्य उनकी अयोध्या या कृष्ण की द्वारिका की संपन्नता का भी कोई अनुमान नहीं लगा सकता। यह जरूर है कि हमारी पुरातन सभ्यता के खंडहरों से ही हम भारतीय साम्राज्य के विश्वव्यापी वैभव को अनुभूत कर सकते है। यही सांस्कृतिक मूल्य के रूप में हमारी कलाओं व साहित्य में आंशिक रूप में अभिव्यक्त हुआ है लेकिन स ही वात्स्यायन जी के अनुसार उनके प्रतिमान भी आज मैले हो गये हैं। आज की कहानी में सब कुछ एक विखण्डित यथार्थ के

रूप में उच्छिष्ट जैसा ही बचा है जिस पर भी हम गर्व करने में जाने किस प्रकार की कुंठा का शिकार हो जाते है जबकि पश्चिमी जीवन मूल्यों को हम आज भी मृत शिशु के रूप में बंदरिया की तरह चिपकाकर खुश हो रहे हैं। यह जो मरणाधर्मा संस्कृति है उसे। दुर्भाग्य से हजारों वर्षों की गुलामी के बाद यह विभाजित व खंण्डित- आजादी जिन लाखों करोडों लोगों के बलिदान से मिली उसे भी हम देशव्यापी गरीबी बेरोजगारी भ्रष्टाचार व तमाम प्रकार के अनैतिक आचरणों से चीर चीर करने में लगे हुए हैं। आज भी हमारा देश मजहबी आतंकवाद व सांप्रदायिक वैषम्य का शिकार है और जीवन मूल्यों का सतत ह्रास हो रहा है। आज कहानी को किस तरह के नायक या खलनायक की जरूरत है यही सवाल कथाकार राजेन्द्र यादव ने अपनी नयी कहानी की भूमिका में उठाया है। संभवतः ऐसे ही प्रश्नों के समाधान हमें शिव संकल्प से ढूंढने होंगे। आज की कहानी और आने वाली भविष्य कथा के दरवाजे - खिडकियां खोलने के अलावा दिग्-दिगंत में भी कहीं दस्तक देनी होगी। विश्व कथा के साथ कदम ताल(तांडव)करने के लिए। चरैवेति चरैवेति के शाश्वत जीवन दर्शन के साथ।

यथास्थिति के विरुद्ध विमर्श की विसंगति - 5

विश्व की कोई भी विचारधारा या दर्शन विरोधाभास व विसंगतियों से आगे पीछे जुड़कर हमारे सामने ऐसे प्रतिरोध खड़े कर देते हैं जिनको दूर करने या उनका समाधान निकालने के लिए कोई नयी विचारधारा या दर्शन जन्म लेता है। इस तरह से विश्व के सभी समाजों के सामने किसी भी समस्या का स्थायी समाधान नहीं होता। न हीं कोई ऐसी आदर्श रूपरेखा बनती है जिसके आधार पर कोई वैश्विक जीवन मूल्य बन जाए। मानव विकास इस अर्थ में रचना के निर्माण व पुनर्निर्माण **construction and deconstruction** की कसौटी पर बनता और बिगडता रहता है। हर समाज अपने लिए कोई ऐसी ही अस्थायी व्यवस्था को ही बना पाता है जिससे उसका जीवनचक्र येन केन प्रकारेण चल सके। वैसे इसी तरह प्रकृति भी जन्म व मरण के बीच पोषण का कोई न कोई तदर्थ विकल्प हर जीव के लिए सुरक्षित रखती है जिससे वह अपने सुख दुख व आनंद के किसी सृजनात्मक प्रयोजन की तलाश कर लेता है। इस सारी सृजनशील संरचना में ही हमारी सभी कलाओं की सिद्धि होती है। धर्म व्यापार राजनीति संस्कृति आदि के सभी कार्यों का संपादन भी होता है।

उपरोक्त संदर्भ में साहित्य व विशेष रूप से भारतीय कथा परंपरा और उसके सृजनात्मक पक्ष को लेकर हमारे सामने हिन्दी की नयी कहानी को एक आधार बिन्दु मानते हुए उसके पर्सपैक्टिव में विविध सामाजिक सांस्कृतिक राजनैतिक परिस्थियों का समीचीन आकलन करना जरूरी लगता है। जैसा पहले भी हमने विचार किया है इसके लिए हमें 'एक दुनिया समानांतर' और उसके संपादक राजेन्द्र यादव व अन्य कुछ कथाकारों की कहानियों और उनके विचारों को भी समझना होगा। क्योकि आगे का सारा खेल विमति व विमर्श की विसंगतियों से भी जुडा है। व्यापक चिंताओं के साथ साथ ही। आज इसके पुनरुद्धार की जरूरत है।

वैसे नयी कहानियों के प्रमुख प्रणेता तो हिन्दी के प्रसिद्ध आलोचक तो भैरव प्रसाद गुप्त ही रहे हैं जिन्होने नयी कहानी पत्रिका का पहला अंक नयी दिल्ली से 1956 में निकाला था और उसी के बाद नयी कहानी आन्दोलन शुरू हो गया था। उसे बाद में मोहन राकेश ने भी अक्षर प्रकाशन के संरक्षण में संपादित किया। यह भी कम आश्चर्य की बात नहीं कि हिन्दी गजल के प्रणेता दुष्यंत कुमार ने ही यह नया नाम नयी कहानी दिया था। नयी कहानी को नये मूल्यों नये शिल्प व भावबोध के नग्न यथार्थ पुरातन के प्रति अवग्या प्रेम व यौन की पुरजोर अभिव्यक्ति व्यक्ति की पीडा संत्रास घुटन

अजनबीपन एकाकीपन के आधुनिकतावादी नये सृजनशील मूल्यों के सक्रिय आग्रह के साथ तत्कालीन पाठक वर्ग के लिए प्रस्तुत किया गया। इस समय कमलेश्वर ने भी अपना मोर्चा सारिका के संपादक के रूप में संभाल लिया था।

चल रहा है रेत - समाधि का खेला - 6

कहानी, नयी कहानी और उसके बाद कहानी के रूप रंग व विचारों में जो भी परिवर्तन आए वे सभी वैश्विक जीवन मूल्यों से जुडे व्यापक मानवीय विकास या विनाश के संक्रमण से जुड़े थे। ऐसा कोई परिवर्तन नहीं था जिसकी ग्लोबलीय अवधारणा इसी सबके आगे पीछे नहीं पैदा नहीं हुई हो। इसी संदर्भ में यह भी जानना और समझ लेना जरूरी है कि कहानी नयी कहानी या आगे की किसी भी कहानी व आज या अभी की कहानी की अवधारणा रातों-रात निर्मित नहीं होती। उसके पीछे की वर्षों की तैयारी और संघर्ष विद्यमान रहता है। इस सबके पीछे जीवन के छोटे छोटे ताजमहलों या कलियुगी वेदव्यासों अथना वामपंथी वामन अवतारों के पिछलग्गू बनने या उनकी झंडाबरदारी करने की फिलहाल कोई जरूरत नहीं है। कोई छोटा सा ओढी हुई बबंडर भावुकता का किसी रेत समाधि से आकस्मिक रूप से प्रस्फुटित भी अगर होता है कहीं तो उसे मूल्यांकन की भारतीय व वैश्विक दोनों ही कसौटियों पर कसे बगैर उसे महत्व देना साहित्य संस्कृति व कला की व्यापक दुनिया में कतई आवश्यक नहीं है। कई बार बुकर जैसे मूल्यांकन भी किसी कृति के श्रेष्ठ होने की गारंटी नहीं होते। हिन्दी वाले चाहे किसी भी रूप में इसे स्वीकारें। हम यही सोचते हैं कि की बार पुरस्कार या गुटबाजी अच्छी कृतियों को पीछे ढकेलना का काम भी करते हैं। इस आपाधापी के जमाने में ' न एक दुनियां समानांतर ' का ब्रह्मा और विश्वामित्र का कोई रूपक अंतिम सत्य बनता है न ही ' अयाल पर हाथ फेरते ही उपस्थित' कोई मुक्ति बोधीय ब्रह्म राक्षस या उसकी आप्तवचनी मुद्रा स्थायी प्रमाण। ऐसे अस्थायी आन्दोलनों व दुर्घटनाओं का मुलम्मा बहुत जल्दी उतर जाता है। एक छोटे से कलिकाल काल के बाईपास से 24×7 समयावधि में जाने कितनी गाडियां अप व डाउन करती है उसे शब्दों की लफ्फाजी जाति वर्ग या लिंग की तरफदारियों या तथाकथित अस्मिता विमर्श से नहीं समझा जा सकता। खास करके उस 'बौद्धिक' चाल से तो बिल्कुल ही नहीं कि ' ब्रह्म पर कोई चर्चा नहीं बाकी कोई भी बात विमर्श के लिए स्वीकार्य। ऐसी शास्त्रीय चालबाजी व चुहल हम बहुत सारी देख व समझ चुके है। राजेन्द्र यादव व उनकी त्रयी ने ऐसा कोई खेला ही नयी कहानी के साथ किया है। मोराक बंधुओं ने बड़ी चतुराई से हिन्दी की कहानी पत्रिका ' कहानी' के पांचवे दशक के कुछ सूत्रों व कुछ कथाकारों की धीमी आंच के कोयलों को निकालकर निर्मलवर्मा भीष्म साहनी व कृष्ण बलदेव वैद को हाशिये पर डालकर नयी कहानी को आन्दोलन-धर्मी चेतना से जोडने की मुहिम शुरू की जिसका लाभ भी इसे मिला। इसी त्रयी ने तेल और तेल की धार देखकर जैनेन्द्र और अज्ञेय पर भी घातक हमले किये हैं। जो अब आगे जाकर प्रेमचंद पर खुले आम हो रहे हैं जिसकी चुपचाप गवाही दे रहे है आधुनिक विमर्श के भीष्म पितामह नामवर सिंह और हमारे ' नये -अतीत के आविष्कर्ता - पैरोकार व भारतीय संस्कृति के स्थापित कमिसार अशोक वाजपेयी।

पिछले वर्षों में आजादी के आसपास व कुछ बाद हिन्दी साहित्य के कहानी और कविता के क्षेत्र में तरह तरह के आन्दोलन हुए और इससे नयी कविता और नयी कहानी का अवतरण भी हो गया। यह हम सभी के लिए इसलिए बड़ी उपलब्धि कही जा सकती है क्योंकि हमारा साहित्य आधी अधूरी मूल्य मान्यताओं व दिशाहीन वर्गीकरण से किसी न किसी रूप में बाहर तो आया।

संक्षेप में यह सब खेला नयी कविता और कहानी दोनों ही विधाओं में लगभग समानांतर देशकाल में ही संभव हुआ। एक युग में हिन्दी कहानी के पिछड़ेपन व उस पर उर्दू अंग्रेजी साहित्य के सीधे आरोपण से उसे थोड़ी-बहुत मुक्ति मिली।

हम कहानी में इसके वैदिक पौराणिक व ऐतिहासिक रूपों से बाहर आने में समर्थ हुए। कथा वृत्त आख्यान या आख्यायिका अथवा गल्प के घेरे से निकलकर हिन्दी की कहानी पश्चिम व अमरीकी शोर्ट स्टोरी की आधुनिक धारा का

एक रूप या फोर्म बनी। इसके विस्तार के लिए हम आगे बात करेंगे कि यह सब क्यों कैसे और किस तरह से हुआ और इसका श्रेय किसे दिया जाना चाहिए। हिन्दी की प्रारंभिक दौर की खिचड़ी कहानियों और मुंशी प्रेमचंद के युग के बीच हम इसका काल विभाजन कर सकते हैं जो लगभग प्रेमचंद प्रसाद व गुलेरी जी के आगमन तक अपनी लगभग अपरिभाषित स्थितियों के बीच खरामा खरामा चला। यह माना जाना चाहिए कि आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने किसी तरह से खींचतान करके हिन्दी की पहली कहानी से लेकर कथा से कहानी बनने तक के कुछ मूर्त अमूर्त सूत्रों के हवाले से हिन्दी की कहानी की विकास धारा को समझने का महत्वपूर्ण काम किया। इसी युग में सुयोग से प्रेमचंद की - कफन, पूस की रात, प्रसाद की 'आकाशदीप 'व गुलेरी की 'उसने कहा था 'जैसी कहानियां हिन्दी के खाते में दर्ज हो चुकी थी।

कफन : अथातो कर्म जिज्ञासा - 7

किसी भी यात्रा को अधूरा छोडना मेरे जीवन का शायद कोई ऐसा रहस्य ही कहा जाना चाहिए जिस पर आगे कोई प्रश्न खड़े करने की मुझे या किसी दूसरे को भी जरूरत नहीं होनी चाहिए। अर्नेस्ट हैंमिग्वे की एक कहानी 'द सन आलसो राइजेज ' से भी शायद हमें इसलिए इस रहस्य का जवाब नहीं मिल सकता है क्योंकि हैमिंग्वे ने भी सूर्य जैसी अल्टीमेट शक्ति के साथ व्याकरण की भाषा ' आलसो' का प्रयोग किया है। यह अद्भुत है। इसी क्रम में अगर मैं नाचीज ' ब्रह्मसूत्र- अथातो ब्रह्म जिज्ञासा की जगह कथा या कहानी के संदर्भ में 'कर्म- जिज्ञासा' की बात करता हूं तो वह भी हमें सहज रूप से स्वीकार करना चाहिए। दरअसल उसके पीछे हमारे दैविक दैहिक व भौतिक तापों का वह रोमांचक रहस्य लोक भी तो छिपा है। उसको उसके सर्पाच्छादित स्वर्ण कलश से बाहर इसके मरणधर्मा कर्मकाण्ड - मीमांसा दर्शन से लेकर उत्तर आधुनिकता काल तक के जादुई गुड-मुडिया संसार में 'जन- सरोकारों' की अदालत में हमें पेश करना होगा।

भारतीय संदर्भ में राम कथा व कृष्णलीला का बहुत महत्व है। इसका कारण यही है कि ये दोनों समानांतर कथाएं एक तरफ युग सापेक्ष हैं दूसरी तरफ जनोन्मुखी भी। इसके बावजूद कोई भी आलोचक इनको इनके मिथकीय चरित्र के बावजूद किसी भी आधार पर इसलिए नहीं नकार सकता क्योंकि वे अपनी संपूर्ण संप्रेषणीया में चमत्कारिक रूप से ग्लोबलीय या वैश्विक हैं। हम हमारे कथाकार मुंशी प्रेमचंद को उस रूप में तो विश्वस्त नहीं मानते लेकिन एक परिमार्जित क्लासिक के रूप में इसे हर दृष्टि से स्वीकार करते हैं। कफन जैसी दूसरी कहानी भारत के किसी दूसरे लेखक ने आज तक नहीं लिखी यह सच है। हम अपनी कही बात पर ही कुछ सवाल और उनके जवाब भी इसलिए तलाश कर रहे हैं ताकि दुनियाभर के बेबुनियाद विमर्शों की कंटकाकीर्ण पगडंडियों से अलग हट कर हम 'कफन' के मानवीय सामाजिक व सांस्कृतिक आधारभूमि को दृश्यगत रखते हुए उसके आभ्यंतरिक व संरचनात्मक दोनों ही पक्षों से हम उसका सिंहावलोकन कर सकें।

फिलहाल कथा सम्राट प्रेमचंद पर क्षण भर – 8

हम सभी जानते हैं कि प्रेमचंद हिन्दी कहानी के उस दौर में हिन्दी के कथाकार थे या उर्दू के इस बहस से दूर रहते हुए हम उनकी किसी भी जातीय वर्गीय या वैचारिक पूर्वग्रहों से मुक्त यथार्थवादी - आदर्शवादी ऐसा कहानीकार मानते है जो कहानी के उच्चतम मूल्यों के शिखर पर आसीन हो गये थे। उनका जीवन संघर्ष सुनिश्चित रूप से कलम के एक 'किसान मजदूर या कर्मचारी' का ही था । सिपाही एक ऐसी उपमा है जिससे काफी कुछ अस्पष्टता की अभिव्यक्ति ही होती है। उनके जीवन और साहित्य से जुडे विविध पक्षों को लेकर हम आने आने वाली शताब्दियों तक शायद इसलिए बात करते रहेंगे क्यों उनका साहित्य मानव कर्म और उसके संघर्ष की कलात्मक अभिव्यक्ति है। हम उनके कथाकर्म और उसकी

ऐतिहासिक सामाजिक पृष्ठभूमि पर बात इसलिए भी करना चाहते हैं क्योंकि हमारी समझ मे वे हिन्दी के शिखरस्थ कहानीकार हैं

निर्मल की 'परिन्दे' कहानी नयी कहानी की प्रतिनिधि रचना नहीं है - 9

हम अपने खाली समय को भरने के लिए कहानी या कविता पढते हैं। यह पढना जिन्दगी के किसी भी अनुभव से अलग है। कविता और कहानी में थोड़ा-बहुत अंतर होता ही है। इसीलिए ये दोनों विधाएं अलग अलग हैं। इन दोनों विधाओं में बुनियादी फर्क ये है कि कविता कई अनुभव खंडों का एक कोलाज या संयोजन होता है जबकि कहानी एक या अधिक से अधिक दो या तीन अनुभव खण्डों का विस्तार हो सकती है। यह भी एक बडा फर्क है कि कविता के अनुभव खण्ड कहानी की तुलना में छोटे छोटे होते हैं। मुझे यह भी लगता है कि कविता वृत्तात्मक व लयात्मक होती है जबकि कहानी गद्यात्मक, वर्णनात्मक , समकोण, रेखीय या त्रिभुजाकार। कविता की अनुभूति और उसकी अभिव्यक्ति प्रभाववादी कला के अधिक नजदीक होती है। उसमें यथार्थ व अतियथार्थ का भी बोलबाला तो होता है लेकिन वह अपने निष्कर्ष में कहीं भी छलांग लगाकर या पंख लगाकर उठकर जा सकती है। वह असीमित उडान भरती है। कहानी कुछ धीरे चलती है। वह अपने पर्यवेक्षण में सूक्ष्म होती है। कहानी कविता की तुलना में अधिक बहिर्मुखी होती है। हम यह देख सकते हैं कि अज्ञेय, मुक्तिबोध, काशीनाथ सिंह, श्रीकांत वर्मा, रघुवीर सहाय की कहानियां, कमलेश्वर, राकेश, भीष्म साहनी, ज्ञान रंजन, ममता कालिया और मन्नू भंडारी आदि की तुलना में काव्यपरक अधिक हैं। इस सबके के बावजूद सिवाय संरचनात्मक अलगाव या फर्क के कहानी या कविता की कोई तथ्यपरक पडताल होना संभव नहीं है। यहां हम फिलहाल विदेशी कहानीकारों की बात नहीं कर रहे। लेकिन किस्सागोई को आधुनिक कहानी में कोई स्थान नहीं मिल सकता है। कहानी के नाम पर लघु उपन्यास लिखने वालों को मैं कहानीकार नहीं मानता। एक कहानी में एक या दो पात्रों या घटनाओं के विस्तार की जरूरत नही। नामवर सिंह का निर्मल वर्मा की परिन्दे को नयी कहानी की प्रतिनिधि कहना सही नहीं लगता। परिन्दे एक लघु उपन्यास है। उसमें किस्सागोई है। उनकी लवर्स व दहलीज अच्छी कहानियां है।

कथा से कहानी और उसके बाद - 10

यह तो हम सभी जानते हैं कि भारतीय वेद- पुराण, महाकाव्यों व बाद के बौद्ध, जैन, वैष्णव शैव- शाक्त आदि सभी ग्रंथों में जो पूरी तरह से कविता में ही लिखे गए मूलरूप से किसी न किसी कथा पर भी आधारित रहे और इन कथाओं के ही जरिए हमने धर्म न्याय नीति व दर्शन की हर गूढ समस्या का समाधान भी ढूंढा। वस्तुतः इन कथाओं ने ही आगे जाकर कहानी का रूप ग्रहण कर लिया और बाद में कहानी अपने आपमें एक स्वायत्त विधा भी बन गई। विश्व की सभी भाषाओं में अलग- अलग शिल्प व भावबोध के आधार पर कहानी कला का विकास हुआ। भारत में भी कहानी या कथा साहित्य का परिमार्जन विविध प्रादेशिक भाषाओं व बोलियों के अतिरिक्त अपभ्रंशों के माध्यम से भी हुआ लेकिन अपने अंतिम दौर में कहानी हिन्दी उर्दू व अंग्रेजी व दूसरी विदेशी भाषाओं व साहित्य के संपर्क में आने के कारण विकसित हुई। आज पूरे विश्व में हिन्दी कहानी का एक गौरवपूर्ण स्थान है। इस सबके अधिक विस्तार में नहीं जाकर हम अपनी बात यहीं से शुरू करेंगे कि कैसे प्रेमचंद प्रसाद व गुलेरी की त्रयी ने हिन्दी को उस मुकाम पर पहुंचाया जो आज हिन्दी को हासिल है ? इसका सीधा सा जवाब यही है कि भारत में आजादी की लड़ाई के आसपास और उससे कुछ पूर्व भारत में अंग्रेजी उपनिवेशवाद में अंग्रेजी व अन्य यूरोपीय व अमरीकी साहित्य व कलाओं का दबदबा बढता गया और भारत पूरी तरह मुगलिया दौर से निकलकर अंग्रेजी शिक्षा व

सभ्यता की जकड़न में आ गया। इसी दौर में अंग्रेजी साहित्य की काव्य कला व कहानी उपन्यास आदि विधाओं का हिन्दी पर पूरा असर हुआ। बावजूद आजादी की लड़ाई के भारत को विदेशी साहित्य व अखबारों से भी उपनिवेशवादी शासन के विरुद्ध नव जागरण की दिशा में आगे बढने के अवसर मिले। देश में संचार के नये साधनों मुद्रण की नयी प्रणाली व विश्वभर में फैले स्वतंत्रता आन्दोलनों से हिन्दी का साहित्य भी परिचित हुआ। बंकिम का आनंदमठ उसी दौर की ऐसी बड़ी साहित्यिक उपलब्धि है जिसने ब्रिटिश शासन के खिलाफ आजादी की चिंगारी को पुनर्जीवित किया। तिलक, गोखले, गांधी, रवीन्द्र, शरत, इकबाल व चंद्रशेखर भगत सिंह जैसे शहीदों व अनेक महापुरुषों ने इस आजादी की लड़ाई में प्राण प्रण से योगदान किया। इसका असर तत्कालीन साहित्य पर भी पड़ा। संक्षेप में, स्वतंत्रता संग्राम के अतिरिक्त देश की शिक्षा संस्कृति व कलाओं पर इसी नव जागरण काल तथा इससे पूर्व भी जबर्दस्त असर विदेशी साहित्य व लोकतंत्रीय आन्दोलनों का हुआ। यही वह दौर था जब हिन्दी में राष्ट्रवाद प्रगतिवाद छायावाद समाजवाद साम्यवाद व व्यक्ति स्वातंत्र्य की विचार धाराओं का अभ्युदय हुआ। इसी दौर में हिन्दी साहित्य को प्रेमचंद प्रसाद व गुलेरी की त्रयी मिली। गुलेरी की केवल एक कहानी उसने कहा था के द्वारा हिन्दी कहानी के शिल्प व भावभूमि के विकास में उत्साहवर्धक चेतना जगाई और उसे एक राष्टीय चरित्र प्रदान किया। यह कहानी द्वितीय महायुद्ध की पृष्ठभूमि पर लिखी गई थी किन्तु यह कहानी के नवोन्मेष की दिशा में एक मील का पत्थर साबित हुई। प्रसाद की आकाशदीप व प्रेमचंद की कफन ने आदर्शवाद व यथार्थवाद के नये द्वार हिन्दी कहानी के लिए सदा-सदा के लिए खोल दिए। भारतीय गुलामी शोषण दुख दारिद्रय राष्ट्रवाद व मानवीय चेतना व नये मनोविज्ञान से जुड़ी इन व ऐसी अनेक नव जागरण की कहानियों ने हमारी आगे की राह साफ कर दी। काफी हद तक हमें यह दिखलाई देने लगा कि अब आगे हिन्दी कहानी को किस दिशा में जाना है। यह कथा काल लगभग बीसवीं सदी के प्रारंभ का ही माना जा सकता है जो प्रगतिशील साहित्य सम्मेलन के 1936 के प्रेमचंद की अध्यक्षता तक स्पष्टरूप से दृष्टि-गोचर होने लगा था। जैनेन्द्र, इला चंद्र जोशी, अज्ञेय, अश्क, सुदर्शन आदि कहानीकारों ने इसी परंपरा को आगे बढाया जिसकी परिणिति बाद में पांचवे दशक के आसपास नयी कहानी के रूप में हुई।

हिन्दी कहानी पर विदेशी प्रभाव - 11

देश की आजादी से पूर्व व बाद में अंग्रेजी उपनिवेशवाद के कारण अंग्रेजी व दूसरी यूरोपीय भाषाओं के साहित्य व कलाओं का भी असर सीधा पड़ा जिसने कहानी को भी अछूता नहीं छोड़ा। भारत में सर्वाधिक लोकप्रिय कथाकार इंग्लैण्ड के चार्ल्स डिकेंस ने सामाजिक यथार्थवाद के गहन जीवनानुभवों से जुड़ी कहानियों और औपन्यासिक रचनाशीलता से भारतीय कहानीकारों को एक सर्वथा नयी राह दिखाई। वे चरित्र चित्रण व स्मृतियों के जादुई चितेरे थे और सामाजिक जीवन मूल्यों में वर्ग चेतना को सूक्ष्म रचनात्मक दृष्टि से उजागर करते थे। उनकी ओलिवर ट्विस्ट (1839) पिकविक पेपर्स (1836) अ टेल आफ टू सिटीज महत्वपूर्ण कथा रचनाएं थी, जो उपन्यास होते हुए भी अपनी विकास - संरचना जीवन के छोटे छोटे अनुभव खंडों से जुड़ी हुई थी। उनकी भाषा भी सरल किन्तु जिन्दगी में रचीपची और चित्रात्मक थी।

अगर हम कुछ देर के लिए भारतीय रेल को जीवन का प्रतीक मान लें तो डिकेन्स की एक कहानी 'सिग्नल मैन' के माध्यम से कहानी के उस यथार्थवादी रूप को आसानी से समझ सकते हैं, जिसकी शुरूआत इंग्लैण्ड फ्रांस या अमरीका में हुई।

'कोई जवाब दिये बगैर वह मुझे देखता रहा और मैंने भी अपनी बात दोहराई नहीं और उसे देखता रहा, तभी जमीन और हवा में एक अस्पष्ट सा कंपन हुआ, जो तत्काल तेज स्पंदन में बदल गया और फिर तेजी से सरपट भागती हुई ट्रेन वहां से

गुजरी, मैं झटके से पीछे हटा, मानो वह मुझे नीचे खींच लेगी, जब तेजी से गडगडाती हुई ट्रेन मेरे सामने से गुजरती हुई ढलान पर उतरने लगी तो मैने फिर नीचे देखा वह अपनी झण्डी लहरा रहा था।'

किसी नवागंतुग की रेल्वे प्लैटफॉर्म पर यह स्थिति और सिग्नलमैन का झण्डे के इशारे से उसे सामने का रास्ता दिखाना सूक्ष्म भावभूमि व नये यथार्थवाद की ओर इशारा करती है। यहां महत्वपूर्ण यह भी है कि सिग्नलमैन ने नव आगन्तुक को **'उसी डंडे में लिपटे झण्डे से रास्ता दिखाया'** जो वह ट्रेन के लिए सिग्नल के काम में लेता है। कहना चाहिए भारत में रेल के आगमन(1835) के साथ ही आधुनिकता की एक बयार जन-जीवन में आई। क्या इसे संयोग ही कहा जाकि कथाकार चार्ल्स डिकेंस के लेखन काल व भारत में यथार्थवाद की शुरुआत के साथ ही भारत की जीवन रेखा भारतीय रेल का उद्भव साथ साथ ही हुआ। उन्नीसवीं सदी के चौथे दशक में। इसी समय भारत के कथा सम्राट मुंशी प्रेमचंद की कफन कहानी भी सामने आई। जब भारत गरीबी हताशा और औपनिवेशिक उत्पीडन से बुरी तरह जुडा हुआ था। एक साथ विकास और शोषण। आज भी हम देश की आजादी के 76 वें तथाकथित अमृत वर्ष में भी जो महज एक पुछल्ला है हम कोटि - कोटि जनता को उसकी जहालत की जिंदगी जीने में मजबूर कर रहे हैं जो लोकतंत्र के नाम पर कलंक है। हम सभी भारत के तिरंगे पर सदा गर्व करते हैं, करते थे, और करते रहेंगे।

आजादी के तीन थके हुए अलग - थलग रंग - 12

भारत में आजादी के आन्दोलन में एक बड़ी भूमिका साहित्यिक अवदान के रूप में बंकिम चंद्र के आनंदमठ की रही हैं। इसका जिक्र हम कर चुके हैं । बंकिम ने और भी कई उपन्यास अथवा रोमांस की रचनाएं की जिसमें दुर्गेश नंदिनी भी काफी लोकप्रिय हुआ। दूसरी ओर रवीन्द्रनाथ टैगोर का रास्ता काफी अलग रहा। उन्होने साहित्य संगीत नृत्य कला व संस्कृति के पुनरुत्थान का कार्य किया। कहते हैं हिन्दी में प्रचलित उपन्यास नाम भी उनकी ही देन है और कहानी या छोटी कहानी की अवधारणा के बारे में भी उनका चिंतन उनकी लिखी कुछ पंक्तियों से साफ होता है। वे कहानी को घटना प्रधान नहीं मानते थे स्थिति व मन की एक संक्षिप्त उडान मानते थे। यह महत्वपूर्ण है कि वे कहानी में कुछ ऐसा आधा अधूरा विचार भी रखने की बात करते थे जो हमें कचोटता रहे और जिसे पूरा नहीं किया जाए। वे कहते थे कि मनुष्य की इच्छाएं कभी पूरी नहीं होती। वह भारतीय वेदांत के पूर्णता के विचार को पूरी तरह से अंगीकार नहीं करते थे। रवीन्द्र ने दो सौ के आसपास गल्प या कहानियां लिखी जिसमें काबुलीवाला, क्षुधित पाषाण जैसी कहानियों पर चित्रांकन भी हुआ और फिल्म भी बनी। रवीन्द्र के समकक्ष जयशंकर प्रसाद व प्रेमचंद ने हिन्दी का सरस्वती का अपूर्व भंडार भर दिया। यही वह समय था जब भारत में आइल पेंटिंग वाश- शैली भित्तिचित्र और यथार्थवादी कला बडे साइज के आइल के व्यक्तिमात्रों प्रकृति व अजंता ऐलौरा की तरफ समाज का ध्यान गया। यामिनी राय, राजा रवि वर्मा और अमृता शेरगिल जैसे दिग्गज सामने आए। पारसी रंगमंच का विकास व भारतीय सिनेमा की नयी धारा सामने आई। मूक फिल्मों से बोलती और रंग बिरंगी फिल्में भी बनने लगी। अखबारों व साहित्यिक पत्र पत्रिकाओं ने नवजागरण की स्वदेशी लहर और नयी राष्ट्रीय चेतना का नवोन्मेष हुआ। हिन्दू पारसी मुस्लिम संस्कारों व अंग्रेजी सभ्यता के इस सम्मिश्रण से देश में एक ऐसी सामासिक संस्कृति का समन्वय हुआ जिसमें विश्व मानवता अपने बिल्कुल नये रूप में उजागर हुई। रवीन्द्र नाथ को उनको उनकी काव्यकृति गीतांजलि के लिए नोबल पुरस्कार भी मिला। बंकिम की पाथेर पंचाली भी सामने आई। शरत की देवदास, प्रेमचंद का गोदान व गबन व उनके मौलिक कथा लेखन सृजनात्मक साहित्य में पूरे देश में स्वायत्त विधा के रूप में नवोन्मेष को जन्म दिया । इसी काल के आसपास रवीन्द्रनाथ ने गोरा जैसा उपन्यास क्षुधा पाषाण नौका डूबी, डाकघर और काबुलीवाला विश्व प्रसिद्ध कहानियां भी लिखी । रवीन्द्र का लेखन ,कला व संगीत 1938 तक बड़ी तेजी से उभरा

बाद में वे रुग्ण हो गये। इसके बावजूद ब्रिटिश उपनिवेशवाद की शिक्षा जे. जे. स्कूल आफ आर्ट्स के समानांतर शांति निकेतन एक आन्दोलन के रूप में भारत का एक बडा शिक्षा संस्कृति व कलाओं का विश्वविद्यालय बन गया। लेकिन राष्ट्रवाद को लेकर जो क्रांतिकारी विचार बंकिम के थे वैसे महात्मा गांधी और रवीन्द्रनाथ टैगोर के भी नहीं थे- जो उनके जापान और अमरीका की लंबी यात्रा के बाद एक नये रूप में उपजा उसमें नव जागरण और कुटीर उद्योग तथा स्वदेशी का आग्रह तो था लेकिन उसमें भी उनकी गांधी से पूरी तरह की सहमति नहीं थी। इधर हिन्दी में प्रेमचंद पर भी आखरी दिनों में गांधी का विस्मयकारी असर दिखलाई देने लगा था हालांकि वे रूसी क्रांति व साहित्य से भी सीधे तौर से प्रभावित थे। यही गांधीवादी प्रारूप केवल एक आवरण या झोले की तरह ही पूरे देश में विकसित हुआ जिसे अमरीकी लोकतंत्र के आन्दोलन व रूस की क्रांति ने आधी - अधूरी प्रेरणा दी। इस अर्थ में भारत में आजादी की लड़ाई गर्म और नर्म दल के पारस्परिक विरोधों व विभाजित दर्शन व्यक्ति स्वातंत्र्य व सामाजिक प्रतिबद्धता की दो धाराओं के आपसी विवादों, संघर्ष व समन्वय से लड़ी गयी। जिसकी परिणिति देश के विभाजन और करोडों के खून खराबे सांप्रदायिक हिंसा और अंत में बापू की हत्या से हुई। देश 15 अगस्त 1947 को मध्यरात्रि में आजाद हो गया। देश का अपना संविधान बन गया। देश की विश्व की सबसे पुरातन संस्कृति पूरी वसुधा को अपना कुटुम्ब मानने वाली स्वर्ग से भी सुन्दर शस्य श्यामला भारत माता ने हजारों वर्षों के अंधकार के बाद फिर एक बार अपने आंगन में आजादी का उजाला उतरते देखा।

हिन्दी साहित्य कला व संस्कृति ने भी इसी सबके समानांतर आजाद भारत में अपनी तरह की रंग-बिरंगी ऊंची नीची सामाजिक सांस्कृतिक व आर्थिक विकास की छवियां देखी और सपने संजोए। हमारे लोकतंत्र ने भी आज तक आजादी के तीन थके हुए रंगों की यात्रा के साथ गिरते पडते 75 वर्ष पूरे कर लिए।

नयी कहानी से नयी कहानी तक - 13

हिन्दी कहानी आज भी अपने संक्रमणकाल के महादौर से गुजर रही है। हमारे कथाकारों की हालत आज भी अंधों के हाथी वाली बौद्ध कहानी के पात्रों जैसी ही है। कोई हाथी के बडे- बडे कान छूकर हाथी को छाज जैसा बता रहा है , कोई सूंड, पैर , पेट छूकर हाथी को उन उन अंगों जैसा ही बताकर खुश है कि वह समझ गया कि हाथी का आकार कैसा है। गांव में पहलीबार हाथी आया है और अंधों की भी अपनी दुनिया भी तो होती है इसलिए कथा के लोकतंत्र में हमें अंधों की रायशुमारी का भी आदर तो जरूर करना चाहिए लेकिन उसे संपूर्ण सत्य नहीं समझ लेना चाहिए। विश्व की कोई भी किताब या धर्म संपूर्ण सत्य की बात नहीं करती। कहीं न कहीं कुछ ऐसा अज्ञात है जो मानव व उसकी कल्पना से परे है। हिन्दी की कहानी के अस्तित्व व उसके दर्शन को लेकर भी हम इसी आधे अधूरे निर्णय पर पहुंच रहे हैं कि कहानी का यथार्थ चाहे वृत्ताकार हो या रेखीय अथवा और कुछ भी वह अपूर्ण है। नयी कहानी को हम केवल इसलिए अपना वैचारिक पैण्डुलम मानकर किसी सांकेतिक सूत्र को थाम सकते हैं जिससे कि हम कहानी को उसकी दशा दिशा संभावना गति व प्रगति व क्षणिक शून्य या गतिहीनता या किसी काल्पनिक समाधि तक भी ले जाकर जांच - परख सकें। साकार - निराकार , कल्पना स्वप्न व निद्रा , यथार्थ व अतियतार्थ , पौराणिक मिथकीय व भविष्य की जादुई या अब्सर्ड कहानियों के संसाधनों के माध्यम से विश्व कथा के आज तक के विकास में कथासूत्रों का अन्वेषण करने की हमारी कोशिश से ही हम हिन्दी कहानी की किसी अवधारणा तक पहुंचने का प्रयास कर सकते हैं।

इसी परिप्रेक्ष्य में फिलहाल हम अपनी खोजबीन - **'नयी कहानी से नयी कहानी तक'** ही रखने को विवश हैं । इसी में आज की वैश्विक कहानी व उसका देश व विदेश काल समाहित हो जाता है। नयी कहानी का दौर हाथी का पांव मानकर हम आगे बढ रहे हैं क्योंकि इस पांव में विश्व कथा के सभी पांव आ जाते हैं।

नयी कहानी की स्थितियां और परिस्थितियां अंधे के हाथ बटेर लगने जैसी नहीं है और न ही अंधों के हाथी वाली लेकिन यह एक ऐसी टेढी खीर जरूर है जिसकी पहेली को सुलझाना अब नितांत जरूरी हो गया है। हिन्दी की नयी कहानी गरीब की जोरू और सबकी भाभी जरूर है। जिससे हम सब आज भी चुहल कर सकते हैं। चाहे इसकी त्रयी के मोराक बंधु और उनके बाद आज तक की पीढी के कथाकारों की सैकडों कहानियां हमारे बीच से गुजर चुकी हैं। एक बडा सच यही है कि हिन्दी के शीर्ष कथा आलोचकों ने भी आज तक हिन्दी कहानी को मुकम्मिल तौर पर जानने की जुर्रत ही नहीं समझी।

नयी कहानी का दार्शनिक दोस्त व गाइड- सबसे कमजोर कड़ी : राजेन्द्र यादव -14

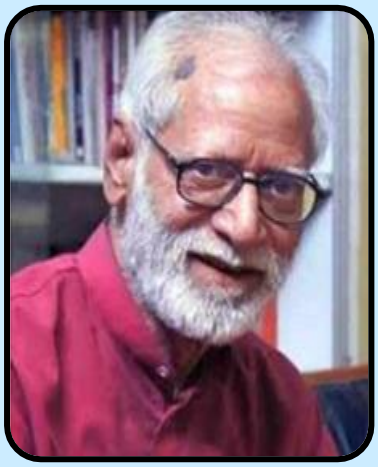

वैसे यह कम गर्व की बात नहीं कि जिस कथा आन्दोलन ने हिन्दी कहानी को वैश्विक पहचान दी उसे हम सभी नयी कहानी के रूप में ही जानते हैं, इस आन्दोलन के तीन कथा नायक - मोहन राकेश राजेन्द्र यादव व कमलेश्वर को उनकी कहानियों व कहानी से जुड़े सामयिक व सार्थक वक्तव्यों के कारण आज भी जाना जा सकता है। नयी कहानी के आदि और अंत की फिलहाल हम यहां घोषणा करके किसी निष्कर्ष पर पहुंचने की जल्दी नहीं करना चाहते हैं लेकिन इसकी अतीत कथा और भविष्योन्मुखता को लेकर कुछ बातें साफ साफ करना चाहते हैं। इसमें सबसे पहली बात तो यही है कि नयी कहानी आन्दोलन के एक नायक जिन्हे इसका एक प्रमुख प्रवक्ता भी माना जाता है वह हैं राजेन्द्र यादव जो इसके कथायात्रा के दार्शनिक, दोस्त व गाइड भी कहे जाते हैं- नयी कहानी की सबसे कमजोर कड़ी माने जाने चाहिए। अब यह समय तय करेगा कि मोहन, राकेश और कमलेश्वर में कौन किसके आगे पीछे या समानांतर ही है ? फिलहाल यह खोज का विषय जरूर है।

नयी कहानी की इस त्रयी के साथ ही एक नाम निर्मल वर्मा और कृष्ण बलदेव वैद के साथ भीष्म साहनी, ऊषा प्रियंवदा मन्नू भंडारी का तो आता ही है। लेकिन फिलहाल हम सच्चिदानंद वात्स्यायन अज्ञेय की 'रोज' या 'गेंग्रीन' का उल्लेख नहीं करें तो यह नयी कहानी की संवेदना और उससे जुड़े आधुनिकता बोध का वृत्त पूरा नहीं होता। इनमें यशपाल जैन, सुदर्शन आदि की कहानियां अपने परंपरागत स्वरूप व शैली व उनकी भावभूमि के कारण नयी कहानियां में चाहे शामिल नहीं की जा सकती हैं लेकिन अमरकांत, फणीश्वरनाथ रेणु, राजकमल चौधरी, हरिशंकर परसाई, जयशंकर प्रसाद, रामकुमार, मार्कण्डेय, शैलेश मटियानी, बटरोही, कामतानाथ, शेखर जोशी, कृष्णा सोबती, गिरिराज किशोर, शानी, रामदरश मिश्र, ज्ञानरंजन, काशीनाथ सिंह, श्रीकांत वर्मा, मुक्तिबोध, रमेश बक्षी, शेखर जोशी, शिवप्रसाद सिंह, धर्मवीर भारती, महेन्द्र भल्ला, महीप सिंह, दूधनाथ सिंह, रवीन्द्र कालिया, मनोहर श्याम जोशी, प्रयाग शुक्ल, रवीन्द्र कालिया, मनहर चौहान, गंगाप्रसाद विमल, ममता कालिया और मन्नू भंडारी आदि को उनके स्वतंत्र व विविधतापूर्ण लेखन लेकिन नयी भावभूमि व भाषा व शैली की नवीनता की वजह से नयी कहानी आन्दोलन से ही संबद्ध किया जा सकता है। बावजूद इसके कि ये अपनी अपनी ढपली और अलग अलग राग से अपनी अपनी कहानियों भिन्न भिन्न मंचों या गुटों में बैठकर कहते सुनते रहे । इस दौर में 'सचेतन कहानी' 'समानांतर कहानी' 'अकहानी' या 'साठोत्तरी कहानी' जैसे आन्दोलन छोटी पत्रिकाओं के जरिए सामने आए लेकिन किसी न किसी वजह से कहानी का नया बदला हुआ स्वर मुखर होता रहा। हम इस सबको बड़ी ही उदारता के साथ 'नयी कहानी' का ही विस्तार कहना चाहेंगे। इस सबके बावजूद हम आगे चल कर कुछ ऐसे कहानीकारों व कहानियों का जिक्र करना चाहेंगे जिनकी चाहे चर्चा कहीं नहीं हुई लेकिन सीमित

कथा वृत्तांत में उनकी कहानियों की विशिष्टता को स्वीकार किया गया। ऐसे बहुत से लोग आज भी सक्रिय हैं । हम विमर्शवादी दुराग्रही से बाहर आ कर सुधा अरोड़ा, मृदुला गर्ग, ममता कालिया, जैसी कुछ जानी-मानी अन्य कहानीकारों की कहानियों का भी इसी संदर्भ में आगे जा कर उल्लेख करेंगे जिनकी रचनात्मक पहल या वैचारिक सृजनशीलता का जिक्र किए बिना हम हिन्दी कहानी की आधी दुनिया और उसकी प्रभावी भूमिका को आजादी के बाद की कहानी के रचना संसार को परिभाषित कर सकेंगे - इसमें हमें संदेह ही होगा। आज की हिन्दी कहानी को परिधियों और चेकपोस्ट व तमाम अकादमिक उलझनों से अलग होकर व्यापक दायरे में ही समझना होगा तभी नयी कहानी की सार्थक पहचान कर सकेंगे!

यह अवधारणा इस लेखक के सामने साफ है कि कहानी अपने पुरातन स्वरूप या ढांचे से तरह तरह से अलग अलग कालखण्ड में ही विभाजित हुई है। इसकी चर्चा हम कर चुके हैं कि कथा या गल्प या आख्यायिका आदि आदि नामों से चलकर कहानी कहानी कैसे बनी और बाद में इसे नयी कहानी भी क्यों बनना पड़ा। यह सब सहज और स्वाभाविक रूप से हुआ और इसमें जोर जबर्दस्ती की कोई बडी गुंजाइश हमें नजर नहीं आती। लेकिन हम फिलहाल यहीं तक अपनी बात कहने या सोचने के हकदार हैं कि कहानी फिलहाल नयी कहानी तो बन गयी लेकिन उसके बाद क्या कैसे और क्यों कब कब हुआ उन उलझनों में पड़ने के बजाय हम हम नयी कहानी की वस्तुस्थिति इसके विकास व प्रतिमानों पर ही सुनियोजित तरीके से विमर्श करने के इच्छुक होंगे ताकि सीमित मर्यादा में हम नयी कहानी की ही रूपरेखा को उसके तमाम मूल्यों व वैचारिक आग्रहों के साथ समझ सकें। नयी कहानी के स्वरूप और उसके विकास पर नयी कहानी के ही नयी कहानीकारों व सुधी आलोचकों ने पर्याप्त चर्चा की है। उसे दोहराया जाए यह कतई जरूरी नहीं है लेकिन जो भी अब तक हमारे सामने आया है उसका नीर - क्षीर विवेक व पुनरावलोकन भी जरूरी है।

मित्रो । हम पूर्व में नयी कहानी की त्रयी में से कथाकार आलोचक व संपादक राजेन्द्र यादव की उपरोक्त प्रसंग में चर्चा कर चुके हैं। उसी संदर्भ में हम उनकी कुछ अवधारणीय स्थापनाओं को लेकर ही यहां विमर्श कर रहे हैं। यादव अपने संचयन एक दुनिया : समानांतर में संकलित 23 कहानियों को स्वतंत्रता के बाद की सर्वश्रेष्ठ कहानियां मानते हुए इसी संकलन में यह भी दावा करते हैं कि ' नई परिस्थितियों में किसी प्रकार कथाकार का जीवन बोध बदलता है, उसके राग-बोध में महत्वपूर्ण संस्कार घटित हुए हैं - यही इस कथा संकलन की प्रेरणा है। जीवन के माध्यम से कहानी के माध्यम से जीवन को खोजने - समझने की दृष्टि भी इसे कह सकते हैं। '

इसके तत्काल बाद इस महत्वपूर्ण संचयन के संपादक राजेन्द्र यादव जाने किस मानसिकता में यह कहकर अपना पल्ला झाड़ अलग होना चाहते हैं कि कला, कला के लिए हो या जीवन के लिए ; इस उलझन में वे पड़े बिना वे यह मानते हैं कि कला का मूल्यांकन अपने मानदण्डों में हो ही नहीं सकता ।

यादव को शायद सबसे पहले यही समझना जरूरी था कि कला, कला के लिए है या जीवन के लिए इस महत्वपूर्ण सवाल को किसी भी सूरत में टालना जीवन व कला दोनों को ही नकारना होगा। अगर यह हो गया तो कहानी पर भी हम संवाद नहीं कर सकेंगे अगर हम कहानी को एक कला मानते है! अगर हम कहानी को अन्य ललित कलाओं की तरह कला का दर्जा नहीं देते तो यादव अपनी प्रारंभिक प्रस्तावना में ही कला को इतना महत्व क्यों दे रहे हैं। सामान्य तौर पर हम कहानी को चित्रकला संगीत नृत्य व कुछ हद तक नाट्य को जिस रूप में कला मानते हैं उसी रूप में कथा लेखन को कला नहीं मानते। कथा परंपरा में बातपोशी की एक विधा कला के अन्तर्गत आती है। ये सभी परफार्मिंग है इसलिए कलाएं है। कहानी अब कहीं जाकर नाटक की तरह परफार्मिंग कला के रूप में धीमी गति से सामने आ रही है।

ऐसी सारी उलझनों में यादव यह भी कहते हैं कि ' कला के मानदंड कहीं न कहीं जीवन से भी जुड़े होते हैं।' आश्चर्य है कला को यादव जीवन ' कहीं न कहीं ' का ही रिश्ता मानते हैं। कहने का तो यह अर्थ हो गया कि कहानी भी जीवन से कहीं न कहीं जुडी है। पूरी तरह से नहीं जुडी है। इसीलिए वे कहानी को समानांतर रखकर देखते हैं। इधर जाने किस तरह का एक स्कूली विभाजन करते हुए यादव कहानियों की बाडेबंदी 1- गुजरते साये, 2 प्रणय और परिणय, 3 टूटे हुए पुरुष, 4 बिखरी हुई नारी जैसे विचित्र संदर्भों में करते हैं। इसका आजतक किसी समालोचक ने गंभीरता से कोई नोटिस नहीं लिया। आश्चर्य तो यह है कि इस ' प्रोडक्ट्स रेंज में यादव ने समझौता परस्त संपादक की तरह अपने कथा कल्पवृक्ष की छाया में लगभग सभी महत्वपूर्ण कथाकारों को ले लिया। कोई इक्का दुक्का बच गया हो तो कोई बडा फर्क नहीं पड़ता। लेकिन यादव इस समानांतर दुनिया में एक के बाद दूसरा ऐसा कुतर्क का पत्ता फेंकते हैं जिसकी वजह से बावन पत्तों का ताश महल बिखरा बिखरा और नियोजित रूप से अनियोजित लगता है।

मिथकीय अवधारणा की बैसाखी का सहारा लेकर यादव बिल्कुल ऐसी काल्पनिक उडान भरने का दुस्साहस भी करते है , जिसका संदर्भ हम उनके द्वारा प्रयुक्त ब्रह्मा व विश्वामित्र दर्शन में कर चुके है। अब आप ही सोचिए यादव को ये दोनों ही - कुरूप और अस्वीकार्य भी लगते हैं। भाईजान जब ऐसा ही है तो आप उनकी बात किसलिए कर रहे हैं। केवल मिथक की बघार लगाने के लिए ? और कोई प्रयोजन? भारतीय संदर्भों को बिना वजह गरियाने के लिए अथवा अपनी कोई वर्ण कुंठा की भड़ास निकालकर किसी तीसरी दुनिया की बादशाहत की लालसा के लिए ? कुछ तो है जिसका दाव यहां राजेन्द्र यादव लगा रहे हैं। चलो वह भी लगे हाथ देख लिया जाए। वैसे समय बर्बाद किया जाए तो इसके बीसियों कारण नजर आते हैं लेकिन हम अपनी क्यों कहें उनकी ही सुनाएं तो दूर की कौड़ी लाने की जरूरत नहीं होगी। वे कहते हैं कि - स्वतंत्रता के बाद का कथाकार का एक ऐसा संसार है जिससे उसे आंतरिक घृणा और बेहद नफरत है । (घृणा और नफरत क्या एक नहीं है ?) फिर जरा यह भी समझाया जाए कि आंतरिक घृणा क्या घृणा से अलग होती है ? नहीं तो आलोचना में यह फिजूल खर्च किसलिए। मान लिया सब कुछ सही है तो क्या देश के सारे कथाकार चारों ओर फैली इस घृणा को आंतरिक रूप से महसूस कर रहे हैं। क्या हिन्दुस्तान की स्वातंत्र्योत्तर इन सभी संकलित कहानियों में नफरत के सिवा कुछ भी नहीं लिखा जा रहा है ? आखिर यादव का यह विषय वमन क्यों ? कोई सियासती दाव तो नहीं जो साहित्य या संस्कृति का कोई नया दरवाजा खटखटा रहा हो। यहां हमें यह बात आती है। अब आगे तमाशा देखिए यादव जिसे ' निर्माण' कह रहे हैं जो कथाकार ने स्वयं किया है उसमें भी पराजय और हताशा है। वे कहते हैं कि इस सबके लिए भी कथाकार को ही जिम्मेदार ठहराया जा रहा है। कौन ऐसा कर रहा है वे यह नहीं बतलाते।

यह भी सही है यादव जब इस सबकी पृष्ठ भूमि की चर्चा करते हैं तो वे सब कुछ तथ्यपरक और जिम्मेदारी के साथ भी करते हैं। युगों की पराधीनता , देश विभाजन विस्थापितों की दुर्दशा नरसंहार जैसे भूकम्प । और उससे जुड़ा ऐतिहासिक संघर्ष व सामाजिक मूल्यहीनता का दर्द। इस अभिशाप को ढोता एक व्यक्ति कलाकार। इसमें यादव हमारी प्रजातांत्रिक समाजवादी व्यवस्था के प्रयोगों का जिक्र भी करते हैं।वे यहीं पर स्वार्थ सिद्धि भ्रष्टाचार रिश्वतखोरी झूठ आडम्बर और इस सबमें यादव कथाकार को अभिशप्त व जिम्मेदार भी ठहराते हैं। वह क्यों और किस तर्क की बुनियाद पर वे नहीं बतलाते। यानि जो भी आजादी के बाद बुरा और अमानवीय हुआ उसका ठीकरा भी बेचारे कहानीकार के माथे पर। वे कहते हैं- ' क्लीव व बौनों की यह दुनिया, यह क्षुद्र और घिनौना संसार जितना अस्वीकार्य है, उतना ही सच भी है।'

कथा तत्व या तरंग पर विमर्श के बहाने - 15

विग्यान की परिभाषा में पदार्थ की तीन अवस्थाएं होती हैं। तत्व, यौगिक व मिश्रण। किसी भी रचना में यथार्थ कल्पना फंतासी या स्वप्न जैसी अवस्थाएं होती हैं लेकिन कथा तत्व के विस्तार में यौगिक या मिश्रण का भी बुनियादी आधार रहता है। कहानी एक या एक से अधिक पात्र को लेकर लिखी जाती है। उसका प्रारंभ कैसा भी हो अंत तो विशिष्ट होता

ही है। यही समापन कहानी का मूल दर्शन या सारांश होता है। जिसे कोई अगर क्लाइमैक्स या चरम भी कहे तो बुरा नहीं है। लेकिन मेरी अभी भी यह मान्यता है कि कहानी में द्वंव्द्व भी होना चाहिए जहां दो विपरीत स्थितियों या स्वभावों के

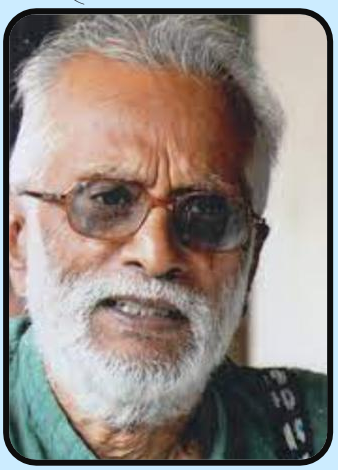

बीच संघर्ष है। अच्छे का बुरा या कम या अधिक बुरा होना या बिल्कुल बदल जाना भी कहानी में होता है। पुरानी कहानियों में ओ हेनरी मोपांसा, बाल्जाक और हिन्दी में जैनेन्द्र सुदर्शन जैसे कथाकारों में हृदय परिवर्तन कहानी के एक विशिष्ट दर्शन नव यथार्थ या आदर्श के रूप में उभरता है लेकिन बाद के समय की रचनाओं में यह बदलाव 180 अंश का नहीं होता है। अग्येय की रोज या गेंग्रीन इसका एक अच्छा उदाहरण है। इसमें संक्रमण या बदलाव कथा के साथ साथ चलता है। यही नयी या आज की कहानी की ताकत है। काफ्का इसके सबसे बडे मोडल हैं। वे शुरू से अंत तक कहानी को एकतान रखते हुए उसके हर क्षण में द्वैत या संघर्ष को बल देते हैं । काफ्का अपने शिल्प या दर्शन में न ऊपर चढते हैं न नीचे उतरते हैं। वे अनेक अतिक्रमण करते हुए भी लगातार धरातल पर ही रहकर जीवन के गूढ सत्य को सहजता से कह देते हैं। उनका एक आदर्श पेण्डुलम हो सकता है जो बिल्कुल नहीं है। वे विचलन व एक्सेंट्रिसिटी के महान कलाकार हैं। हमारे यहां बातपोशी या उस परंपरा में संवाद की यह सहज अदायगी मिलती है । हम आगे इन कुछ मूल रचनात्मक बिंदुओं पर अपनी बात कहेंगे। एक बात और साफ कहूं मेरी अवधारणा में इक्कीस बीस का फर्क होना सहज है। यह कोई सैद्धांतिक बहस नहीं। जिन खोजा तिन पाइयां की एक प्रक्रिया ही है। इसमें नाटक व कलाओं की अन्य विधाओं को भी शामिल किया जाना चाहिए ताकि हम इस बातचीत को और परिमार्जित कर सकें।

दोस्तो अंत में दो टूक बात – 16

यह मंच राजनैतिक नहीं है लेकिन राजनीति से अप्रभावित हो ऐसा भी नहीं कहा जा सकता । लोकतंत्र में जन भागीदारी जरूरी होती है। इस संदर्भ में कहा जा सकता है कि आज भारत में जो लोकतंत्र की व्यवस्था है उसके मर्यादा की रक्षा करना हर नागरिक का कर्तव्य है। हमें देश के भूत भविष्य और वर्तमान पर सदैव सकारात्मक दृष्टिकोण रखते हुए आजादी के इस अभूतपूर्व अमृतकाल का भी खुले हृदय से स्वागत करना चाहिए। आजादी हमारा जन्मसिद्ध अधिकार था अधिकार है और अधिकार रहेगा और **“असतो मा सद्गमये तमसो मा ज्योतिर्गमये मृत्योर्मा अमृत गमये”** के भारतीय औपनिषदिक मंत्रणा पर आजीवन विश्वास करना होगा।

हमारा साहित्य संस्कृति और कला का आधार भी **“सत्यम शिवम् सुन्दरम”** है और जहां धर्म है वहीं विजय है यह अवधारणा भी हमारे जन जन की आज भी आस्था और पहचान बनी हुई है। आज विश्वस्तर पर हमारा देश भारत जिन ऊंचाइयों को छू रहा है वह अकल्पनीय है। आत्म सम्मान, विकास और विश्वास की नयी नयी मंजिलें छूकर देश ने अपना मान सम्मान बढाया है। कृषि उत्पादन सुरक्षा आर्थिक विकास और विग्यान व तकनीक के क्षेत्र में अविश्वसनीय उपलब्धियां हासिल की हैं किन्तु दुर्भाग्य से इसी के समानांतर राजनीति व धर्म में सोशल मीडिया में खण्ड खण्ड पाखंड के हमारे नंगे प्रदर्शन का घिनौना चेहरा हिंसा और सांप्रदायिकत का जहरीला उन्माद भी हमारी नसों में तेजी से बह रहा है जिसे अनदेखा करके राष्ट्रीय अस्मिता को ताक पर रखा जा रहा है। कुछ विशेष वर्ग की सियासत के कारण।

आज इन दो विपरीत ध्रुवों के बीच ही हमें अपने सृजन को जीवित रखना है। विष और अमृत के बीच एक विश्वव्यापी रचना के आलोक को जगाना है। अपना दीप भी स्वयं को बनाना है। वात्स्यायन अग्येय ने कहा है - और यह भी कि - **'यह दीप अकेला स्नेह भरा । इठलाता जगमगाता।** इसको भी पंक्ति को दे दो। कवि रघुवीर सहाय ने कहा है - **घुटन को समझो अपनी । मत घुटन को समझो अपनी !**

बात तो समझ में आनी ही चाहिए लेकिन जब यह घुटन सार्वजनिक हो जाए। जडें जमाने लगे और हर आम और खास की मजबूरी बन जाए तो ? समस्या आज यही है। समूचा देश आजादी के बावजूद आज इसी घुटन का शिकार हो चुका है। सारी राजनीति उसके पीछे हाथ धोकर पड़ गयी है।

आजादी के बाद विभाजन की त्रासदी, क्षेत्रवाद, जातिवाद, भ्रष्टाचार, मंहगाई, भाई भतीजा- परिवारवाद के केंसर ने हमारी समूची आजादी को कलुषित और कलंकित कर दिया है। आज सियासत में हिंसा और आपाधापी की घुन लग चुकी है। अव्यवस्था ही इस देश की व्यवस्था बन चुकी है और अराजकता आज का निर्मम व निर्लज्ज यथार्थ। जाएं तो जाएं कहां। बस सोचने का कभी मौका मिलता है तो उसके लिए पूरे साल में बचा रहता है केवल एक दिन। पंद्रह अगस्त। क्या यह समारा कड़वा सच नहीं है? क्या हम जन्म जन्मान्तर के विषपायी हैं? कब तक करते रहेंगे विषपान हम? आखिर कभी तो आएगा अमृत काल आजादी का! लेकिन स्थिति और कडवा सच सचमुच यही प्रश्न है।जब आज हम सभी की सांस दुनिया भर की प्रगति और समृद्धि के बावजूद जीवन के जैसे अनिश्चितकालीन ट्रैफिक जाम के बीच अवरुद्ध होने लगी है। और इधर- उधर निकलने की कोई सूरत नहीं बचे सिवाय ईश्वर की प्रार्थना के!

वैसी विकट स्थिति आज देश में आम आदमी और सामाजिक सांस्कृतिक व आर्थिक रूप से पिछड़े करोडों लोगों की आ चुकी है। ये दुर्भाग्यपूर्ण हालात देश की बहुसंख्यक अल्प संख्यक सभी के हो चुके हैं। केवल मुठ्ठीभर गिने चुने भ्रष्टाचारी हिंसा लूट - खसोट में लिप्त लोग आज देश की 90 प्रतिशत खुशहाली पर अपने नुकीले पंजे जमाकर गिद्ध दृष्टि से सिंहसनारूढ हैं।

इसी दुरावस्था से निकलने का रास्ता अब इस लगभग जय हिंद देश के पास सिवाय भ्रमित क्रांतियों और विकास के ढोंग व नारों के अलावा शेष नहीं बच रह गया है। लोकतंत्र अब केवल संख्या बल व शक्ति परीक्षण का व्याभिचार होकर रह गया है जहां आपराधिक वृत्ति के लोग निरंकुश शासन कर रहे हैं। तथाकथित क्रांतियां भी अब एक नूरानी कुश्ती का भांति व छल का खेल मात्र हो गया है।

इसका केवल हल है एक ना समझ में आने वाली निर्लज्ज चुप्पी (?) या लोकतंत्र की निस्तेज भागीदारी और चुनाव व अंतपंत में ढाक के तीन पात। जनतंत्रीय गुलामी अर्थात आजादी के तीन थके - थके रंग **(जन गण मन)** जिसे आज भी एक पहिया (संविधान) ढो रहा है

मित्रों तेलंगाना की प्रतिनिधि कहानियों के एक संचयन अस्तित्व में शामिल कुछ प्रतिनिधि कहानियां के संदर्भ में मैं अपनी बात स्पष्ट करना चाहता हूं और यह भी कहना चाहता हूं कि आधुनिक समसामयिक कथा साहित्य में तेलंगाना साहित्य अकैडमी का योगदान अपने आप में अभूतपूर्व है इनमें से कुछ विशेष कहानियों और लेखों का चयन हमने अपने परिवेश पति अपनी प्रवेश पत्रिका में किया है और उसके आधार पर हमने यह प्रयास किया है कि हिंदी की शमशान की कथा परंपरा और तेलुगु की कथा परंपरा को हम भारतीय अंतर्राष्ट्रीय देश में किस तरह से समझ सकते हैं इस संदर्भ में विशेष रूप से हमने तेलुगु कहानी नंदनी सिद्धारेड्डी एमडी की कहानियों का चयन किया है जो आज के आधुनिक कथा सीधा प्रभाव से प्रभावित है और हिंदी की कहानी से भी उनका साथ जुड़ाव महसूस होता है

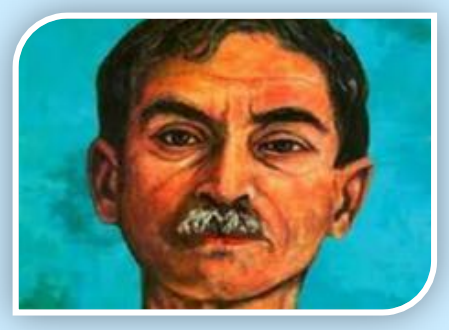

इस संदर्भ में चिरंजीवी के पास कहां मिलती है और इसमें मैं कहना चाहता हूं कि तेलुगू कथा अपने आप में एक मिसाल है और इसमें तत्कालीन ग्रामीण परिवेश को भी अद्भुत तरीके से चित्रित किया गया है और इस कहानी के साथ

में यदि हम इसका सीधा संबंध हिंदी कहानी की परंपरा से जुड़े तो **मुंशी प्रेमचंद** की कहानी कफन कि हमें याद आती है और यह कहानी भी जो चित्रनैन कहानी है यह भी एक अंतरराष्ट्रीय की भाषा संरचना और शिल्प के स्तर पर एक बहुत ही मिसाल एक बड़ी कहानी कही जा सकती है जो सामाजिक यथार्थ को उसकी गहराई को और संवेदना को तथा सामाजिक जो विभिन्न विभिन्न स्तर स्तर है समाज में जातियां हैं और जो सामाजिक संघर्ष है उसको स्थित करती है इसमें इस कथा में बालम्मा की मौत और उसके तीन पुत्रों का जो कि निम्न वर्ग से आते हैं उनके संघर्ष की यह अनोखी कथा है जिसमें मां के शव को उठाने के लिए और उसकी अर्थी तक की व्यवस्था के लिए किन-किन महापुरुषों से लेखक कथाकार को गुजरना पड़ा है और कहानी के मन को छूने की कोशिश की गई है जो एक बहुत बड़े सामाजिक और आर्थिक सामाजिक और की भूमिका भी एक कारण है यह परिवेशदेश के 1944 और उसके आसपास के राष्ट्रीय आंदोलन से भी जुड़ा हुआ है और आजादी में कांग्रेस की भूमिका और उसके आदर्शवादी रुझानों को लेकर के जन जागरण को लेकर के इस कहानी में बहुत सारी सामाजिक समस्याओं को और कुरीतियों को और समय के संघर्ष को चित्रित किया गया है राजू की नक्सलबादी संग्रह से जुड़ी हुई है और जो एक क्रांतिकारी जीवन दर्शन के समानांतर व्यवस्था पुलिस के दमन व क्रियाकलापों का मानवी संवेगों और जीवन के सूर्य इतिहास की राजनीतिक चेतना है वह अपने आप में एक अद्भुत उसकी प्रस्तुति हुई है 1985 में प्रकाशित संग्रह में चिरंजीवी नाम से एक कहानी छपी थी जो अध्यक्ष डा. राजू की एक पड़ी थी कहानी है और सामाजिक चेतना की क्रांतिकारी भूमिका को सामने लाती है राम मूर्ति रामबाबू व डीएसपी रेड्डी के माध्यम से तत्कालीन नक्सलवादी आंदोलन के भूमि पर लिखी गई है जीवन संरचना हमें तत्कालीन सामाजिक राजनीतिक व्यवस्था के वाहन को और संघर्षों को सामने रखती है और उसके साथ-साथ चित्रण में अपने आप में मानवी संवेदना के भी चेहरे को भरकर के सामने लाती है अपनी तरीकों से निष्कर्ष व क्रांति के उद्देश्यों संदेशों से जुड़ी एक चक्रव्यूह में फंसी है मानवी सभ्यता की एक मौलिक कथा है जो हमें नक्सलवादी आंदोलन से सीधे तरीके से जोड़ती है इसमें समाचार पुस्तकों में पत्रों में सामाजिक जो खबरें हैं और जो वास्तविकता है उनके विरोधाभासों को भी उजागर किया गया है जिसमें 14 साल के एक लड़की की मौत भी होती है और एक पुलिस अफसर की भी मृत्यु होती है किंतु समाचार पत्रों में यह खबर बिल्कुल अलग तरीके छापी जाती है जिससे साफ मालूम पड़ता है कि सामाजिक यथार्थ राजनीतिक व्यवस्था और सामाजिक जो मूल्य है उसमें किस प्रकार की विरोधाभास की प्रवृत्तियां चल रहे हैं तो इस तरह से हम देख रहे हैं कि तेलुगू कथा साहित्य हिंदी के समसामयिक कथा लेखन से किस तरह से जुड़ा हुआ है और किस तरह से समानांतर रूप में हिंदी कथा साहित्य की समसामयिक उपलब्धियां तेलुगू और वहां के सामाजिक सांस्कृतिक जीवन मूल्यों से जुड़े कथाकारों की कथा रचनाओं से हमें यह बात सामने आती है हमारे सामने आती है कि दोनों संसार समानांतर रूप से चल रहे हैं और कहानी के कहने की तरीका तो तरीके फिल्म और भाषा के स्तर पर कहीं किसी प्रकार का भी हमें कुछ नहीं नजर नहीं आती बल्कि पूरी तरह से कलात्मक तेवर भाषा संवेदना के एक व्यवस्थित सुंदर चित्रण के साथ में कथा रचना ऑन को की अभिव्यक्ति की गई है जो भारतीय संदर्भ में सामाजिक यथार्थ मानव मूल्य व बदलते हुए समाज के चित्रण के साथ में हमें भारतीय कथा साहित्य के बदलते हुए चरित्र और नए आगरा से जोड़ती है।

उल्लेखनीय है कि तेलंगाना साहित्य अकादमी के कहां कहानी संचयन अस्तित्व की इन कहानियों का अनुवाद विशेष रूप से डॉ. टी मोहन सिंह, डॉ. सुमन लता, शकील अहमद, डॉ. टी सी वसंता, 'द्विवागीश' गुड्ला परमेश्वर, डॉ. ऋषभदेव शर्मा, डॉ. ऍम रंगय्या और अन्य लोगों ने किया है जो अपने आप में काफी प्रशंसनीय है और इन कहानियां को भारतीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भाषा के स्तर पर और संवेदना के स्तर पर प्रतिष्ठित करता है वह इस संदर्भ में छठे और साथ में दशक के बाद की कथा रचनाओं में और इसके पहले लगभग 100 सालों की कथा शताब्दी के विभिन्न पहलुओं से जुडी हुई है, जो कहानिया इस संकलन में दी गई हैं और इन कहानियों को पढ़कर ऐसा लगता है कि जो की संपादकीय में व्यक्त हुआ है कि वह विभिन्न वर्गों के बीच फंसे अनेक अनुभवों को वास्तविकताओं को इतिहास को प्रकाश

में लाने की कोशिश की गई है और तेलंगाना परिवेश की विशेषताएं को अभिव्यक्त हुई हैं। तेलंगाना की कथा निधि को अपनी अंजलि में भरने वाले इस विशेष प्रयास का स्वागत करते हैं और तत्कालीन कहानी के इतिहास को एक सूत्र में पिरोने का यह प्रयास को महत्वपूर्ण कहा जा सकता है!

हम इसके साथ ही अस्तित्व के संचयन के लिए और विशेष रूप से हमारी इस पत्रिका **"अकस्मात"** के सहयोग के रूप में प्रतिनिधि कहानियों के कहानीकारों और संपादक मंडल के आभारी हैं जिन्होंने हमें इन कहानियों को प्रकाशित करने की अनुमति दी है।

मित्रो भारत के आजादी के इस 77 वें वर्ष पर देश की कोटि कोटि जनता को बधाई व शुभकामनाएं देने के साथ ही मैं इस अवसर पर तेलंगाना साहित्य अकादमी के कथा संचयन अस्तित्व में शामिल सभी कहानीकारों, संपादकों व इससे जुड़े अनुवादको के प्रति अपना आभार व्यक्त करते हुए विशेष रूप से डॉ. नंदिनी सिधा रेड्डी, डॉ. ऋषभ देव शर्मा, डॉ. एम रंगय्या, द्विवागीश गुडला परमेश्वर के विशेष सहयोग के प्रति कृतज्ञता का भाव व्यक्त करता हूँ और मेरे इस कथा प्रयोजन – परिवेश में शामिल कथाकारों, दाशरथी कृष्णाचार्य, चेरबंडा राजु, सी हेच. मधु, अयोध्यारेड्डी, डॉ. सुमनलता रुद्रावझला, डॉ. टी. सी. वसंता तथा इसी संचयन के हिंदी कथाकारों – सर्व श्री किशन शर्मा, मणि मधुकर, हेमंत शेष, सुभाष दीपक, कमला नाथ व प्रभात गौतम के प्रति भी आभार व्यक्त करना चाहता हूँ। जिन सभी के सक्रिय सहयोग व परामर्श के बिना यह दुर्लभ कार्य जो हमें अथ से इति तक भारतीय सांस्कृतिक सामाजिक सरोकारों से जोड़कर कथा साहित्य के विराट परिसर तक ले जाने का मेहनीय उपक्रम किस तरह बन जाता है इसे ओपचारिकता की भाषा में अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता है ।

फिलहाल इस सारस्वत अभियान में सम्मलित सभी साहित्यकारों को बधाई व धन्यवाद!

तेलुगु का समसामयिक कथा संसार

नंदिनी सिधा रेड्डी

किसी भी प्रदेश अथवा क्षेत्र के जीवन-विधान के निर्माण में वहाँ के भौगोलिक तथा प्रादेशिक परिस्थितियों का प्रभाव महत्वपूर्ण स्थान रखता है। उस प्रांत के उत्पादन पालन-व्यवस्था, मानव संसाधन, राजनैतिक तथा आर्थिक परिणाम, मानव जीवन के पारस्परिक संबंध आदि वहाँ के जन-जीवन को निर्देशित करते है। ऐसे संक्लिष्ट परिस्थितियों में जीवन के वास्तविक रूप का चित्रण करने की विधा को, कथा/कहानी कहते है। भाषा चाहे कोई भी हो जीवन के बहुमुखी रूपों का चित्रण करने की शक्ति केवल कथा साहित्य में होती है। इसी कारण कथा साहित्य जितना मनुष्य के मन के निकट होता है। उतना साहित्य का अन्य कोई अंग नही होता है। कहानी बुनना, कहानी कहना, कहानी सुनना, हर कोई पसंद करता है। लोक कथाओं से लेकर तात्विक चिंतन करने वाले मानव-समाज में पीढ़ी दर पीढ़ी इस कथा-साहित्य का विकास होता आ रहा है। तेलगांणा के आज के आधुनिक साहित्य पर प्रकाश डालने पर पता चलता है कि आधुनिक कथा-साहित्य आधुनिक जीवन के बहुत ही निकट आ गया है।

तेलगांणा प्रांत के अस्तित्व का अपना एक विशिष्ट स्थान हैं। काल प्रवाह में बहते हुए अनेक प्रकार के ज्वार-भाटों क सामना करते हुए उसने अपने अस्तित्व चेतना को अक्षुण्ण बनाए रखा। इस प्रांत के गुणाढ्य की बृहद कथा हाल की गाथा सप्तसती तथा करवि गोपराजु की सिंहासन द्वात्रिंशिका जैसी कथा-कृतियों ने अपने-अपने समय के मानव-जीवन के मूल्यों का चित्रण अपने कथा साहित्य में करते हैं। तेलगांणा का आधुनिक तेलगांणा के जीवन-विधान में होने वाली प्रत्येक छोटी-बड़ी घटनाओं की जड़ तक पहुँच कर उसका प्रतिबिंब मानव समाज के समक्ष प्रस्तुत करने में सक्षम है।

भारत देश के अन्य प्रान्तों से, तेलगु बोलने वाले अन्य प्रदेश के लोगों के इतिहास से भी, तेलगांणा का इतिहास अलग है। इस प्रांत पर अंग्रजों का प्रत्यक्ष शासन कभी नहीं हुआ और नहीं निजाम का अपना स्वतंत्र शासन भी पूर्ण रूप से रहा है।

यहाँ की जनता पर अंग्रेजों के रेजीडेंसी शासन का निरीक्षण, नियंता निजाम का पालन देशमुख जमींदारों की क्रूरता के बीच में सदा पिसती रही और पीड़ित रही। यहाँ का जन-जीवन कई अन्य प्रकार की समस्याओं से भी जूझता रहा। इस कारण से जीवन-विकास की कोई भी विधि यहाँ पर पनप नहीं सकी। यहाँ की जनता सदा कर के भार से, लेवी के बोझ से, बंधुआ मजदूरों से पीड़ित रही। अन्य प्रान्तों की तुलना में यहाँ की जनता ने इन यातनाओं की पराकाष्ठा यहाँ पर देखी। विद्या का विकास नाम मात्र को था। वह भी उर्दू माध्यम से। प्रांतीय भाषा को कोई प्रोत्साहन नही मिला। इस प्रकार की दुर्लभ परिस्थितियों में आशा की एक मात्र किरण जीवित थी तो वह भी आर्य समाज। उसने जनता में चेतना का पुनर्जागरण किया। उसका साथ देने वाली एक और संस्था भी आंध्र महा सभा चलते-चलते पूरे भारत ने 15 अगस्त,

1947 को आजादी प्राप्त कर ली, लेकिन तेलगांणा स्वतंत्र नही हुआ। वह तो अभी भी निजाम के शासन की बेडियों में जकड़ा हुआ था। एक तरफ निजाम, दूसरी तरफ रजाकार तो, तीसरी तरफ जमींदारों के अत्याचारों तथा अकृत्यों से सामान्य जीवन अस्त व्यस्त हो गया था। अपने अस्तित्व को बचाए रखने के लिए तेलगांणा की जनता को कमर कसनी पड़ी और सशस्त्र आदोंलन के लिए उद्यत होना पड़ा। निजाम के निरंकुश पालन को ध्वस्त करने के लिए कृषक समाज ने कदम बढ़ाया। यह सारे विश्व की दृष्टि को अपनी ओर आकृष्ट करने वाली ऐतिहासिक घटना थी और किसानों का दृढ़ निश्चय भी ।

तेलगांणा प्रांत में होने वाले इन सभी परिवर्तनों को, परिणामों को यहाँ के कथा-साहित्य ने प्रतिबिंबित किया। प्रांतीय जीवन के विभिन्न रूपों को भिन्न संस्कृतियों को अलग-अलग प्रकार के संघर्षों को, लड़ाईयों को, झगड़ों को यहाँ के कथाकारों ने अपनी कथावस्तु बनाई। तेलगांणा में कथाकार पहले बने और पाठक बाद में। काल की आवश्यकता के अनुसार चेतना को जन-जन के मन तक पहुँचाने का काम यहाँ के कथाकारों ने किया।

तेलगांणा के कथा साहित्य ने अपने शतायु काल की अवधि को पूरा कर लिया है। अपने कथा-साहित्य में यहाँ के कथाकारों ने, प्रयोग-शोध जैसे तत्वों से भी जनता की समस्याओं कों प्रस्तुत करने की ओर अधिक ध्यान दिया। यहाँ के कथाकारों ने अपनी कहानियों में स्थानभेद तथा प्रत्यक्ष दर्शन की अनुभूतियों को अपनी कथावस्तु बनाई। यही कारण है कि तेलगांणा के कथा - साहित्य में कल्पना से अधिक वास्तविकता का दर्शन होता है। शिल्प-कला से भी वस्तु-दृष्टि अधिक दिखाई देती हैं। कहानी में कथा-लक्षण भरपूर दिखाई देतें हैं। पाठकों की संख्या कम होने के कारण यहाँ के कथाकारों ने कहानी की सरल शैली को अपनाया। तेलगांणा के साहित्य पर अंग्रेजी साहित्य के प्रभाव से भी हिन्दी,उर्दू साहित्य का प्रभाव अधिक था। यहाँ के साहित्यकार प्रेमचन्द तथा किशन चन्दर जैसे भारतीय साहित्यकारों की शैली का अनुसरण करके आगे बढ़े। यहाँ के कथाकारों के सहित्य में साहित्यिक मूल्यों से भी जीवन-मूल्यों की अधिक प्रधानता दिखाई देती है।

तेलगांणा की प्रथम पीढ़ी की आरंभिक कहानियों में स्त्री-विधा, सामाजिक दुराचार तथा उनके निर्मूलक, कुरूतियों का निर्मूलन, सुसंस्कारो का निर्माण आदि विषयों का केन्द्र में रखा गया। हिन्दू-मुसल्मानों की एकता की भावनाओं को प्रधानता दी गई। चलते-चलते, किसानों में जीवन संघर्ष, बंधुआ मजदूर, अमीर-गरीब, जमींदारों की लूट, जन आंदोलन, क्रान्ति, रजाकारों के अत्याचार, कम्युनिस्टों अज्ञात आंदोलन, सशस्त्र गुरिल्ला संघर्ष आदि विषयों ने कथा साहित्य में अपनी जगह बना ली। उसके बाद समैक्य आन्ध्र प्रदेश में तेलगांणा वासियों के साथ भेद-भाव रखा गया और यह प्रांत जैसे पिछड़ा का पिछड़ा ही रह गया आदि वस्तु विषय भी कथा-साहित्य पर हावी होता रहा। अन्याय और अत्याचारों के विरूद्ध संघर्ष धीरे-धीरे ग्रामीण वातावरण, बाल्यकाल का वर्णन चित्र आदि भी इस क्षेत्र में अपने पैर जमाने लगे। कोयले के खदानों में काम करने वाली मजदूर, गल्फ देशों में नौकरी की तलाश में जाने वाले लोगों की जीवनी का चित्रण भी कहानियों में होने लगा। बेरोजगारी, पानी की समस्याएँ भी कहानी का रूप लेकर कथा-साहित्य को शीर्ष स्थान तक पहुँचाया और तेलगांणा के आत्म-गौरव को बढ़ाया। धीरे-धीरे समस्याएँ और बढ़ी। अलग तेलगांणा राज्य की माँग तथा आंदोलन भी शुरू हो गए तो यह विषय भी तेलगांणा के साहित्य में कथा-वस्तु बन गई। इससे भी तेलगांणा कथा साहित्य के विकास में सहयोग दिया।

तेलगांणा के अस्तित्व की चेतना को, यहाँ के आँचलिक जीवन शैली को सांस्कृतिक विशेषताओं को विभिन्न कहानियों को अन्य भारतीय भाषा-भाषियों को परिचित कराने के उद्धेश्य से तेलगांणा साहित्य अकादेमी ने तीन पीढ़ियों में अपना प्रतिनिधित्व करने वाली कहानियों को चुनकर 'अस्तित्व' के शीर्षक से अंग्रेजी तथा हिन्दी में एक कहानी संकलन का

प्रकाशन करवाया। अलग-अलग कथाकारों की 25 हिन्दी अनुदित कहानियों को प्रकाशित करवाकर सारे देश में वितरित की गई। इस हिन्दी में अनुदित कथा संग्रह की संपादक मंडली सचमुच प्रंशसा के पात्र है।

जयपुर -राजस्थान से एक पाक्षिक 'अकस्मात' पत्रिका निकलती है, जिसके संपादक माननीय अशोक आत्रेय जी है। 15 अगस्त को निकलने वाली पत्रिका को वे तेलुगु कथा विशेषांक के रूप में प्रकाशित करना चाहते है। पांच तेलुगु कहानियों को इस विशेषांक में स्थान प्राप्त हुआ है।

इस विशेष प्रयास के लिए तेलुगु कहानियों तथा तेलगांणा के अस्तित्व के प्रति विशेष रूचि दिखाने वाले श्री आत्रेय जी और 'अस्तित्व के संपादक संपादक मंडली के सदस्य श्री गुडला परमेश्वर जी का मै ह्रदय से अभिनंदन करता हूँ। भारतीय भाषाओं के बीच परस्पर अनुसंधान का पात्र निभाने वाली 'अकस्मात' पत्रिका का भी मैं अभिनंदन करता हूँ। सभी अनुवादकों की साहित्यिक कृति प्रशंसनीय है। मैं उन सबके प्रति आभारी रहूँगा।

तेलुगु हिंदी कहानी : अनुवाद का मर्म और माध्यम

द्विवागीश गुडला परमेश्वर

07 जून 2023, को मैं बैठकर कुछ लिख रहा था। दफ्तर में लोग आ जा रहे थे। अचानक फोन की घंटी बजी। फोन रिसीव किया। दूसरी और एक अपरिचित आवाज, जी मैं "अशोक आत्रेय, राजस्थान से। परमेश्वरजी है न? जी हाँ। मैंने कहा। मैं राजस्थान से हूँ। ई-पत्रिका 'पाक्षिक' का संपादक हूँ। 15 अगस्त के अंक को तेलुगु कथा विशेषांक निकालना चाहता हूँ। जिसके लिए मैं हैदराबाद के कुछ कथाकारों से मिलना चाहता हूँ। मैंने उनसे आधे घंटे का समय लिया। गोंविंद अक्षय जी से बात करके 8 जून के लेखक संघ की गोष्ठी में हैदराबाद के कवि, लेखकों से भेट करने का प्रबंध करवा दिया। 8 जून की गोष्ठी में भाग लेकर आत्रेय जी बहुत प्रसन्न हुए। वे अपनी बेटी के पास बेगमपेट मे रूके हुए थे। 9 जून को मैं उनके पास चला गया। बैठकर तेलुगु कथा विशेषांक के बारे में विस्तृत चर्चा हुई। वे तेलगांणा राज्य सरकार द्वारा अनुदित कहानी संकलन 'अस्तित्व' के आधार पर अपना विशेषांक प्रकाशित करना चाह रहे थें। उस संकलन के प्रकाशन में सहयोग देने वाले अनुवादकों के नाम व नंबर नोट करवा दिये। उन्होनें उन सभी लोगों से बात करके विचार - विमर्श किया। तेलगांणा साहित्य अकादेमी के पूर्व अध्यक्ष नंदिनी सिधा रेड्डी जी तथा वर्तमान अध्यक्ष जूलरी गौरी शंकर जी की सलाह लेकर अपनी पत्रिका का कार्य शुरू कर दिया।

इस संकलन में आपने छः कहानियों को चुनकर अपनी पत्रिका में छापी है:-

कहानी	लेखक	अनवादक
अग्निपुष्प	डॉ॰ दाशरथी	गुडला परमेश्वर
चिरंजीवि	चेराबंडा राजू	टी. मोहन सिंह
क्या मैं मर गया?	मधु	टी. वंसता
चित्रनैन	नंदिनी सिधा रेड्डी	शकील अहमद
आहार यात्रा	अयोध्या रेड्डी	डॉ. सुमन लता
ग्यारह कद्दू बारह कोतवाल	सुरवरं प्रताप रेड्डी	डॉ. एम. रंगय्या

पृथ्वी पर विकसित प्राणी (मनुष्य) ने अपने विचार-विनिमय के लिए भाषा का विकास कर लिया। विश्व मंडल में अलग-अलग प्रांतों में अलग - अलग भाषाओं का विकास हुआ। हर भाषा में कथा-कहानियों की रचनाऐं भी हुई। हमारे देश रामायण, महाभारत आदि महाकाव्यों रचनाऐं भी हुई। लेकिन मनुष्य का जागरूक मस्तिष्क अपनी भाषा की कहानियों के साथ-साथ अन्य भाषाओं की कथा-कहानियों से भी परिचित होना चाहता था। इसी सिलसिले में रामायाण, महाभारत आदि काव्यों का अनुवाद भारत की सभी भाषाओं में हुआ।

चलते-चलते आज के समय में पहुचँने तक भारत की भाषाऐं ही नही विश्व की भाषाओं में भी परस्पर कथा-कहानियों के आदान-प्रदान के प्रचलन बड़ी तेजी साथ हुआ। यह भावना निश्चित रूप से वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना को बढ़ावा देने में संपूर्ण सहयोग देगा। आज का युग बहु भाषिकता का युग है और इस युग में अनुवाद कार्य की आवश्यकता है भी,

साहित्यिक अनुवाद के समय अनुवादक को कईं बातों का ध्यान रखना होता है। पहले तो उसे स्त्रोत भाषा तथा लक्ष्य भाषा, दोनों का संपूर्ण ज्ञान होना चाहिए। अनुवाद का अर्थ शब्दों का, वाक्यों का अनुवाद प्रस्तुत करना नही होता है। अनुवाद का अर्थ होता है कि स्त्रोत भाषा में प्रस्तुत संस्कृति का, सभ्यता का, परिवेश का अवतरण लक्ष्य भाषा में करें। स्त्रोत भाषा के मूल उसके या भावों को बनाए रखे। अनुदित रचना को पढ़ते समय पाठक को लगना चाहिए कि वह अनुवाद नहीं मूल रचना ही पढ़ रहा है।

भावगत तथा शैलीगत विशेषताओं की पहचान बनी रहें। इस प्रकार का अनुवाद करने के लिए अनुवादक को प्रतिभावान होना चाहिए। भाव शैली को अंभग रखते हुए जहाँ जोड़ना है, जोड़े और जहाँ छोड़ना है, छोड़ते चलना चाहिए। प्रवाहमयी शैली तथा संप्रेषणीयता अनुवादक के आवश्यक गुण होने चाहिए।

तेलगांणा साहित्य अकादेमी ने जिन अनुवादकों को चुनकर 'अस्तित्व' के निर्माण - भार को सौंपा था वे सभी उपरोक्त गुणों से भरपूर है और कहानियों के मूल भावों को संप्रेषित करने में सफल रहें हैं।

इस प्रकार का प्रयास सभी भारतीय भाषाओं में होने लगे तो भारतीय साहित्य राष्ट्रीय भावनाओं का एक गुलदस्ता बन जाएगा।

शुभम् भूयात्

क्यों ना कहानी को कहानी ही रहने दी जाए?

सुभाष दीपक

पहले कहानी को कहा जाता था। सुनाया जाता था। बाद में आदमी की जीवन शैली बदली तो कहानी का लिखा जाना अधिक सहूलियत वाला समझा जाने लगा। इसका प्रचलन बढ़ गया। कहानियां लिखी जाने लगीं। पढ़ी जाने लगीं। आदमी तो बेचारा रोज मर रहा है। उसकी आरजुएं मर रही हैं। उसकी उम्मीदें मर रही हैं। उसके सपने मर रहे हैं। बस एक कहानी है जो मरती नहीं है। वह हमेशा जिन्दा रहती है। मरती वह पहले भी नहीं थी जब कही जाती थी। अब वह कागज पर उतर कर अमर हो जाती है। एक बार होंठों से बाहर आई नहीं कि शाश्वत हो जाती है। एक बार कानों में पड़ी नहीं कि अजर हो जाती है। वह कभी पुरानी होती ही नहीं। कभी भी उसके अर्थ बदलते ही नहीं। वह कभी भी अपने संदर्भों से विचलित होती ही नहीं । कहानी नित्य है। निरंतर है। आदमी हरपल या तो कहानी लिख रहा होता है या कहानी को जी रहा होता है।वह कहानी से कभी विरक्त होता ही नहीं।

इसका कोई समय नहीं है। हर समय कहानी का समय है और हर कहानी समय है। कहानी जीवन की खूबसूरतियों को कागज पर उतारने का शिल्प है। कहानी एक तलाश का भी नाम है। कहानी एक दर्पण भी है जिसमें हर आदमी अपना अक्स ढूंढ़ता है। कहानी के सहारे वह अपने सपनों से रूबरू होना चाहता है। अपनी तकलीफ से दूर होना चाहता है। कहानी आदमी के लिए वह ऊंचाई है जिस पर चढ़ कर वह अपने को अपने कद से ऊंचा देख सकता है। अपने जज्बात को जश्न में तब्दील कर सकता है। अपनी प्रार्थना का प्रतिफल भी वह कहानी से ही चाहता है।

अकस्मात का यह कहानी विशेषांक अब की बार कुछ बेहतरीन हिन्दी कहानियों के साथ साथ तेलगु की चुनिंदा उन कहानियों को भी प्रस्तुत कर रहा है जो कुछ संदर्भों में प्रतिनिधि कहानियां भी कही जा सकती हैं। तेलगु कहानियों को यहां प्रस्तुत करने के पीछे कहानियों की संख्या बढ़ाना हमारी मंशा कतई नहीं है, बल्कि हमारा प्रयास है आज तेलंगाना में रह रहे कथाकारों को उत्तर भारत में वहां से आकर रच बस गये उन्हीं की संस्कृति से कभी जुड़े, यहां के कथाकारों के साथ, मंच साझा कराने का। कहा जाता है कि आज से तकरीबन पांच सौ वर्ष पूर्व कर्णाटक भू भाग में हुए भीषण अग्निकांड के कारण अनेक तैलंग ब्राह्मण उत्तर भारत की तरफ चले आए थे और कुछ बाद में राज्याश्रय पाकर उत्तर भारत में आ गए और अपनी प्रतिभा के दम पर अपनी धमक के साथ यहीं रहने लगे। धीरे धीरे वे लोग अपनी मूल संस्कृति से हटते हुए यहां की भाषा, रहन-सहन, खान-पान को स्वीकार करते हुए यहीं के मूल निवासी बन गये। अकस्मात का यह

अंक संस्कृति के दो टुकड़ों को फिर से मिलाने की ओर एक छोटा सा कदम है। मानसिक , सामाजिक और वैचारिक विमर्श की कड़ियों को जोड़ने की शुरुआत है। कहानियां नयी या पुरानी नहीं होतीं। इनके पाठक भी नये या पुराने नहीं होते। जिस तरह कहानियां निरंतर हैं ठीक उसी तरह पाठक भी नित्य है। इनके पात्र सदैव जीवित हैं और हर समय हमारे आसपास विचरते देखें जा सकते हैं। इनका समवेत संदेश हमारी सोच से परे नहीं है।इनका स्वरूप, स्वभाव और स्वाद हमारी जरूरत बन चुका है। ।

मणि मधुकर कहानी जगत से वाकिफ लोगों के लिए जाना पहचाना नाम है। उनकी कहानी 'उजाड़ और अधमरे' रेणु की तर्ज़ पर ठेठ ग्रामीण परिवेश निर्मित करती हुई दो मुल्कों की सरहद पर बसी एक छोटी सी ढ़ाणी के बाशिंदों की कहानी है। भोले भाले ये लोग अपने उजड़े, उखड़े हाल में फटे आंचल और लुटती अस्मत वाली औरतों के साथ जीने को विवश हैं।धनसिंग ,बाऊ और दाखां उस वर्ग की नुमाइंदगी करते हैं जो रोज जीते हैं और रोज मरते हैं। इनके भीतर पनप रहा आक्रोश और सुखद भविष्य की लालसा को भी कहानीकार ने बड़े अच्छे तरीके से दर्शाया है। इसका संदेश मार्मिक है।

'धुंध के उस पार ' श्री किशन शर्मा की एक चर्चित और खूब पसंद की गई कहानी है। श्री किशन शर्मा उस शख्सियत के मालिक रहे हैं जिसे बिना धूम-धड़ाके के खालिस कहानी लिखने के लिए जाना जाता है। समीक्षकों और छपने की शर्तों से लापरवाह बने रहकर उन्होंने अपनी शैली बरकरार रखी और प्रचलन से हटकर कहानियां लिखीं।ये पचास के दशक की बात है जब हिंदी की कहानियां परम्परा की पगडंडियों से रंच मात्र भी इधर उधर होना स्वीकारती नहीं थीं। श्री किशनजी की इस कहानी में जीवन की विसंगतियों और तमाम किस्म की उठा-पटक के बीच नायक की कशमकश को दर्शाया गया है। अपने वजूद को एक मायने देने की कोशिश में उसे अनेक बेहूदगियों से भी जूझना पड़ता है। आखिर में विकृत परिस्थितियां की धुंध उसे उस पार ले जाकर ही छोड़ती ।

अशोक आत्रेय ने कहानी को परिभाषित करते हुए एक बार लिखा था कि कहानी का कोई पड़ाव नहीं होता। उनके अनुसार बस कहते जाना कहानी है। होते रहना कहानी है। उनकी कहानी 'ये आकाशवाणी है ' उनके इस मत का समर्थन करती है।श्री आत्रेय जी को लीक से हटकर कहानी लिखने वाले कहानी कार के रूप में जाना जाता है। कुछ विद्वान, हालांकि, इस वजह से उनकी कुछ कहानियों को मुकम्मल कहानी मानने से भी इंकार करते हैं, पर उन्होंने इसकी कभी परवाह नहीं की और अपनी कथा यात्रा अपने तरीके से जारी रखी। उर्दू भाषा के लफ्जों से लवरेज उनकी यह कहानी लखनऊ की सरजमीं पर बसर करते मियां असद बाराबंकी की दास्तां बयां करती है। यह केवल उनकी कहानी नहीं है बल्कि उन जैसे तमाम लोगों की भी कहानी है जो गुजरे वक्त के इतिहास में कैद रहने से इन्कार करते हैं। कहानी संक्षिप्त है पर बावजूद इसके एक विस्तार को भी अपने भीतर समेटे हुए है।

कमला नाथ जी अपनी अनूठी शैली और आकर्षक बयानगी वाली कहानियां रचने में माहिर हैं। 'वह क्यों नहीं आई?' इसी स्वाद की उनकी बेहतरीन कथा है। कथा नायक एक ऐसे संसार की रचना कर डालता है जिसमें केवल 'वह' है और उसकी 'वो 'हैं। एक अदृश्य डोरी से अपने को बांधते हुए वह भावनाओं के सागर में गोते खाता रहता है और अंत में अपने को अपने 'वो' के साथ नहीं, समानांतर चलने को बाध्य पाता है। हासिल और नाहासिल के बीच की जद्दोजहद को कहानी में खूब बढ़िया तरीके से बयान किया गया है।

संपादक श्री अशोक आत्रेय जी का मानना है कि 'जब नदी मां हुआ करती थी' सुभाष दीपक की ऐसी कहानी है जो लगता है खुद कुदरत ने अपने कुदरती कैनवास पर कुदरती कलम से लिखी है। पेड़ , पहाड़ और नदी के परस्पर सनातनी रिश्तों को इस कहानी में मानवीय लहजे में प्रस्तुत किया गया है वे हमारी तरह सोचते हैं।खुश होते हैं। दुखी होते हैं।चुप दिखते रहकर भी वे अपने अंदाज में परस्पर संवाद करते हैं।बतियाते हैं। जरूरत पड़ने पर विरोध जताते हैं। सुनहरे कल की आस

उन्हें जिंदा रखती है और विपत्तियों से जूझने का हुनर भी सिखाती है। एक अलग किस्म की यह कथा एक प्रयोग भी है और प्रकृति से हमारे भावनात्मक रिश्तों को पुख्ता करने की कोशिश भी है।

श्री हेमंत शेष बहुमुखी प्रतिभा से सम्पन्न होने के कारण अपनी रचनाओं में हमेशा ही प्रयोग करते हैं।उनकी कहानियों की खूबी या खूबसूरती यह है कि उनके पात्रों द्वारा बोले गए संवादों के साथ कुछ अबोले अर्थ भी चलते हैं।उनका यह अंदाज उनकी रचनाओं में गांभीर्य के साथ साथ व्यंग्य का स्वाद भी जोड़ देता है। ठेठ पारम्परिक बिंबों को आम आदमी की सोच में शामिल करने में वे कुशल हैं। उन्होंने जन मानस की विडम्बनाओं, उत्सुकताओं, आवेशों, उल्लासों,और हताशाओं को बड़े सहज तरीके से अपनी रचनाओं में रूपांकित किया है। उनकी 'झाड़ू' कहानी एक बेजोड़ रचना है। कोई भी व्यक्ति ओहदे के कारण अपनी सोच ,अपने उसूल और अपना स्वभाव नहीं बदल सकता। यही इस कहानी की थीम है और संदेश भी है।

कुछ कहानियां ऐसी होती हैं जो पढ़ने में अच्छी लगती हैं और कुछ कहानियां ऐसी होती हैं जो सुनने में अच्छी लगती हैं। कुछ ही कहानियां ऐसी होती हैं जो पढ़ने में तो अच्छी लगती ही हैं, सुनने में भी अच्छी लगती हैं।न केवल इतना वे पढ़ने और सुनने के कई दिनों बाद भी अच्छी लगती रहती हैं। श्री राजेश जोशी की कहानी 'चमगादड़ों वाला पेड़' ऐसी ही एक अच्छी कहानी है। इसमें छुपा व्यंग्य व्यवस्था की पोल तो खोलता ही है साथ ही आम नागरिक की सहज उत्सुकता और चिंता को भी बयां करता है। लोक अवधारणा और फंतासी के प्रयोग फ्रैंक काफ्का और ब्रेख्त की शैली की याद दिलाते हैं। राजेश के नाटकों में भी यह प्रवृत्ति नजर आती है। सीधी और सरल तथा मंथर गति से बढ़ती इस कहानी में अंत तक रोचकता बनी रहती है और यही इसकी खासियत भी है।

श्री प्रभात गौतम की कहानी 'अपराजित' आदमी की जुझारू प्रवृत्ति को रेखांकित करते हुए एक सीधे-सीधे इंसान के निःस्वार्थ भाव को रूपांकित करती है। कहानी मानवीय संवेदनाओं के साथ साथ नायक की जिद को भी एक अलग नजरिया से पेश करती है। अपने सहज स्वभाव और सरल प्रक्रिया के माध्यम से वह अपने अपराजित बने रहने के मकसद को हासिल करने में सफल हो जाता है। उसका यह कदम जल्दी हार मान लेने वाले लोगों के लिए एक सबक भी है।

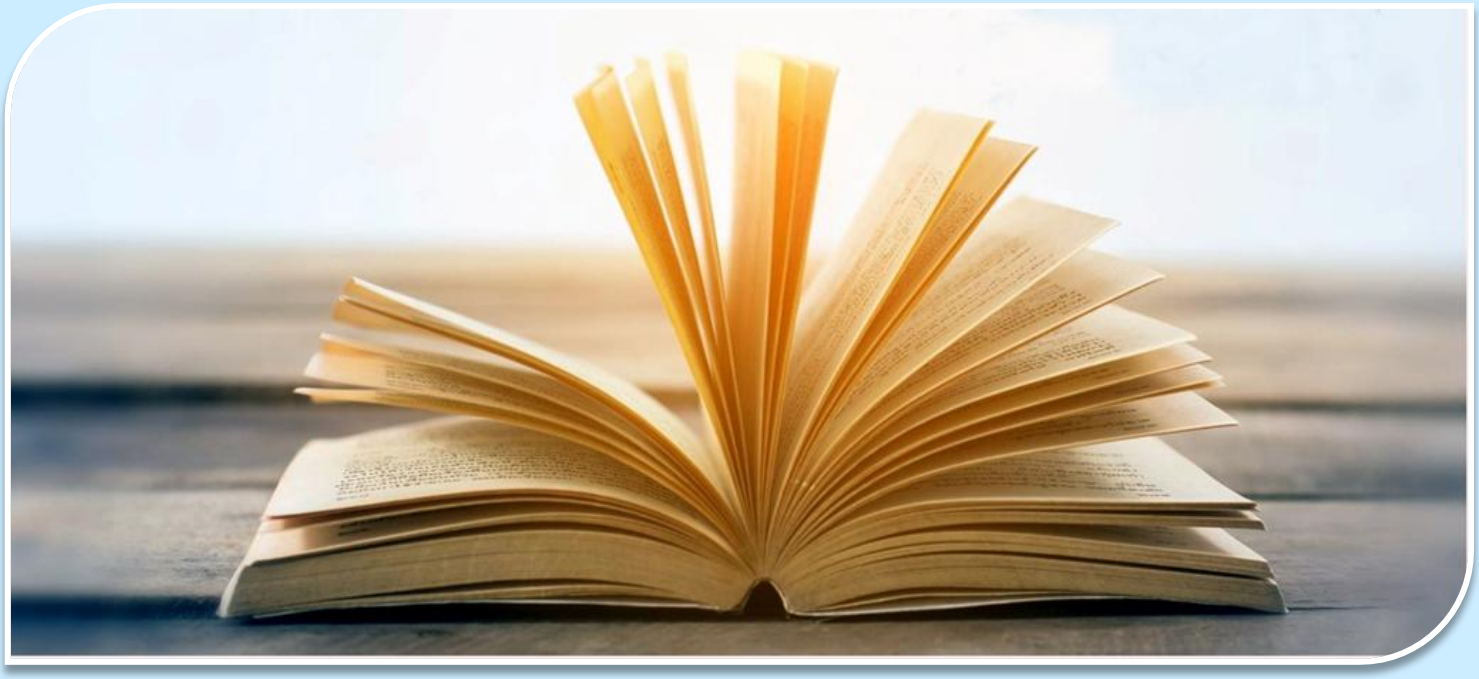

14

अनूठे कथाकारों की अनूठी कहानियाँ

कहानी

क्या मैं मर गया?

सी. एच. मधु

रामायम पेट में सन् 1945 ई. में जन्मे सी. एच. मधु जी इस समय निजामाबाद में आकर बस गये हैं। कई कहानियाँ और निबन्ध लिखकर आपने साहित्य के क्षेत्र में अपने लिए एक विशेष स्थान बनाया है। इनकी रचनाओं का एक स्पष्ट दृकपथ होता है। एक कर्तव्यनिष्ठ साहित्यकार के रूप में राज्य-हिंसा के विरुद्ध आप अपने साहित्यिक बाण छोड़ते रहते हैं।

क्या मैं मर गया?... रामू सोच रहा है।रास्ते में चलते समय... खाना खाते समय... उस रात... पत्नी की बगल में यही चिंता... क्या मैं मर गया? एक बार हृदय पर हाथ रखकर देखा... धड्... धड्... धड़कनें सुनाई दीं।

हाँ वह ज़िंदा है। पत्नी को बहुत नज़दीक लिया। कोई फ़ायदा नहीं। उसे तृप्ति नहीं मिलती। पत्नी को भी नहीं। हर दिन नहीं...

इसी दिन... क्यों आज नया-नया क्या है? क्या! मैं मर गया? रामू को नींद नहीं लग रही है। रामू को इस कदर विचार आने का कारण उसका अतीत है। कुछ दिनों पहले पुलिस ने पत्थर फेंकनेवाली प्रजा पर गोलीबारी की। वे लोग मिल में काम करनेवाले मजदूर थे। जो पत्थर फेंके गए, पुलिस पर नहीं। मिल पर। फिर भी पुलिस ने गोलीबारी की। इस विषय के बारे में रामू को पता नहीं। पुलिस ने लाठी-चार्ज करना शुरू किया। लोग इधर-उधर बिखर गए। कुछ लीड़र मंच छोड़कर नहीं आये। किन्तु उनमें रामू भी एक लीडर था। प्रजा के बीच में से... मजदूर के बीच में से।

बोनस के विषय में झगड़ा चल रहा था। मिल-मालिक मजदूरों की माँगें पूरी करने के लिए न कोई आगे आये न कोई निर्णय लिया गया। धीरे-धीरे मजदूरों ने हड़ताल करना शुरू किया। हडताल चलाने के लिए सारे मजदूरों ने मिलकर पाँच लीडरों को चुना। उनमें रामू भी एक था। कुछ भी होने दो- उन्होंने निर्णय लिया कि उनकी माँगें पूरी हुए बिना वे हड़ताल नहीं छोड़ेंगे, एक कदम भी पीछे नहीं हटेंगे। पाँच दिनों की हडताल के बाद... बड़ा जुलूस निकाला गया। जुलूस मुख्य रास्ते से होते हुए मिल के सामने रुक गया। पुलिस... पुलिस के पीछे मिल-मालिक के गुंडे। एक के बाद एक भाषण दे रहे हैं। रामू ने भी भाषण दिया। बाद में... वेणु भाषण दे रहा है। पत्थर... पत्थर... मिल पर पत्थर फेंक रहे हैं। अब तक वातावरण शांत था. . किन्तु मजदूरों के बीच में से अचानक... बीच में ये पत्थर...

लीडर वेणु ने पत्थर फेंकनेवालों को रोका। लीडर सीनु ने भी पत्थर फेंकनेवालों को रोका। फिर भी मजदूरों के बीच में से पत्थर... रामू मंच से नीचे उतर आया। डर... डर... वह पत्थर उस पर गिरेगा तो. पत्थर... पत्थर... पत्थर... पुलिस ने लाठी-चार्ज किया। हड़ताल चलाने वाले सीनु, वेणु आश्चर्यचकित रह गए। सबने वादा किया था कि वे शांत रहेंगे। लेकिन ये पत्थर? उन्हें क्या पता? मालिकों के गुंडे पत्थर फेंक रहे हैं। सारे मजदूर इधर-उधर बिखर गए। जाते-जाते वे भी पत्थर फेंकने ... लगे। मजदूर भाग रहे हैं। रामू भयभीत हो गया। वह भी लीडर है। उसे पता है कि उसे भागना नहीं चाहिए। मजदूरों का जुलूस जाने के बाद दंगे हो जाएँगे इसलिए पुष्पा ने दरवाज़ा बंद किया। कोई तो दरवाज़ा खटखटा रहा है। आवाज़ सनते ही उसने दरवाज़ा खोल दिया।

एक युवक अंदर आया। वह हाँफ रहा है। उसने दरवाज़ा बंद किया। उसे लगा कि उसने कहीं देखा है। किन्तु सोचने का समय नहीं है। “दरवाज़ा क्यों बंद किया? क्या है यह जबरदस्ती...” पुष्पा ने घबराते हए- पूछा। “पुलिस... पुलिसवाले सबको मार रहे हैं। इसलिए मैंने दरवाज़ा बंद किया।” कहते हुए उसकी आँखों में देखा। युवक सोच में पड़ गया कि कौन है यह? उसे अंदर डर... अगर कोई आकर दरवाज़ा खटखटाएगा तो? क्यों दंगा तीव्र हो गया?”

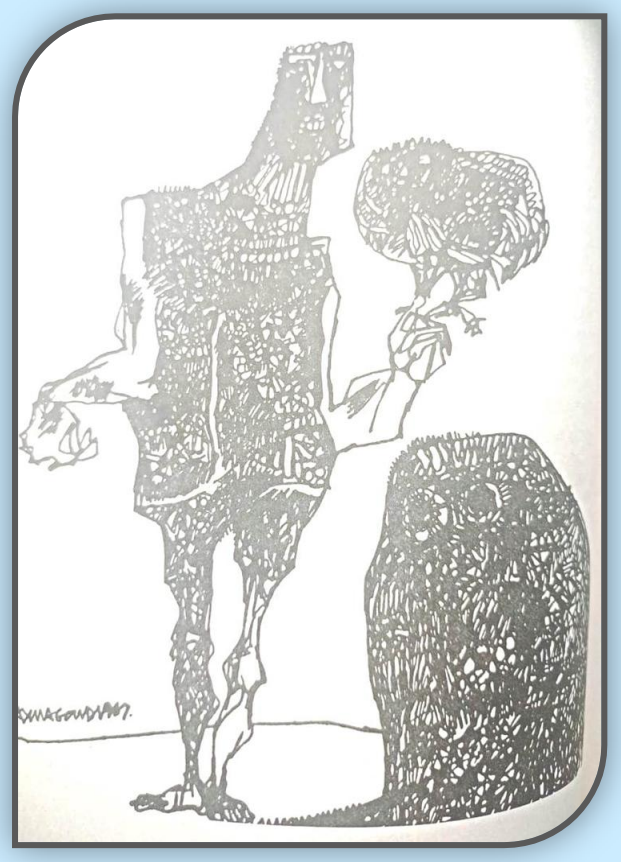

“पुलिसवालों ने लाटीचार्ज किया।” “क्यों? मजदूरों ने पत्थर क्यों फेंके?” “पता नहीं । “आप मजदूर हैं?” रामू ने जल्दी-जल्दी प्रश्न करनेवाली पुष्पा को ध्यान से देखा। गोल चेहरा। गोरा रंग। काली टिकिया... वह यौवन में नहीं है। किन्तु वह सुन्दर है। लाल साड़ी पर सफेद फूल एम्ब्राइडरी की गयी। लाल ब्लाउज़ पहनी हुई। आँखों में आँख डालकर देखनेवाले उस युवक को देखकर पुष्पा ने सिर झुका लिया। “मैं हड़ताल चलानेवालों में एक लीडर हूँ।

“लीडर होकर डर रहे हैं?” नहीं... नहीं... दंगे चल रहे हैं न! पुलिस ने लाठीचार्ज किया है उसने वाक्य को पूरा नहीं किया। फूल के धागे को एकदम तोड़े जैसा। फिर भी तोड़े गये धागे से शिखा को लपेट लिया, ऐसा ही लगा। “दरवाज़ा खोल देती हूँ।" “नहीं पुलिस आ जाएगी।" पुष्पा को लगा कि वह डर रहा है। किन्तु वह लीडर है क्यों डरेगा? पुष्पा अंदर चली गई। कहीं तो मैंने इसे देखा है। कहाँ देखा होगा?” दोनों इसी के बारे में सोच रहे हैं। रामू कुर्सी पर बैठ गया। डर... डर... पाँव पर दो मार लगे। स्पर्श करके देखा। थोड़ा सा खून निकल रहा है। जेब से सिगरेट निकालकर लाया। रामू भयभीत हो गया... कितने लोगों को मार डाला होगा। कितने लोग अरेस्ट किये गये होंगे... उसे भी अरेस्ट करेंगे तो... डर... कितनी सुन्दर है वह महिला। घर में कोई नहीं हैं? बच्चे नहीं हैं? स्कूल गये होंगे... सिगरेट पीते हुए राख निकालकर घाव पर लगाते जा रहा था... “यह घाव?” पुष्पा ने पूछा। हाथ में कॉफ़ी कप है। “लाठियों की मार!” “बहुत लगा? राख क्यों लगा रहे हैं? अयोडिन है, लगा लीजिए। कॉफ़ी पी लीजिए” रामू ने कॉफ़ी पी। अयोडिन को घाव पर लगाया। ध्यान से कमरे को देखा। बहुत सुन्दर है। सुन्दर कैलेंडर। छोटी सी टेबुल। चार कुर्सियाँ। एक अलमारी। अलमारी में पुस्तकें... "आप पढ़ती हैं?”

"हाँ उपन्यास पढ़ती हूँ।" थोड़ी देर के बाद... "हड़ताल क्यों?” “इस साल बोनस नहीं दे रही है कम्पनी। लेबर आफ़ीसर ने बहुत प्रयत्न किया। लेकिन मालिक टस से मस नहीं हुए। इसलिए यह हड़ताल” “सरकार तैयार नहीं हुई?” "बिलकुल तैयार नहीं हुई?” “फिर क्यों?” “सरकार की कोई ग़लती नहीं।” कुछ तो कहना है। कहा रामू ने। "दरवाज़ा खोलूँ?” “घर में कोई नहीं है क्या?” “नहीं है।”

“कहाँ गए आपके पति और बच्चे?” “बच्चे!” "संतान नहीं है।” चेहरे पर उदासी छा गई। उमर तीस साल होंगे। संतान नहीं है। इसलिए वह इतनी सुन्दर है। दरवाज़ा खोलकर पुष्पा बाहर चली गई।

रामू ने एक और सिगरेट सुलगाया। दरवाज़ा खोलने के बाद वह और डरने लगी। वह अंदर आ गयी। थोड़ी देर के बाद उसने कहा- “आप चले जाइए। दो व्यक्ति मर गए। आप लीडर हैं न! जाना चाहिए।”

वह जाने का इच्छुक नहीं था पुलिस... मालिक... गुंडे... जेल... यहाँ रहेगा तो उसके सौंदर्य को देख सकता है। किन्तु... वह उसे डरपोक समझेगी तो... थैंक्स...” कहते हुए वह चला गया। रामू बाहर आ गया। कौन मर गये? वह जानना चाहता है। उनका दाहसंस्कार करना चाहता है। उन्हें मारा गया। बाद में परिणाम... क्या होंगे? उसके बारे में सोचना चाहता है। हड़ताल करने के लिए उसे नियुक्त किया गया। वह कमेटी मेंबर है। हज़ारों मजदूरों के प्रतिनिधियों में से वह एक है। किन्तु... डर... मालिक के गुंडे मार डालेंगे। पुलिस निर्दयता से पीटेगी। पुलिस घर पर आजाएगी तो?... डर... उसी गाँव में उसकी बहन रहती है। वह उसके घर चला गया। रामू रात को ठीक नौ बजे के बाद घर चला गया। घर जाते ही पत्नी ने पूछा- “मार लगा क्या?” उसने सब कुछ बता दिया। पत्नी ने घाव देखा। उसने लंबी साँस ली। “कोई तो आया था। और कहा था कि रात को मीटिंग है। आपको आने के लिए कहा ।” रामू ने सुना। कुछ कहा नहीं। मीटिंग का नाम सुनते ही उसे डर लगने लगा।

खाना खाते समय वह सोच रहा था। इसलिए उसे खाने का दिल नहीं हो रहा था। बिना खाये वह भोजन के सामने से उठ गया। “जाएँगे?” वह मौन रह गया। “दो व्यक्ति मर गए न!” “हाँ” “अब आप आगे क्या करेंगे?” “हड़ताल करेंगे ।” “बोनस देंगे?” "हड़ताल करेंगे तो देंगे। नहीं तो कुछ लोगों को निकाल देगी कम्पनी ।” “फिर मीटिंग में जाइए।” रामू मीटिंग से डरता है। मीटिंग में जाएगा तो... मालिक के गुंडे मारेंगे। पुलिसवाले उसे लॉकप में रखेंगे। हड़ताल अगर विफल हो जाएगी तो उसे निकाल देंगे। लेकिन... लीडरों में से एक इस तरह चले जाना क्या न्याय हैं? न्याय नहीं है... नहीं... नहीं... यह डर अच्छाई के लिए कदापि नहीं। डरपोक नहीं बनना चाहिए... शरतचन्द्र की 'भारती' के अपूर्वबाबू की तरह उसे बन जाना क्या ठीक हैं? राचकोंडा विश्वनाथ शास्त्री ने 'अल्पजीवि' रचना उनके जैसे लोगों के लिए की है? विवेकानन्द ने कहा था- कुछ भी हासिल करने के लिए हिम्मतवाला बनना चाहिए। धैर्य होगा तो ही हम आगे बढ़ेंगे। यह सब जानने के बाद भी वह क्यों डर रहा हैं? जाऊँ या न जाऊँ? आते समय, जाते समय मारेंगे तो... मीटिंग में जाने के लिए डर... निखिलेश्वर ने कहा था- “डर नसों में पानी भर देता है। 'रक्त सूर्य' में _. * शिवा रेड्डी ने लिखा है- “आशा को चिमटी देकर, अधैर्य की बूँदा-बाँदी करके अँधेरे के तालाब में मन को कुचल देगा भय।' असल में उसे क्यों ऐसा डर लग रहा है? “भय का नाश हो।” उसने कागज़ पर तीन बार लिखा। बाद में कागज़ को फाड़ दिया। “धैर्य ज़िंदाबाद” तीन बार, चार बार, पाँच बार उसने लिखा। कागज़ को जेब में रखा। मीटिंग में वह जानेवाला है कहते हुए बाहर आ गया। थोड़ी दूर चला। अचानक बिजली चली गयी... डर... उस अँधेरे में वापस आ गया।

“नहीं गये?” “नहीं गया। बिजली चली गयी। गहरा अँधेरा है।” पलंग पर लेट गया। नींद तो आती ही नहीं... पैंट की जेब से कागज़ निकाला। “धैर्य ज़िंदाबाद”। उस कागज़ पर लिखा हुआ है। उसने कागज़ फाड़ डाला। नींद नहीं आती। बगल में पत्नी। “मार बहुत लगे? नींद नहीं आ रही हैं? पत्नी ने पति को नज़दीक लिया। वह थक गया था। कुछ डरावना विचार। डर... डर... डर... पत्नी में कुछ पाने की चाहत। पति विचारों में खो गया। उसके मन में चिंता... डर... खलबली... आग

और प्रज्वलित हो रही है। वांछा तटंबंध तोड़ रही है। दूघ नहीं उफ़न रहा है। पत्नी में असंतृप्ति... अशांति... चरमबिन्दु का आनंद नहीं। दूध है तो उफनता है किन्तु आँसू हैं! सुबह हो चुकी। बाद में... लगभग नौ बजे लीडर भास्कर आया। भास्कर ने राम से बात की। “कल मीटिंग में क्यों नहीं आया?” उसने पूछा। “अचानक तबीयत खराब हो गयी ।” रामू ने जवाब दिया। भास्कर ने जो कहा सुनते ही रामू उदास हो गया। गोलीबारी में जो दो व्यक्ति मारे गये उनमें उसका जिगरी दोस्त था। उसके कारण ही वह मीटिंग में आया था। उसके कारण ही उसने आंदोलन चलाना सीखा। क्रांति के बारे में जाना। भास्कर के जाने के बाद रामू भयभीत हो गया। कल वह अगर वहाँ रहता तो वह भी मारा जाता। कितनी अच्छी है वह महिला! वह! वह कितनी सुन्दर है। रामू की आँखों के सामने उसके जिगरी दोस्त का चेहरा दिखाई दे रहा है। वह सिगरेट पर सिगरेट पीने लगा। मन बिलकुल ठीक नहीं है। हड़ताल इसी तरह चलेगी? उसके मन में घबराहट। समझौता हो जाएगा तो कितना अच्छा होगा। मन उदास है। उसे डर लग रहा है। होटल जाने के बाद क्वाटर व्हिस्की पी ली। मन में शांति नहीं। मृत दोस्त। हड़ताल... टस से मस न होने वाले मालिक। उनके गुंडे... सरकार इस मामले में सख्त दखल अंदाज़ नहीं कर रही है। वह महिला कितनी सुंदर है। कल उसने ही तो उसकी रक्षा की। धन्यवाद देना पड़ेगा। उसने उसे कहीं तो भी देखा है, कहाँ? उसके घर गया। “आप! आइए... बैठिए...” “आपके पति स्कूल गए होंगे, ऐसा ही मैंने सोचा ।”

"हड़ताल चल रही है न?” “हाँ... कल आपने मेरी रक्षा की। धन्यवाद । “क्यों? एक्सिडंटली वह इंसिडेंट हो चुका" “ठीक है... चलूँगा...” “बेठिएगा। कॉफ़ी पीजिए” कॉफ़ी बनाने के लिए वह अंदर गयी। फिर बाहर आ गयी। “आपको मैंने कहीं देखा है।” कहते हुए उसकी आँखों में आँखें डालकर देखने लगा।

“कहाँ? आपको याद नहीं आ रहा है।” “नहीं । हवा के कारण दरवाज़े बंद हो गए। उठकर पुष्पा ने दरवाज़े खोले। वह सजधजकर है। नीले रंग की साड़ी उस पर सिले हुए सफेद फूल। नीले रंग की ब्लाउज़। माथे पर काली बिंदी। काले-काले बाल। चोटी में मोगरे के फूल। रामू ने सोचा वह कितनी सुन्दर है। “बस में” उस महिला ने कहा। “कहाँ पर?” “बस में, मेरे बाजू में बैठे थे।” राम को याद आ गयी। 'हाँ... उस दिन बगल में बैठा था। डर लगा। उस दिन उसने ही जगह दी थी। उसने उसके साथ असभ्य बरताव किया। पैरों से पैर लगाया। हाथों को स्पर्श किया। फिर भी उसने कुछ कहा ही नहीं। आज वह कह रहा है कि- “मैंने असभ्य बरताव किया। क्षमा कीजिएगा।” “क्षमा क्यों?” पुष्पा ने पूछा। रामू को उसने कॉफ़ी दी। आपने सहजता से ही बरताव किया। सबका बरताव ऐसा ही होता है। अगर आपने ऐसा न किया होता तो मुझे अचरज होता!” “फिर भी... फिर भी... मैंने ग़लती की है न?” कॉफ़ी पीते हुए बोला। “गलत-सलत छोड़ दीजिए... इस तरह बरताव करने से आपको कौन सी संतृप्ति मिली समझ में नहीं आ रहा है।" रामू शरमा गया। “ठीक है जी। जाने दीजिएगा।' “मेरा नाम पुष्पा है। 'जी' कहने की जरूरत नहीं ।” पुष्पा ने जो कहा उसके बारे में रात भर सोच-विचार किया रामू ने कुछ समझ में नहीं आया। असल में रामू पुष्पा को समझ नहीं पा रहा है। रामू से भी पूछा उसी “संतृप्ति' (चरम बिंदु) के बारे में पुष्पा ने अपने पति से भी उसने प्रश्न किया। क्या हम संतृप्ति से जी रहे हैं?”

"क्यों पूछ रही हो?” “हमें संतान नहीं है।” “क्या करोगी?” “फिर एक बार डॉक्टर से जाँच करवा लीजिए” “करवाया न!” “हैदराबाद में एक अच्छे डॉक्टर हैं ।" “हमारे नसीब में संतान नहीं है। कर्मफल है।” अब पुष्पा ने सोचा बात करनी नहीं चाहिए। रामू से भी उसने संतृप्ति के बारे में पूछा। किन्तु इस तरह इनके साथ जीने में उसे क्या संतृप्ति मिलेगी? मन ने प्रश्न किया। कहा जाता है मातृत्व ही संतृप्ति है। पाँच दिन बीत गए। हड़ताल चल रही है। पाँच दिनों के बाद शाम को रामू घर के सामने से जा रहा था।

पुष्पा ने उसे बुलाया। “आप हमारे घर आये बिना जा रहे हैं?” “फिल्म देखने जा रहा हूँ।" “अकेले!”

“साथ में कोई नहीं है।” “मैं आऊँ?” हँसते हुए उसने पूछा। “आपके पति।|” "गाँव गए हैं। कुछ काम था।”

“सच! आप आएँगी?” नहीं आएँगी, एक विश्वास। मगर आएगी तो कितना अच्छा होगा। क्यों नहीं आ सकती?” “आइए।” घर को ताला और दोनों लगाया फिल्म देखने के लिए निकल पड़े। बीच में भास्कर मिला। “रामू आज क्या हुआ पता हैं? मालिक के गुंडों ने सत्यम को पीटा ।” "उफ्…” “हड़ताल चल रही है। तुमने लीडर होकर भी सम्बन्ध तोड़ दिया। “ऐसा नहीं है।' "आज मीटिंग दस बजे है आओगे?” “हाँ आऊँगा” “क्यों डर रहे हो?” “नहीं ।” स्वर में थोड़ा कम्पन । “ठीक है।” भास्कर चला गया। पीछे से आनेवाली पुष्पा ने उनकी बातें सुनी। अब फिल्म नहीं जाएँगे। आप मीटिंग में जाइए । मीटिंग का नाम सुनते ही रामू को डर लगने लगता है। उसे मालिक के गुंडे आते-जाते समय मारेंगे तो?

“आधी रात को मीटिंग है।” वह झूठ बोला। सिनिमा देखने के बजाय दोनों घर लौटे। “एक बात है पुष्पा।” कुर्सी पर बैठते ही रामू ने कहा। “क्या बात है?” “तुम्हें प्यार करता हूँ। “प्यार! आश्चर्य है।” "इसमें आश्चर्य क्या हैं? सच है।” "प्रेम है या कामुकता?” भौंचक्का रह गया रामू। “रामू! एक बात कहना चाहती हूँ। प्यार-व्यार मुझे पता नहीं है। तुझमें असंतृप्ति है। चरम बिन्दु का अनुभव दोनों को नहीं है मुझे मातृत्व चाहिए। इसलिए तुम्हारे साथ…” सर झुकाकर उसने कहा। रामू के मानस समुन्दर में लहरें उठ रही हैं। “आप मीटिंग में नहीं जाएँगे?” रामू को डर लगा। मीटिंग तो रात को दो बजे है। पुष्पा उसे इसलिए प्यार करती है कि वह हड़ताल चला रहा है। वह लीडर है सहदय है। महान है।

भोजन करते ही दोनों के लिए एक ही जगह बिस्तर लगाया। डरपोक रामू! “अगर आपके पति आजाएँगे तो!” "मैंने कहा न! दो दिन तक वे नहीं आएँगे।' उसने अपने बालों में लगाये गये मोगरे के फूलो को निकालकर बिस्तर पर बिखेर दिया। बिस्तर पर पुष्पा, रामू। रामू ने पुष्पा को और-और नज़दीक लिया। अगर उसका पति आएगा तो… वह पकड़ा जाएगा… पुष्पा को वह पीटेगा. .. उसे मारेगा। अगर पुष्पा को घर से निकाल दिया तो… तो… उसके पीछे पुष्पा… क्या वह सहन कर सकता हैं? डर… डर… अब उत्त्साह नहीं है। पाँच मिनट… आधा घंटा… रामू में कोई हलचल नहीं न मन में उमंग… न तरंग… पुष्पा ने उसे और-और पास लिया। रामू के चेहरे पर कोई हाव-भाव नहीं है, न मन में कोई लहरें… न उन पलों में कोई आनंद…। वह उदास है। “क्या? ये ही वे पल हैं जिनका हम आनन्द ले सकते हैं। खुशी से उड़ान भर सकते हैं।' “डर लग रहा है।' “तुम पागल हो। वे नहीं आएँगे ।” रामू को पुष्पा ने सीने से लगाया।

रामू एक पुतले की तरह, पत्थर की तरह रह गया। पुष्पा ने ब्लाउज़ निकाल दिया। पुतले में, पत्थर में न कोई उद्वेग, न कोई हाव-भाव। वह निवस्त्र हो रही है। वह देख रहा है। वह डर रहा है। अगर उसका पति आ जाएगा तो… उसके पति का रूप, रंग, स्मृति में नहीं है। फिर भी एक आकार आँखों के सामने घूम रहा है। रामू के सारे विचार पति पर, पत्नी का शरीर उसके आलिंगन में… सारे विचारों का जड़ देह है। देह में गर्मी नहीं है। मन में न लहरें उठ रही हैं न नस-नस में प्रेम ज्वर और न कोई काम चेतना।

“क्यों रामू! क्या हुआ? चरम बिन्दु पर पहुँचना हमारे भाग्य में नहीं है?” पुष्पा अब सहन न कर सकी।

वह निर्वस्त्र है रामू के सामने। बाजू के कमरे में घड़ी की घंटियाँ बज रही हैं। बारह बज गए। आग नहीं सुलग रही है। लकड़ियाँ हैं तो आग सुलगती है। किन्तु लकड़ियाँ भी नहीं हैं। केवल राख...राख...

बॉड़ी, ब्लाउज़, लहंगा, साड़ी उसने फिर से पहन लिया। “अब जाइए...” उसने दरवाज़ा खोल दिया।

क्रोध उसमें फफक रहा था। असंतृप्ति उसे खा रही है। वह कितना डरपोक है... उसकी आँखें लाल हो गईं।

“आप इतने डरपोक हैं मैंने कभी सोचा तक नहीं!” “सॉरी! फिर एक बार!” फिर और एक बार... नहीं...नहीं... मुझे मातृत्व नहीं चाहिए। अगर प्राप्त हुआ तो भी तेरे जैसे डरपोक पैदा होंगे। ऐसी डरपोक संतान का होना न होना एक बराबर है। कोई फरक नहीं पड़ता।” उसने दरवाज़ा बंद कर दिया। रामू को ऐसा लगा कि वह अपमान के पत्थर पर लुढ़क रहा है। वह पथ पर चल रहा है। मन उदास है। वह दुःख-दर्द ग्रस्त है। सामने भास्कर। “मीटिंग में क्यों नहीं आया?” वह मौन रहा। “तुम डर रहे हो न!” रामू चुप है। हड़ताल चलानेवाले लीडरों में तुम एक हो। तुम डरपोक हो। दो लीडर मर गए। तुम भी मर गए हो, हम ऐसा ही सोचेंगे।” कहते हुए भास्कर चला गया। "क्या मैं मर गया?' सोचते हुए रामू वहीं राह पर रुक गया।

अनुवादक : डॉ. टी. सी. वसंता

डॉ.टी.सी. वसंता जी का जन्म सन् 1950 ई. में हैदराबाद में हुआ। आपने उस्मानिया विश्व विद्यालय से एम.ए. किया और 1996 में पी.एचडी. मराठवाड़ा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद से। आपने इलाहाबाद से साहित्य रत्न की उपाधि प्राप्त की। आपके पति श्री कामेश्वर सोमायजी के प्रोत्साहन से आप साहित्यिक क्षेत्र में आगे बाद पायी है।

आपके 4 हिंदी-तेलगु की मौलिक रचनाएं है। तेलगु, हिंदी, मराठी तथा अंग्रेजी की अनुद्दित पुस्तको की संख्या 14 है। आपकी मौलिक रचना ‘विद्रोही वसुंधरा’ (सैनिक तथा स्त्री विमर्श) काफी चर्चित एवं प्रंशसित रही है। तेलगु रचना ‘भूतल स्वर्गमलो गायपद्द वसंतम’ पढने के बाद कई सैनिको ने इन्हें पत्र लिखा। इसको मराठी अनुवाद प्रकाशित हो चुका है, अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशाधीन है।

तेलगु के प्रसिद्ध लेखक स्व. गुडीपाटी वेंकटचलम की जीवनी ‘रमणी’ से रमणाश्रम तक’ शीर्षक से लगभग 1400 पृष्ठ की पुस्तक तीन भागों में प्रकाशित हुई है। फिलहाल वे ‘गीतवसंत कवि नीरज’ के नाम से स्व. गोपालदास नीरज की समस्त रचनाओ का तेलगु में विश्लेषण कर रही है। वे कई प्रमुख संस्थाओं दे पुरस्कृत एवं सम्मानित हुई है।

कहानी

आहार यात्रा

डॉ. ए.एम. अयोध्यारेडडी

सिद्दिपेट के सरहदी गाँव मिट्टपल्ली में सन् 1955 ई, में अयोध्या रेड्डी जी का जनम हुआ था। उस्मानिया वि.वि. से आपने राजनीति शास्त्र में एम. ए., पी.एचडी. की उपाधि प्राप्त की। 30 वर्ष तक दक्कन क्रॉनिकल में जर्नलिस्ट ग्रुप में काम करने के बाद सेवा-निवृत्त हुए। अब तक 50 से भी अधिक कहानियाँ, साहित्यिक निबंध, पुस्तक समीक्षा, सिनेमा समीक्षा पर भी लिखते रहे। 'गुगि' द्वारा लिखे गए 'वीप नॉट् चाइल्ड' का तेलुगु अनुवाद भी प्रकाशित हुआ है। 'आहार यात्रा' के नाम से प्रथम कथा-संकलन का प्रकाशन भी करवाया।

पृथ्वी और आकाश के बीच, वर्षा की बूँदों के संबंध टूटे, यह दूसरा दिन... हफ्ते भर से गायब सूर्य आज बादलों से बाहर निकलने के लिए खूब छटपटा रहा है। परिसरों में अभी भी नमी है। सड़क पर और सड़क के बगल वाले कीचड़ के गड्ढे लंबे समय तक नहीं भरनेवाले फोड़े जैसे हैं।

ईरानी होटल के द्वार की आखरी सीढ़ी के बाएँ कोने के छोटे से छेद से एक चींटी झट से बाहर निकल पड़ी। दो पल के लिए सावधानी से परिसरों का मुआयना कर, धीरे से आगे बढ़ी। इतने में एक और चींटी जल्दबाज़ी में पहली चींटी से आ मिली।

इस शांत वातावरण में दोनों चींटियाँ, दीवार से सटकर उलझे धागों सी आगे बढ़ रही हैं। नीचे की सारी ज़मीन बारिश के पानी से भीगकर कीचड़ से भरी है। ऊँचे और नीचे जगहों को और छोटे-छोटे पानी के कुंड़ों को ध्यान से देखती दोनों चींटियाँ काजल की लकीर जैसे पैरों से एक-एक इंच पार करती आगे बढ़ती जा रही हैं। उनमें छोटी चींटी, बार-बार जल्दी-जल्दी हिलती उत्साह के साथ आगे बढ़ती जा रही है। ऐसे चलने में उसे काफी उमंग आ रहा है। पीछे-पीछे बड़ी सावधानी के साथ परिसरों पर ध्यान देती आ रही पहली चींटी 'नीली' ने छोटी की जल्दबाज़ी की चाल को देख, घबराती हुई कहा- “अरी ओ छुटकी! ज़रा आहिस्ता चारों ओर देखती चल! तेरी जल्दाबाज़ी के मारे किसी के नीचे आकर बेमौत मारी जाएगी।” चेतावनी देती आ रही है। बहन की बातों को बिलकुल बेखातिर करती जा रही है छुटकी चींटी। उछलते-उछलते आगे बढ़ रही है; बीच-बीच में उसी रफ्तार से पीछे आकर, बहन के चारों ओर एक चक्कर मारकर, फिर से फुर्ती से आगे दौड़ती ही जा रही है। “बोलने से सुनती नहीं निगोड़ी कहीं की...! वैसे ही दौड़ते-दौड़ते क्या बीच में ही मौत को बुला लेगी...?”

चिल्ला-चिल्लाकर, नीली चींटी का गला दुख रहा है। लेकिन छुटकी का फुदकना कम नहीं हुआ। छुटकी को बाहर ले जाना नीली के लिए बिलकुल अच्छा नहीं लगता। घर पर माँ ने भी मना किया था। पर छुटकी सुनी ही नहीं।हफ्ते भर से हुए बारिश के मारे चींटियों का पूरा आवास बाढ़ से भर गया। अपने घर में इक्कट्ठा किया हुआ थोड़ा बहुत आहार को छोड़, सारी चींटियाँ अलग-अलग दिशाओं तितर-बितर हो गईं। उस गड़बड़ी में बिछड़ गया नीली चींटी का पिता फिर से दिखा नहीं। पानी निकलने के बाद घर पहुँची तो कुछ भी बचा नहीं। माँ और बेटियाँ अपने पिता का राह देखती रहीं। लेकिन वह लौटा ही नहीं। किसी ने पिता चींटी के बाढ़ में बह जाने की बात कही तो किसी और ने कहा कि किसी दुर्घटना में पिसकर मर गया।

नहीं-नहीं यह भी अफ़वाह फैली कि रानी चींटी के आवास में आहार पहुँचाते समय कुछ तकरार होने की वजह से सैनिक चींटियों ने उसे खतम कर डाला। इन सारे अनुमानों को एक ओर रहने भी दें, पर नीली चींटी एक बात ज़रूर समझ गई कि अपने पिता लौटने वाला नहीं। ऐसे ही चार दिन बीत गए। पाँचवें दिन अब रहा नहीं गया और नीली चींटी बाहर निकली कि कुछ न कुछ खाने के लिए ले आऊँगी। पिता की यादें मन को मरोड़ते जाने के कारण, कुछ अनमन होकर चल रही थी। आँखों से टपकते जा रहे आँसुओं को पौंछने पर भी उसका ध्यान नहीं गया। “दीदी रो क्यों रही है...? बाबा की याद आई क्या?” छुटकी की इन बातों से चौंककर उससे बाहर निकली। अपने आँसुओं को पोंछ रही छोटी बहन के कोमल हाथों को नीली प्यार से चूमी। “बाबा कहाँ गए दीदी?” छुटकी ने अपने बहन के बगल में चलते पूछा। “मालूम नहीं! बाढ़ के मारे हमारे घर बह गए। अभी तक नहीं आया। कहाँ होगा, कैसे होगा? कुछ नहीं पता... ।” “बोल रहे हैं कि बाबा को किसी ने मार डाला...? कया सच्ची में बाबा मर गए दीदी?”

इस प्रश्न का उत्तर नीली चींटी तुरंत नहीं दे पाई। “बाबा मरे नहीं। जल्दी ही वापस आ जाएँगे।” उसने कहा। “सैनिक चींटी कौन होते हैं दीदी?” फिर से छुटकी का प्रश्न। उन्हें पुलिस कहते हैं। वे सब रनवास में रहते हैं ।" “रनवास याने?” “रानी चींटी का आवास।” “वह कहाँ हैं... हम एक बार चलेंगे दीदी ।” बड़ी उत्सुकता से छुटकी चींटी ने पूछा। “हमें वहाँ नहीं आने देते छुटकी! केवल काम करनेवाली बड़ी चींटियों को ही असमें प्रवेश मिलता है।”

“क्या काम करना होगा वहा?” “एक नहीं... घर की सफाई करना, सड़कों पर झाड़ू लगाने से लेकर रनवास के सारे काम करने पड़ते हैं। इन सब से ज्यादा महत्त्वपूर्ण काम यह है कि शाम होने तक प्रतिदिन थोडा-बहुत आहार को जुटा कर वहाँ पहुँचाना पड़ता है।” “उनको यह कैसी बीमारी?... क्या अपना खाना वे लोग नहीं जुटा सकते?... उनके लिए हम क्यों काम करें? “चुप झगडालू कहीं की !... ज़रा धीरे से बोल! कोई सिपाही चींटी सुन लेगा तो हमें जीने नहीं देगा। रनवास का मतलब जानती है?... वह सरकार है। यानी वहाँ रहनेवाले पूरे लोग सरकारी लोग हैं। वे काम नहीं करते। न ही करना चाहिए। अपने आवास में रहने वाली पूरी गुलाम चींटियाँ हैं। हाँ वैसे हमारे लिए एक इज्ज़तदार नाम भी है- श्रामिक चींटियाँ।

सारी श्रामिक चींटियों को रनवास में रहनेवाली सरकारी चींटियों के लिए भोजन जुटाकर लाना पड़ता है। अगर वे दया दिखाकर कुछ देंगे तो हमें वही खाना पड़ेगा ।” “भूखे पेट से हम यहाँ-वहाँ भटकते, आहार इक्कट्ठा करके उन्हें देना हैं? उनकी दया पर मिले बचे खुचे खाने को हमें खाना है? धत् हमारी ज़िंदगी भी कोई ज़िंदगी है?” छुटकी चींटी ने अपी नाखुशी दिखाई। अपनी दीदी से और कुछ पूछे बिना गुस्से से आगे निकल गई। नीली चींटी की नज़र अचानक दो कदम आगे पड़े सफेद आका पर पड़ी। छुटकी को चेतावनी देती हुई अपनी चाल को को धीमी कर दी। बहुत बड़ा आकार है। जब तक नीली चींटी ने अपनी आँखें उठाकर ऊपर नहीं देखा, तब तक वह पूरा दिखा ही नहीं। छुटकी ने भी इसे देखकर डरके मारे उपनी बहन के पीछे आप को छिपा लिया। अपनी चाल चाल को रोककर, चारों ओर बड़ी सावधानी से नीली परखी। आसपास जहाँ तक उसकी नज़र पड़ी, वहाँ तक कोई खतरा नहीं दिखा।

अचानक हवा का झोंका। दीवार के ऊपर वाली खिड़की से अचानक किसी ने कचरा फेंका। डर के मारे जहाँ खड़ी है, वहीं पर नीली चींटी चिपक्कर रह गई। पल भर के बाद आँखें खोलने पर उसने देखा कि अभी जो सफेद आकार दिखा था वह बिलकुल करीब आ गया। उसे देख छुटकी चींटी डर के मारे चीखकर वहाँ से तेज़ी से भाग निकली।

नीली के दिल की धड़कन बढ़ गई। सामने का पहाड़ जैसा आकार क्या हो सकता है, वह समझ नहीं पाई। दो मिनट के बाद वह हिले-डुले बिना उसी जगह पर रहने के कारण धीरज बाँध कर, उस आकार के और करीब गई। उसके चारों ओर दो-दो बार चक्कर काटी। कुछ जानी-पहचानी गँध! उसके नाक ने पहचाना नीली ने गहरी साँस ली और उस गँध का समझते ही खुशी के मारे उछल पड़ी। वह एक रोटी का टुकड़ा है। पहाड़ ज़ितना आकार! नीली चींटी उसके और करीब जाकर, उस पर हाथ फेरकर देखा। हाँ-हाँ! यह तो रोटी ही है नरम भी है।

नीली की खुशी का ठिकाना नहीं रहा। उनके अपने आवास की सारी श्रमिक चींटियों के लिए कम-से-कम दो दिन तक यह भोजन चलेगा। इतनी भारी मात्रा में आहार को एक ही जगह पर पाने के कारण नीली ने गर्व का अनुभव किया। उसी खुशी में उसे अपनी बहन की याद आई और उसने चारों ओर देखा, छुटकी कहीं दिखी नहीं ।

पूरे प्रदेश में उसने चक्कर काटा। कहीं भी छुटकी का अता-पता नहीं। नीली चींटी घबरा गई। उसे समझ में नहीं आया कि एक ओर इतनी बड़ी मात्रा में भोजन मिलने पर खुश हो जाऊँ या बहन के न मिलने के कारण घबराऊँ।

उस प्रदेश में अब अकेली रहने में डर लगा और अपने आवास की ओर दौड़ लगाई। और अपने आवास की ओर दौड़ लगाई। उस आवास पर रहनेवाली सारी चींटियाँ श्रामिक वर्ग ही हैं।

तकरीबन सबकी समस्याएँ एक जैसी ही होना, दिन-रात एक ही हुकूमत के नीचे काम करना और भूख का रोग- सबके लिए आम बात थी। इन कारणों से सारी चींटियाँ एक जुट होकर आपस में मदद करती रहने लगीं ।

नीली चींटी दौड़ते-हाँफते अपने आवास पर पहुँची। उसने देख कि अपने घर के आगे काफी जमघट लगी है। इतने सारे लोग अपने घर के सामने क्यों जमा हुए होंगे, उसे समझ में नहीं आया। आश्चर्य के साथ-साथ उसे डर भी लगा। “कहीं छुटकी को कुछ हुआ तो नहीं?...' यह विचार मन में उठते ही नीली चींटी एकदम से घबराहट के साथ आगे बढ़ी।

काफी दूर से ही सारी चींटियों ने नीली को देखा और सामने आकर घेर लिया। माँ चींटी ने उसे गले लगाया! बोली- “शुकर है तुझे कुछ नहीं हुआ. .. हम सब घबरा गए थे...!”

“डर की क्या बात है माँ?” “ऐसे क्या पूछ रही है?... छुटकी ने बताया था कि तुम पर किसी भूत ने हमला किया। उस भूत को देखकर डरके मारे तेरी बहन घर वापस दौड़ी आई। उसकी बातें सुनने के बाद हमारे हाथ-पैर तो हिले ही नहीं। तेरी माँ तो रोती ही जा रही है...” उस झुंड की एक बुजुर्ग चींटी ने कहा।

नीली सारी बातें सुनकर ज़ोर से हँस पड़ी । सारे लोगों को अपनी ओर अजीब ढंग से देख हँसी को रोककर वहाँ की सारी बात बताई। “क्या तेरी बात सच्ची है...? तूने वाकई में वहाँ रोटी ही देखी थी?” एक बुजुर्ग चींटी ने कुछ-कुछ संदेह से पूछा। “माँ की कसम दादा...! सच्ची में वह पहाड़ जितनी बड़ी रोटी ही है अपने पूरे मोहल्ले के लिए दो दिन तक भोजन के बारे में चिंतित होने की जरूरत नहीं। मेरी बात सुनकर पूरे लोग वहाँ जल्दी चलो। बड़ी जात की चींटियाँ... सिपाही चींटियों की नज़र पड़ेगी तो, बस समझ लो हमारे मुँह में खाक!” नीली चींटी इन सभी को जल्दी-जल्दी निकलने के लिए बोलती रही।

सारी चींटियों ने हर्ष प्रकट किया। कुछ चींटियों ने नीली को प्यार से चूमा भी।

पल भर में यह खबर सारे मोहल्ले में फैल गई। छोटी-बड़ी सारी चींटियाँ झुंड में आगे बढ़ीं । नीली आगे-आगे रास्ता दिखाती चल रही है तो पीछे-पीछे दूसरी चींटियाँ तेज़ रफ्तार के साथ चलकर, ईरानी होटल के पीछे की कचरे के ढेरके पास पहुँचीं। नीली चींटी ने जिस आहार को देखा था, वह अभी वहीं पड़ी है। सारी श्रामिक चींटियों की ओर अभिनंदन करने के अंदाज़ में देखा। अब आहार के उस पर्वत को वहाँ से रवाना करने के लिए व्यूह भी रच दिए। सारी चींटियाँ रोटी को पकड़कर गोलाकार में खड़ी हो गईं। अगले पल अपनी मंज़िल की ओर निकलने ही वाले थे कि... इतने में...

“रुको! किसी को यहाँ से हिलना नहीं चाहिए यह आहार हमारा है!” बिजली की कड़क जैसा स्वर सुनाई पड़ा। एकदम से चौंककर श्रामिक चींटियों ने उधर देखा-बड़े से चऊंटों की सेना, बड़ी फुर्ती से सामने आ खड़ी हुई।

देखते-देखते वे सारी चींटियाँ रोटी के चारों ओर वृत्ताकार में खड़ी हो गईं। उनके बरताव से लग रहा था कि वे लड़ने के लिए तैयार हैं। "यह हमारा आहार है। रास्ते से हटो ।” चऊँटे के नेता ने ऊँचे स्वर में कहा।

इस धमकी से, रोटी को पकड़ी सारी चींटियाँ उसे छोड़कर खड़ी हो गई। सबसे पहले नीली चींटी संभल कर बोली- “इस आहार को सबसे पहल मैंने देखा है। इसे देखते ही हमारे इलाके में जाकर अपने लोगों को बुला लाई इसलिए यह आहार हमारा ही है।” “क्यों रे पोरी...! खूब चहक रही है...? तेरी मन गढ़ंत बातों को यहाँ सुननेवाला कोई नहीं। तेरे से पहले इस रोटी को हमने देखा था। यहाँ से हटेंगी... या... नहीं...?” आँखें दिखाते चऊंटे ने कहा।

“नहीं-नहीं मैंने इसे पहले देखा है। इसे यहाँ देखते समय तो यहाँ कोई नहीं था। हमारे भोजन को हड़पना अन्याय है....” “हाँ-हाँ अन्याय है...” बाकी चींटियों ने नीली का साथ दिया।

“चुप बड़े आए हमें न्याय बताने वाले...” चऊंटे ने ज़ोर से चिल्लाया “यह हमारा आहार है। हम जो कहेंगे, वह न्याय है। बलवान जहाँ रहता है, न्याय भी वहीं रहता है। जा-जा, जहाँ चाहे वहाँ जाकर शिकायत कर... अब चल फुट यहाँ से।"

नीली चींटी को समझ में नही आया कि क्या करें? अपने लोगों की ओर उसने देखा। सबके सब बड़ी असहाय दृष्टि से देख रहे हैं। आखिर कोशिश की तौर पर दो कदम आगे जाकर उन चींटियों के नेता चऊंटे के सामने गिड़गिडज्ञती हुई बोली- “साब जी! सच्ची में यह हमारा ही है। हमने ही पहले इसे देखा है। एक बार हमारें लोगों के पेट देखिए कैसे पीठ से चिपक गए हैं। चेहरे देखिए कैसे मुरझा गए हैं। बाढ़के मारे हमारा पूरा इलाका बह गया है। पाँच दिन से लोग फाके पर ही हैं। हम पर रहम दिखाइए। अगर आप इस रोटी को ले जाएँगे तो हम सब भूख के मारे मर जाएँगी...”

“क्या... मर जाओगे...? आराम से मरो!” कहते चऊंटे ने ठहाका मारा। “काफी देर हो गई... हूँ... देख क्या रहे हो... आहार को खींचकर ले चलो।” का आदेश नेता चऊंटे ने अपने लोगों को दिया। नीली चींटी बड़ी असहाय स्थिति में रह गई। मुँह तक आए भोजन को चुटकी में उड़ा ले जा रहे नेता के झुण्ड को देख श्रामिक चींटियों का दिल जलने लगा।

अपने से बलवान हो सकते हैं...। हो सकता है कि बड़े जात के हैं । लेकिन भूख के लिए जात का भेदभाव नहीं होता। हमारे भूखे पेटों पर मार रहे हैं तो क्या केवल देखते रह जाना हैं?... इस अन्याय को क्यों होने देना हैं?...

भूख के साथ क्रोध के कारण श्रामिक चींटियों की आँखें लाल हो गईं। एक संकल्प के साथ मुट्ठियाँ कस कर बँधी गईं। नीली चींटी ने इसे पहचाना। चऊंटों के झुण्ड की ओर बड़े साहस के साथ देखते हुए कहा- “रुको... तुम बड़े लोग हो सकते हो। लेकिन जुल्म कर हमारे भोजन छीनकर ले जाते देख हम चुप नहीं रहते अगर हमारे पसलियों में ताकत है तो मारे पेट में भूख है। हमारी भूख की लपट आग बरसायेगी। उसकी ताप में तुम लोग जलकर राख हो जाओगे। सीधा यहाँ से निकलो।”

नीली चींटी की इस चेतावनी से चऊंटों के क्रोध का पारा चढ़ गया। कुछ और सोचे बिना वे श्रामिक चींटियों पर टूट पड़े दूसरे ही पल, वहाँ रणभूमि का वातावरण छा गया। पसलियों से शक्तिमान चऊंटों और साहस से आगे बढ़ रहे श्रामिक चींटियों के बीच घमासान युद्ध हुआ। थोड़ी ही देर में वहाँ लाशों का ढेर जमा हो गया। उस युद्ध में सैंकड़ों श्रामिक चींटियों की मृत्यु हो गयी और बाकी चींटिया भाग निकलीं ।

सारे चऊंटे जीत की खुशी में उछलने लगे। युद्ध में हमारी जीत हुई है। यह आहार अब हमारा है चलो! चऊंटों के नेता ने ऊची आवज में आदेश दिया। अपने नेता के आदेशानुसार रोटी की चारों ओर पड़ी श्रारमिक चींटियों की लाशों को चऊंटों ने हटा दिया। आहार ले जाने के लिए योजना तैयार हुई चऊंटों के पकड़ में आने के कारण रोटी आहिस्ते से सरकी। इतने में... अचानक रोटी हवा में उठी। डर के मारे चीखकर सारे चऊंटे तितर-बितर हो गए।

रोटी से साँप जैसी लिपटी पाँच उँगलियाँ... उन उँगलियों का हाथ, ऊपर उठा और देखते-देखते गायब हो गया। वहाँ से निकलते उस मानव भूत को, असहाय स्थिति में, आँसू भरी आँखों से चऊंटे देखते रह गए।

अनुवादक : **डॉ. सुमनलता रुद्रावझला**

डॉ डॉ. सुमनलता जी का जन्म वाराणसी में 5 मार्च 1953 ई. को हुआ। इन्हें एम.ए. हिन्दी में स्वर्णपदक मिला। इन्होंने एम.फिल., पी.एचडी. तथा पोस्ट डॉक्टोरल फेलोशिप उस्मानिया विश्वविद्यालय से किया। वे हिन्दी महाविद्यालय के हिन्दी विभाग के रीडर के रूप में सेवानिवृत्त हुईं है। अध्यापन एवं अनुसंधान में आपको 30 वर्षों का अनुभव है। आपने 5 विद्यार्थियों को पी.एचडी. उपाधि प्राप्त करने में मार्गदर्शन दिया है। आपके 35 से अधि कि शोध पत्र प्रकाशित हुए हैं। अनुवादों में सहलेखन की संख्या 4 तक है। आपने तेलुगु से हिन्दी में 9 ग्रंथों का अनुवाद किया है। 5 पुस्तकों का हिन्दी से तेलुगु में अनुवाद किया है। आप आकाशवाणी, दूरदर्शन और मंचों पर सक्रिय रही हैं। आपने राष्ट्रीय स्तर के चार पुरस्कार ग्रहण किये हैं। रेडियो मॉरिषस ने इनका साक्षत्कार प्रसारण किया है। वे मारिषस में भी आप सम्मानित हुई हैं।

चेरबंडा राजु (बद्द भास्कररेड्डी)

कवि और कवि गायक के रूप में चेरबंडा राजु बहु प्रसिद्ध हुए हैं। 'गोलकॉडा पत्रिका', 'आन्ध्रभूमि' आदि पत्रिकाओं के कथा-क्षेत्र में आपका समुन्नत स्थान रहा है। हैदराबाद के दिगंबर कवियों में शामिल होने के बाद भी आपने अपनी इस प्रक्रिया को ज़ारी रखा। 'मा पल्ले' (हमारा खेड़ा) उपन्यास के साथ-साथ आपके नाटकों को भी साहित्य-समाज में समुचित स्थान प्राप्त हआ है। 'चिरंजीवि' के शीर्षक से आपकी कथा-संकलन का प्रकाशन 1985 में हआ।

स्टीरिंग के सामने अनजाने में ही काँप रहा था खासिम। इन इलाकों में कई बार आने के बाद भी हर बार उसे नया ही लगता था। गड़ढ़ों से भरी मिट्टी की सड़क। कभी-कभी जीप ऐसी उछल पड़ती कि स्टीरिंग हाथ से फिसल जाता। घनी ओस की भाँति अकाश में उड़ रही थी लाल धूल । अब तक पाँच-छह बार पोछा होगा 'उसने आईने पर पड़े उस लाल धूल को। ठंड भी खूब लग रही थी। कोई भय उसके नसों को कँपित कर रही

थी। पेट्रोल की बू पेट से कै आने की संभावना को बढ़ा रही थी। ठंड या भूख किसी से भी हार मानना दंडनीय अपराध होगा। होशियारी से गाड़ी को चला रहा था खासिम। उसकी बगल में बैठे डी.एस.पी. की चमगीदड़ सी मूँछों की चुरुट की दुर्गंध कँपा रही थी। अपने एक हौथ को पिस्तौल पर रख मूर्तिवत् बैठा वह धूल को चीरकर आगे देख रहा था। उनके निकट चौदह साल का एक लड़का बैठा हुआ है। वह निक्कर और बुश्शर्ट पहना हुआ है। सदा मुस्कुराने वाले उसके पतले औठ किन्हीं गीतों को गुनगुना रहे हैं। उसकी दूसरी ओर मशीन गन लिए एक और इन्स्पेक्टर बैठा हुआ है। दो भीमकाय शिलाओं के बीच से फेंके गये घास के फूल की भाँति धैर्य के साथ बैठा हुआ है रामबाबू। मशीन गन को बाहर की ओर लक्ष्य कर उसी ओर एकटक देखने वाले इन्स्पेक्टर को देख मन-ही-मन हैँसा रामबाबू "साहब! यह मैदानी प्रांत है। इतना डरने की जरूरत नहीं है।" उसने कहा। "बेवकूफ! मुँह बंद कर" गरजते हुए कहा मशीन गन वाले शिवलिंगम ने। लोड किये हुए बन्दूकों को लेकर छः पुलिसवाले अपने प्राणों को हथेली पर रखकर बैठे थे। भीतर ही भीतर हर कोई डर रहा था, ठंड से या डर के कारण - पता नहीं! एक-दूसरे से सटकर बैठे हुए थे। मील या दो मील पर एक खेड़ा, खेतों में काम करते किसान, जीप की आवाज़। उनके सर उठाते ही पुलिस के हाथ अपने-अपने शस्त्रों के ट्रिगर को थाम लेते। लाठी के साथ जब कोई ग्वाला दर्शन देता या जब बच्चे खेलते दिखाई देते, मजदूर हँसियों को लेकर दिखाई देते तब जीप में हलचल पैदा हो जाती। सामने से आता एक राहगीर सूर्य के आगे अपना हाथ फैलाकर जीप को देखते ही रुक गया। एक फर्लांग की दूरी पर थी जीप। राहगीर एक क्षण के लिए रुका, एक पल के लिए पीछे की ओर देखकर पुनः आगे बढ़ा। "जीप आगे बढ़ाओ" हुकुम जारी किया डी.एस.पी. रेड्डी ने। खासिम ने "साब" कहते हुए जीप की तेज़ी को बढाया। उड़ती धूल से उस राही का दम घुटने लगा था

कबड़ी खेलने वाले बच्चे तितर-बितर हो गए। रामबाबू ने हँसते हुए हथकड़ियों वाले हाथों को उठा दिया। उन बच्चो ने हाथ उठाकर इशारा किया। जीप और खेड़े के बीच घना धूल। सामने बैठे हए दो पुलिस इन्स्पेक्टरों ने अंग्रेज़ी में बात कर रामबाबू को जीप के भीतर भेज दिया। 'साब! आप इतना डरते क्यों हैं?" कहते हुए रामबाबू भीतर चला गया। बच्चे की नज़रें तीरों की भौंति थीं। आँखें नक्षत्रों के समान सुन्दर थीं । भोहें झलकी हुई काली स्याही जैसी थी। बेचारा 'इसकी मछें अभी-अभी भीज रही हैं "हमारे बेटे की भाँति ही हँस रहा है"

“ऊँगली भर का है, फिर भी यह नक्सली दल में है?” "हमें मारनेवाला कितनी भी उम्र का क्यों न हो? शत्रु शत्रु ही होता है मेरे बाप!” “हमारे लड़कों ने तो ऐसी देश सेवा में भी भाग नहीं लिया।

अपने-अपने विचार प्रकट कर रहे थे पुलिस वाले। उनकी इस नौकरी में आजादी एवं स्वतंत्रता के लिए कोई स्थान नहीं होता, यह बात वे सभी जानते हैं। ऊपर के अधिकारी की बात ही चलती है। जिसने मुँह खोला उसकी जुबान खींच ली जाती है। विरोध करने वाला डिसमिस। रामबाबू एक-एक के चेहरे की ओर ध्यान से देख रहा था। किसी भी पुलिस वाले के शरीर पर एक किलो मांस दिखाई नहीं दे रहा था। पता नहीं पूरी नींद सोकर इन्हें कितने दिन हुए होंगे, आँखें धँस गयी हैं। गन्ने के डंठल जैसे हाथ बंदूकों को कैसे ढो रहे होंगें! नस-नस बाहर उभरकर धागों की भाँति दिख रहे हैं। किसी के भी मुख पर कांति नहीं है। इन्हें देखकर रामबाबू की आँखों में आँसू आ गए। अपना सिर झुकाकर रामबाबू ने कहा- “पुलिसवालों आप सब गरीब ही हैं।'

सभी पुलिसवालों को लगा कि एक प्रकाश ने उन्हें घेर लिया है, उनकी भूख मिटने वाली है। उन्होंने साश्चर्य रामबाबू की ओर देखा। कान्स्टेबल राममूर्ति को लगा कि हज़ार कंठों ने इसी बात को एक साथ दुहराया है। “बाबू!” अपने पुत्र की गलती करने पर उसे डॉटने वाला प्यार था राममूर्ती की आवाज में। “टू नाट वन! क्या कर रहे हो?” सामने से गर्जना सुनाई दी।

“आवाज़ बन्द करो” आँखें लाल करते हुए हेड ने गुस्से में कहा। “आप केवल नंबर नहीं हैं, आपका भी नाम है” एक हाथ ने नन्हे लड़के का मुँह बंद करके पीछे की ओर घकेल दिया। लेकिन तुरंत ही वह हाथ उस लड़के के घुँघराले बालों को सहलाने लगा। रामबाबू की बातों को सुनने की इच्छा सभी में थी। उनकी निगाहों में करुणा, दया स्पष्ट दिखाई दे रही थीं। राममूर्ति को रामबाबू का कंठ, उसका अभिनय, उसकी प्रज्ञा कैसी है इसकी जानकारी है। उन्होंने अब तक ऐसे लड़के को तो देखा था नहीं सुना था। उसे साहित्य का ज्ञान था, संगीत का ज्ञान था, राजनीति का ज्ञान था। लौकिक ज्ञान भी उसमें भरपूर था।

कोई व्यक्ति रामबाबू को एक बार देख ले तो उसे कभी नहीं भूलेगा। तीन साल पहले विजयवाड़ा के गवर्नर पेट सेंटर में ड्यूटी कर रहे राममूर्ति ने रामबाबू की चारण कथा को सुना था। तबसे उसकी यही धारणा थी।राममूर्ति के कानों में आज भी वह कथा गूँजती है। हिरण-शावक की भाँति नाचते हुए, नृत्य करते हुए तानपुरा बजाते हुए कहानी कहने वाले रामबाबू का रूप, उसकी चमक-दमक, पारे जैसी उसकी तेज़ी, उसकी हँसी, उसका मज़ाक उसकी आँखों में घर कर गये थे। यदि एक गाना रामबाबू से गवाया जाय तो!' राममूर्ति का मन इन्हीं विचारों से भरा था।

घर के पास बेकार ही घूमने वाला मेरा पुत्र किसी काम का नहीं है। वह पाठशाला नहीं जाता। माँ की मृत्यु के बाद वह वहीं गाँव में भटक रहा है। राममूर्ति ने दुबारा विवाह नहीं किया। अपर्याप्त वेतन। रातों में ड्यूटी पर जाकर पत्नी को सुखी नहीं

रख पाया। पत्नी की चिकित्सा के लिए उसके पास पैसे नहीं रहा करते थे। नौकरी मैं छुट्टी नहीं मिल पाती थी। ऐसी स्थिति में उसका निधन हो गया। मरकर वह सुखी हो गयी। जीवित लड़का जीने के मार्ग के अभाव में सुधार के अवसर के अभाव मैं मर रहा है। उसे पुनः शादी की क्या आवश्यकता हैं? अपनी समस्या का समाधान स्वयं उसने अपनी ओर से दिया है।

जब तक पत्नी जीवित थी वह कई बार कहा करती थी कि पुलिस की नौकरी राक्षसों को तैयार करनेवाली है, उसे छोड़ दो। नौकरी को छोड़ने पर रिक्षा चलाना पड़ेगा। किन्तु उसकी आयु उसके अनुकूल नहीं थी। आधे मन से वह स्ट्राइक करने वालों पर लाठी चार्ज करता, शीशे के बोतलों को फेंकता, छात्रों पर बंदूक चलाता। मन पत्थर बन गया था। कितने ही पुलिस के जवानों की भाँति वह भी बैल जैसा जिया करता था। अन्न के लिए सरकार के हाथों की कठपुतली बनकर जी रहा है। उसने कभी नहीं समझा था कि देश के संरक्षक पुलिस ही है। यूँ देखा जाय तो पहला देशभक्त पुलिसवालों को ही होना चाहिए। किन्तु अच्छाई एवं समादर न रखनेवाले डी.एस.पी. रेड्डी को देखने के बाद उसे पता चला कि गलत रास्ते द्वारा कमाने के लिए संपन्न वर्गों के लोग इस विभाग में आकर कितनी क्रूरता बरतते हैं। कान्स्टेबुलों को कितना सताते हैं, इसे राममूर्ति ने अपनी आँखों से देखा।

कभी-कभी अपनी ही बंदूक से आत्महत्या क्यों न कर लें ऐसा विचार मन में आता था। कभी-कभी डकैत ही क्यों न बन जायें यह आकांक्षा जगती थी। कभी चोर बनना चाहा था। हमेशा कुछ-न-कुछ समस्या, बिना आराम की दौड़। श्रीकाकुलम आने के बाद "ज़िंदगी का अर्थ संघर्ष है' यह धारणा बलवती बनी। आत्म रक्षा के नाम पर पुलिस द्वारा किये जानेवाले अत्याचारों की गिनती नहीं होती। इन्स्पेक्टरों की दृष्टि में पुलिस वाले मनुष्य नहीं हैं। कोल्हू के बैल हैं वे। आत्मवंचना से भरपूर इस नौकरी से, इस अभिनय से मुक्ति कब मिलेगी? ऐसा सोचते-सोचते ही राममूर्ति ने दस साल तक नौकरी की। रामबाबू को देखने के बाद उसमें कई भावनाओं ने जन्म लिया। शव के समान जो जीवन था, वह पुनः अंकुरित हुआ सा लगा। मेरे पुत्र छोटे बाबू ही हैं, इस भावना ने उनको उत्साह एवं बल प्रदान किया।

"हाँ बाबू पुलिस वाले गरीब ही हैं, बंदूक तानकर हम पशु बन जाते हैं अन्यथा हम किसी काम के नहीं होते।' आँठों तक आये इन विचारों को राममूर्ति ने रोक लिया। रामबाबू को सांत्वना प्रदान करने का धैर्य दिलाने तरह-तरह की भावनाएँ मन में... जंगल में कुछ दूर जाकर जीप रुक गई। सभी पुलिस 'वाले बंदूकों के साथ तैयार थे। डी.एस.पी. रेड्डी, एस. आई. शिवलिंगम नीचे उतरे खासिम भी बंदूक लेकर तैयार हुआ।

उनके नियमानुसार वे रामबाबू को बीच में चला रहे थे। सामने एस.आई. : पीछे डी.एस.पी. रेड्डी। रामबाबू के हाथ की हथकड़ियाँ झनझना रही थीं। उनकी रगड़ से रामबाबू के हाथ दर्द दे रहे थे। जंगल के खाँसने की तरह बूटों की आवाज़ें।

घने जंगल से प्रयाण। रास्ते पर आगे बढ़ते हुए रामबाबू बोलता जा रहा था। मनुष्य, सच्ची स्वेच्छा, आज की परिस्थितियाँ, राजनीतिक सिद्धांत, सुलह के मार्ग, विश्व भर में प्रज्वलित क्रांति की ज्वालाएँ, संघर्ष, लुटेरे वर्ग आन्दोलनों द्वारा किये जा रहे धोखे, वर्गों में विभाजित होते हुए भारतीय जनता, वर्गों की आवश्यकता, एक नहीं कई चीज़ों के जानकार की भाँति" छोटी आंयु में बोलता जा रहा था। बीच-बीच में हँसी-मज़ाक करते पुलिस वालों के बीच चल रहा था रामबाबू। रामबाबू के पीठ पर बंदूक ताना गया। फिर भी उसमें थोड़ा सा भी डर नहीं था।

मैं देशद्रोही हूँ। चौदह साल का लड़का देशद्रोही! मैं जहाँ साँस ले रहा हूँ वह देशद्रोहियों की सहायता करती है। मैं जहाँ पला-बड़ा हूँ वह भूमि मेरी नहीं है। मेरे गीत मेरी कहानियाँ हज़ारों, लाखों लोगों ने सुना है। जिन्होंने सुना है उन्हें वे दुबारा

सुनायेंगे। मेरे गीतों में जो साहित्य है, सत्य है उसका प्रचार करते हैं। मुझे गायब कर सकते हैं किन्तु मेरे गीतों का क्या कर सकेंगें? आप सरकारी तंत्र में बड़े महत्त्वपूर्ण स्थानों में हैं। हम जनता के पक्षधर हैं। हम जीतेंगे या नहीं यह इतिहास बतलाएगा। किन्तु अनिश्चित, आत्मा जिन्हें नहीं मानती है, वह शत्रु के पक्ष में ठहरकर क्या करेगी? जिस व्यवस्था की परिरक्षा आप करना चाह रहे हैं वही परोक्ष रूप से आप लोगों का खून करती है। सोचिये! बीच-बीच में रुकते हुए, आगे बढ़ते हुए कहे जा रहे रामबाबू की बातों को सभी मौन होकर सुन रहे थे। गंतव्य तक शायद पहुँच गये हैं। इसलिए इन्स्पेक्टर रुक गये।

व्यूह रचना के अनुसार पुलिस वालों ने मोर्चा संभाला हैं। एस.आइ. शिवलिंगम कपट प्रेम दर्शाते हुए कहने लगे- "रामबाबू तुम अभी बच्चे हो। जाने-अनजाने बहुत कुछ बोलते जा रहे हो। तुम्हारी क्या बिसात, तुम्हारी आयु ही कितनी है?"

पार्टी का ज्ञान प्राप्त करने के लिए आयु की आवश्यकता नहीं है साहब। यहाँ स्त्री-पुरुष, छोटे-बड़े का भेदभाव नहीं होता। हमारी पढ़ाई आपकी नीतियों की सीमा में नहीं समाती। वह विश्व व्यापी होती है आपको हमसे सीखना है न कि हमें आपसे। "देखो रामबाबू यदि आप घर जाना चाहो तो हम आपको आपके घर पर छोड़ देंगे। एक पैसा भी खर्च किए बिना सरकारी छात्रवृत्ति से तुम पढ़ सकते हो। अपने माँ-बाप को उदर शोक मत दो। तुमको देखकर स्वयं मेरा दिल दहल रहा है।" उन्होंने कहा। किलकारी मारते हँसते हुए रामबाबू ने कहा- "साहब! आपकी सहानुभूति के लिए धन्यवाद। मेरी बात क्या है, मेरा रास्ता क्या है, मैंने बता दिया है। यही मेरा निर्णय भी है। अब आप ही सोचिए!"

डी.एस.पी. ने कहा- “क्या इतना ही है?” “बिलकुल” “ऐसा है तो अपने नेताओं के अड्डे बतलाओ।” हँसते हुए रामबाबू ने कहा- “साहब! वहाँ जाने के लिए आपमें हिम्मत ही कहाँ है! एक ज़माने में आप लोगों में धैर्य था, आज नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति, प्रत्येक कदम, रास्ते की मिट्टी सब उन्हीं के स्थान बन गये हैं। अगर आप मैं शक्ति है तो आजमा लें। मैं तो यही कहता हूँ। “जरूरत से ज्यादा बोल रहे हो।” “हमारे लिए कोई हद हो, तब न! जरूरत से ज्यादा बोलेंगे पूरी आजादी को चाह कर, जान हथेली पर लेकर संघर्ष करने वाला हर एक आदमी मेरी तरह ही बात करेगा।”

“विश्व के किसी भी पृष्ठ के पलटने पर यही सत्य दिखाई देता है। आप सरकार नहीं हैं। इन बंदूकों को तैयार करनेवाले ही सरकार हैं। आपका शरीर सरकार का नहीं है। आपको यह खाकी कपड़े पहनाने वाले सरकार हैं। आपके द्वारा बंदूक चलाने का धैर्य सरकार नहीं है। ड्यूटी के नाम पर आपको डराकरभून दो या मरो कहकर आपका पीछा कर आपको भगाने वाली सरकार है। आपके मकान एवं कॉलनियाँ सरकार नहीं है। देश की हज़ारों एकड़ ज़मीन को, पूँजी को अपने हाथ में रखकर बड़े लोगों की भाति जो दिखाई देते हैं वे ही सरकार हैं । "यू शटअप ब्लडी” गुर्रति हुए गुस्साया डी.एस.पी. “टू ट्वंटी शूट हिम”

रामबाबू फिर से हँसा और कहा- “साहब! आप मुझे मार सकते हैं। किन्तु न्याय का वध नहीं कर सकते। मेरे सिद्धांतों को नहीं मार सकते। होने दीजिए आपका काम! इतना कहकर वह आँखें बंद करके तनकर खड़ा हो गया। राममूर्ति- “नो सर!” कहते हुए बंदूक नीचे झुका लिया। “वन नैंटी नैन!” “नो सर!”

“टू हंड्रेड" "नो सर!” एक-एक करके सभी पुलिस वोलों ने बन्दूकों को नीचे झुका लिया। इन्स्पेक्टरों ने आश्चर्य से एक-दूसरे को देखा। थोड़ी देर बाद डी.एस.पी. की पिस्तौल “डाम' कहकर बजी। आसमान लाल होकर प्रकाशित होने लगा।काम समाप्त कर जीप पीछे जाने लगी। पानी खत्म हो जाने के कारण, जंगल पार करने से पहले ही जीप रुक गयी। इस जंगल में पानी कहाँ मिलेगा सभी चर्चा करने लगे। अंत में डरते हुए राममूर्ति ने कहा- “जाते समय मैंने देखा था कि इस गलियारे में ही कोई झरना है।' "यदि ऐसा है तो राममूर्ति के साथ 'वन टवंटी नैन' तुम जाओ” कहा एस.आइ. शिवलिंगम ने। "मुझे डर लग रहा है। मैं नहीं जाऊँगा साहब!” कहा उसने। अकेले राममूर्ति के सिवा सभी ने भय की बात कही। "आप सब का काम पुलिस स्टेशन पहुँचने के बाद ही किया जाएगा” कहते हुए डी.एस.पी. रेडडी मूछों पर ताव देते हुए राममूर्ति के साथ निकल पड़ा। पौधे, झुरमुट, रास्ते के गड्ढे पार किया दोनों ने। राममूर्ती के मन में तूफान आरंभ हुआ। उसे लगा कि सारे जंगल में रामबाबू के आते ही प्रतिध्वनियाँ हो रही हैं। क़दम-क़दम पर उसे रामबाबू की हँसी ही सुनाई दे रही है। “डर रहे हो क्या राममूर्ति” कहा डी.एस.पी. ने। “नहीं साहब!”

वे आगे बढ़ रहे हैं। राममूर्ति का मन सरहदों को तोड़कर उफनती हुई आगे बढ़ने वाली नदी सी है। प्रत्येक क्षण रामबाबू आँखों के सामने ठहरकर खिलखिलाता हँस रहा है। लगा कि रक्त के कुंड में लोटता रामबाबू का देह राममूर्ति के जाये हाथ फैला रहा है। धैर्य जुटाकर, बंदूक उठाकर, एक क्षण में डी.एस.पी. रेड्डी को मार दिया राममूर्ति ने। उसकी पिस्तौल छीनकर रामबाबू के मृत देह की ओर दौड़ने लगा राममूर्ति। दो दिन बाद समाचार पत्रों में छपा "संघर्ष में दो नक्सलवादी मारे गये, उनमें एक 44 साल का लड़का था। ऐसा आधिकारिक तौर पर ज्ञात हो रहा है वहाँ एक बन्दूक, दो हथगोले, मावोवादी साहित्य उपलब्ध हुआ है। पुलिस डालों की किसी प्रकार की हानि नहीं हुई है।

अनुवादक : डॉ. टी. मोहन सिंह

डॉ. टी. मोहन सिंह जी उस्मानिया विश्वविद्यालय से सेवा-निवृत्त प्रोफेसर हैं। आपने वि.वि. के हिन्दी विभागध्यक्ष तथा प्रधानाध्यापक के पद-भार को भी सफलतापूर्वक निभाया। आपके मार्गदर्शन में कई छात्रों ने अपने-आपको हिन्दी की सेवा में समर्पित कर दिया, आपके मार्गदर्शन में अनगिनत लोगों ने अपना शोध-कार्य पूरा किया। आपका जनम नगरकर्नूल जिले के वेल्दण्डा गाँव में, स्व. टी. मनीराम सिंह जी के संपन्न परिवार मे **17.7.1943** को हुआ। आप एम.ए. पी.एचडी. और 'संकल्य' त्रैमासिक पत्रिका के प्रधान संपादक हैं। कालोजी के काव्य-संकलन 'मेरी आवाज' में 11 कविताओं के अनुवाद का सहयोग दिया। हिंदी और तेलगु में आपकी दर्जनों मौलिक रचनाएं छप चुकी है। फिलहाल आप हैदराबाद के निवासी बन गए है।

दाशरथी कृष्णमाचार्य

आपका जन्म 22 जुलाई सन् 4925 को वरंगल जिले के गूडूर गाँव हैं हुआ था। आप तेलुगु, संस्कृत तथा उर्दू तीनों भाषाओं के प्रकाण्ड पंडित थे। तेलंगाणा मुक्ति आंदोलन में सक्रिय भाग लेकर आपने निज़ाम सरकार कै विरुद्ध संघर्ष किया। सन् 1947 ई. में पुलिस द्वारा पकड़े जाकर 16 महीने जेल की कठोर यातनाएँ सहीं। 'अग्निधारा', रुद्रवीणा', आलोचनालोचनलु. 'पुनर्नवम्', 'महान्थ्रोदयम' आदि काव्य- संकलनों का प्रकाशन भी करवाया सिनेमा-गीतकार के रूप में भी आपने ख्याति प्राप्त की है। आपने कितने ही नाटक तथा कहानियों की रचना भी की है।

घरों के सामने लोग “हल्के रंग' के फूल वाले पौधे लगा रहे हैं।

कितने सुन्दर होते हैं हल्की-सी लालिमा वाले ये फूल! बंगले के सामने लाल साड़ीयाँ पहन कर नृत्य करने वाली अप्सराओं जैसी। हैदराबाद-शहर में इन फूलों के पीछे के महलों में जागीरदार, नंबरदार हुक्का गुड़गुड़ाति जन्नत की ज़िंदगी जीते हैं। इस दुनिया में अगर किसी का जीवन सुखी है तो, वह इन्हीं जागीरदारों और नंबरदारों का है। कहीं सुदूर प्रांत में , किसी जिले मैं किसी तालुके में होते हैं उनके जागीर या नंबर। वहाँ की जनता चाहे जितनी मुसीबतों का सामना करे इनके लाखों रुपये इनके महलों में बिना किसी बाधा के, रुकावट के पहुँच जाते हैं। जनता की मुसीबतों से इनका कोई मतलब नहीं होता। जागीरदार “अख्तर जंग' और उनकी पत्नी बेगम साहेबा एक बार भी अपनी जागीर के दौरे पर नहीं गये। जैसे मौसम बदलता है उसी प्रकार आने-जाने के क्रम में भी परिवर्तन आया। पति का देहांत हो जाना, जागीर की जनता का जेल जाकर वापस आना, जागीर के पेड़ों पर तिरंगा लहराने की अपूर्व घटनाओं का होना जैसी विशेष घटनाओं के होने पर बेगम साहेबा का जागीर में आना कैसे नहीं हो सकता था? उस दिन संध्या के समय बेगम साहेबा गाड़ी से उत्तर कर अपने बंगले में चली गई। पश्चिम की दिशा में खुली खिड़कियों से लाल रंग से भरा आकाश दिखाई दे रहा था। पश्चिमी आकाश के पार लाल रंग के खिले पलाश के फूल दिखाई दे रहे थे। अपने सिर पर विराजमान घूँघट को पीछे की ओर खिसका कर बेगम ने उस दृश्य को देखा। उसके घर के सामने खिले-लाल गुलाबी रंग के फूल से भी कई गुना अधिक लाली।

हैदराबाद के महलो के सामने सुकोमल सूर्य की लाली। फिर भी गाँव के सूर्योदय में इतनी सुन्दरता! क्रम से खिले उन पलास के फूलों में कितना गाढ़ा रंग है? पलास की कलियों में न बुझने वाली अंगारे। छूने मात्र से जलाने वाले उन शीतल अंगारों से भरा यह जंगल कितना सुंदर लग रहा है। खिले हुए पलास के फूलों को बेगम ने इससे पहले कभी नहीं देखा था। इस दृश्य को देख कर वह आश्चर्य चकित रह गई। नवाब की वह छठी बेगम थी। उसकी आयु कम थी, फिर भी भुक्त भोगी होकर हर सुख का उपभोग कर जीवन की हर बात का ज्ञान प्राप्त कर अनुभवी दादी माँ की तरह गर्व के साथ जीती थी, हैदराबाद में। हैदराबाद के वे महल, वे रेडियो, एक से एक बढ़ियां कार, नाच-गाना, नरम-नरम गद्दे, बढ़िया भोजन

कीमती कपड़े, पान मसाला, इतर और बूढ़े पति की काम-वांछा, सैंकड़ों सेविकाएँ, बुरके, परदे... आदि... आदि इन से बढ़कर दुनिया में और क्या विशेषताएँ हो सकती हैं। सोलह जिलों को लूटकर, उस लूट के माल से सुशोभित महा नगर से बढ़कर और क्या विशेषता हो सकती है।

लेकिन महलों के सामने के फूलों के लाल रंगों को पराजित कर वाले इन पलाश के रंगों को देखकर विस्मित रह गई। नगरों की दुनिया से अलग गावों की दुनिया की भी अपनी विशेषता होती है- बेगम ने सोचा। उस दिन शाम के समय चार टोकरों में भरकर पलाश के फूलों को मैंगवाकर देखा बेगम ने। उनका नामकरण किया "अग्नि पुष्प'। हैदराबाद जाते समय इन पेड़ों के बीज या कलम साथ में ले जाने का निश्चय कर या बेगम ने।

दूसरे दिन सवेरे गाँव की घराना महिलाएँ अपनी जागीरदारिनी बेगम साहेबा से मिलने आई। ब्राह्मण स्त्रियाँ वैश्य महिलाएँ सज-धजकर माथे पर बिंदिया धारण कर आई थीं। बेगम साहेबा के घर उन्होंने पानी तक नहीं पिया, वेगम मुस्लिम महिला जो थीं। उन्हें चेतावनी देकर सभी स्त्रियाँ लौट गई।

शाम के समय गाँव की गरीब स्त्रियाँ बेगम साहेबा से मिलने आईं। उन्हें भी महल में प्रवेश मिल गया। फटी-पुरानी साड़ियाँ, पसीने की बदबू, भारी चोटियाँ, जूड़ों के साथ उन्होंने महल में प्रवेश किया। इतनी सारी स्त्रियों में से बेगम की नजरें गौरी से जाकर चिपक गईं। 'इसको यदि सुंदर वस्त्र पहना दिये जाएँ तो यह दुनिया की सबसे सुंदर स्त्रियों मे प्रथम स्थान प्राप्त कर लेगी | इसमें कोई संदेह नहीं।' बेगम साहेबा ने सोचा।

गाँठ वाली चोली, तन को पूरी तरह ढकने में असमर्थ साड़ी, बार-बार कंधे से खिसकने वाला पल्लू कशी हुई छाती तेल संस्कार विहीन लाल जुलफ़ें, गौर वर्ण की शरीर छाया, गाढ़े काले रंग की भोहें, बरौनियाँ, पतली कमर... गौरी की सुंदरता...।

गौरी को देखकर बेगम साहेबा के विस्मय कोई अंत नहीं था। कल देखे गये पलाश के फूलों के साथ स्वर्ण दातान ले फूलों की दुबारा तुलना करके देखा बेगम साहेबा ने। अपनी तुलना गौरी क साथ करके देखा। पलाश जीत गये, गौरी जीत गई। गौरी की दृष्टि बेगम साहेवा के बहुमूल्य वस्त्रों पर बिलकुल ही नहीं थी। उसके महल का उसके लिए कोई महत्त्व नहीं था। कमरे की चिकनी दीवार का सपर्श कर सफेद पर्दे पर चित्र की भाँति दीवार से सटकर एक सुंदर-सी भंगिमा में खड़ी थी गौरी। बेगम साहेबा ने गौरी के पास आकर अचानक उसे अपनी बाहों में भर लिया।

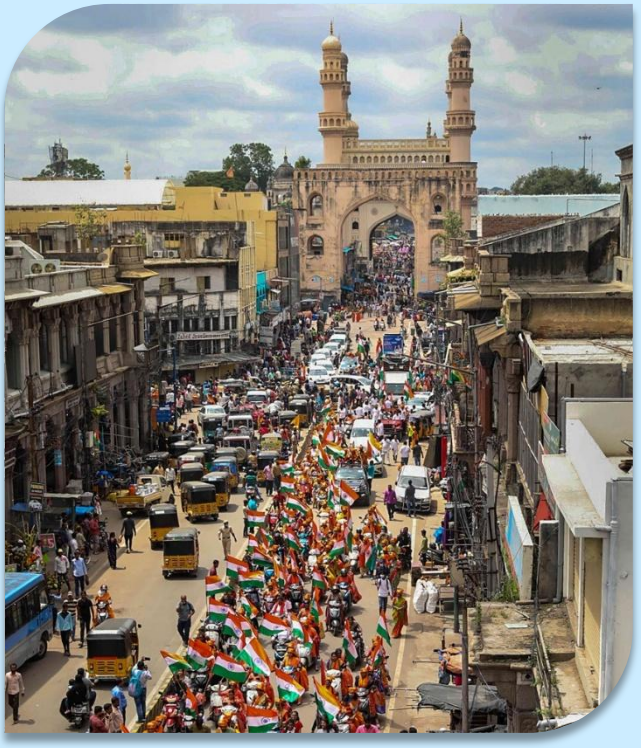

'कितनी अच्छी है, सुन्दर है' बेगम साहेबा ने कहा। गौरी कुछ समझी नहीं। गौरी शर्माकर बेगम की बाहों से छुटकारा पाने के लिए छटपटाने लगी। बेगम झटपट गौरी को अपने शयन कक्ष में ले गई। उस कक्ष के शीशे, पलंग, गद्दे, साड़ियाँ, कीमती चीज़ें इनमें से किसी ने भी गौरी को आश्चर्य में नहीं डाला। बेगम साहेबा ने तुरंत एक संदूक खोलकर, अच्छी साड़ी और चोली निकालकर गौरी को दिया पहनने के लिए। गौरी की साड़ी उतार दी। सभी शीशों में गौरी का नग्न सौंदर्य प्रतिबिंबित हुआ। एक गौरी के दस प्रतिबिंब। बेगम साहेबा ने गौरी को अपने आलिंगन में जकड़ लिया। उसके ओठों पर चुंबन अंकित कर दिया। पैरों के बीच पैर फँसाकर खड़ी हो गई। उसके ओआँठों को अपने गरम-गरम ओंठों से निचोड़ दिया।

गौरी के सारे शरीर को इत्र से लगभग नहला ही दिया। उसे अच्छी साड़ी पहनाकर जूड़े में चार पलाश के फूल खोंस दिए। पश्चिम का आकाश गौरी के जूड़े में हँस पड़ा। और गौरी खिल-खिलाकर हँस पड़ी। “यह सारा धन-दोलत हम से ही लूटा गया” गौरी ने कहा। “क्या?” बेगम ने उर्दू में कहा। “मुझे पता है आपके लोगो ने हमारे लोगो को कितना कष्ट दिए। गाँधी का झण्डा फहराने नहीं नहीं दिया। मेरे पति को जेल भेज दिया।” गौरी ने बेगम साहेबा से कहा।

यह कपडे अपने पास रखो। कल शाम के समय फिर से यहाँ आना। उर्दू में बेगम साहेबा ने कहा। “आपके सभी जागीर ख़त्म हो जायेंगे। मेरे पति इस गाँव के काँग्रेस के बड़े हैं, तुम नहीं।' गौरी ने कहा। “कॉग्रेस के लोग अच्छे हैं। रजाकार बुरे है।” बेगम साहेबा ने कहा। “रजाकार तो आप ही लोग हैं। आप लोगों को खतम कर देना चाहिए” गौरी ने कहा। “सचमुच रजाकार बुरे लोग हैं। उन्हें यहाँ से भगा देना चाहिए। आप और हम एक हैं।' बेगम ने जोर से हँसते हुए कहा। बाद में कमरे में इधर-उधर टहलने लगी।

दूसरे दिन गौरी नहीं आई... बेगम को रात भर नींद नहीं आई। गौरी क्यों नहीं आई। पुरुषों (नवाबों) ने अपनी बेगमों को बताए बिना पिछले जागीरों में जनता पर कई अत्याचार किए थे। इससे जनता बहुत नाराज़ थी। अब जमींदार की पत्नी के प्रति रिश्तेदारों के प्रति यहाँ की महिलाओं को बहुत क्रोध है। कितना ग़लत किया इन (हमारे) पुरुषों ने। पुरुष, वे लोग तो सुख भोगकर मरे! अब जीवित लोगों को मुसीबतों का सामना करते हुए मरना पड़ रहा है।

सुखी मरना, मुसीबतों के साथ जीना। सुखी मरना उनका भाग्य, मुसीबतों के साथ जीना जनता का भाग्य, बेगमो का भाग्य है। सोचकर बेगम को डर लगा। उसके विचार उसके मन में विष के बीज बो रहे थे। कितने बुरे दिन आ गये हैं। समय हाथ से खिसक ही नहीं गया, उसने तो विद्रोह ही कर दिया। हिन्दू ऐसे बदल जाएंगे, आज तक ना देखा न सुना गया। सब कुछ अल्लाह की माया है। बेगम सहेबा को नींद नहीं आ रही थी। अपने भविष्य के बार मैं सोच सोच कर सिर फटा जा रहा था। ये महल, इनके उत्सव. आनंद-विनोद, सौभाग्य आदि कुछ भी नहीं टिकेगा। चोरो की तरह छिप-छिपकर जीने वाले अन्य लोग राजा बन रहे है। पता नहीं क्या होने जा रहा है। जो भी हो लोगो को बहला-फुसलाकर अपना बनाना चाहिए। उनको धन-दौलत का लोभ दिखाकर जैसे-तैसे अपना काम निकालना चाहिए।

सवेरे उठते ही गौरी के लिए बेगम ने आदमी भेजा। गौरी दूध दुह रही थी। उसका पति चन्द्रम घर में किसानों के साथ कांग्रेस के बारे में कर रहा था। जब उसने सुना कि बेगम ने गौरी को बुलाया है, तो बहार आकर उसने कहा 'नहीं आएगी, जाओ। पिछले दिन गौरी जिन कीमती कपड़ो को पहन कर आई थी उन्हें लाकर चन्द्रम ने उस आदमी के मुह दे मारा। जब इन सारी बातों का पता बेगम साहिबा को चला तो वह बहुत दुःखी हुई। यह जानकर वह डर गई कि गौरी का पति कांग्रेस का नेता है। उसे आश्चर्य भी हुआ। पशुओं को चराने वाले गो पालक भी नेता बन रहे हैं। बेगम साहेबा ने सोचा, ज़रूर कोई विशेष बात होगी। नवाबो से भी ज्यादा बड़े बन गए है ये कांग्रेस के नेता।

बंगले के सामने के स्वर्ण-पुष्पों को पलाश के फूलों ने पराजित कर दिया था। बेगम के सौंदर्य को गौरी की खूबसूरती ने परास्त कर दिया था। बाप रे! दुनिया कितनी बदल गई है। गाँव के सारे लोग कांग्रेस के सि पास ही जा रहे हैं। जागीरदार के बंगले पर कोई नहीं आता है। गाँव में यह भी सुना जा रहा है कि जागीरदारों को अपनी जागीरों में जाने का कोई हक नहीं। पता नहीं क्या सच है, क्या झूठ है। हालातों के सामने झुकना ही ठीक रहेगा। गौरी को अपना बनाकर ही कुछ काम हो सकता है। बेगम के पति ने जो अत्याचार किये थे उनसे प्रजा का क्रोधित होना स्वाभाविक था। जनता को लूटकर सुख भोगने पर जनता चुपचाप देखती रहेगी क्या? कांग्रेस के लोग बड़े ही भले लोग हैं। शांति से परिपूर्ण हैं उनका द्वेष। उनके साथ मिलकर जीने में ही बुद्धिमानी है। विद्रोह करने की सोचेंगे तो ऐसा होगा जैसे सूखी लकड़ी में आग लग गई हो।

रात के अँधेरे में बेगम गौरी के घर गई। गौरी लोकगीत गुनगुनाती हुई कुएँ से पानी निकाल रही थी। कुछ ही देर में होने वाले चन्द्रोदय की आभा सारी दुनिया पर पसर रही थी। पूरब का आकाश साबुन से अपने काले चेहरे को रगड़-रगड़कर

धो रहा था। सारा आसमान तारों से भरा हुआ था। इतनी पुलकित करने वाली ठंडी हवा बंगलों में कभी नहीं बहती थी। अस्पष्ट अंधकार में पेड़ों की डालियों का झूमना, छोटे-छोटे दीयों का हवा के झोंकों पर नर्तन करना...

“गौरी!” बेगम ने पुकारा। अपने भीगे तन को पोछती हुई, "कौन" कहती हुई आई गौरी। अस्पष्ट धूमिल रोशनी में गौरी ने बेगम को पहचान लिया। _ बेगम ने उत्साह के साथ गौरी को बाहों में भर लिया। बेगम के मलमल की साड़ी गौरी के भीगे तन से लगते ही गीली हो गयी। गर्मी के मौसम में भी कितनी शीतल हो बेगम ने गौरी से उर्दू में कहा।

बेगम उससे मिलने लिए इतनी दूर चली आई थी। गौरी को आश्चर्य हुआ। गौरी को बेगम पर दया आई। बेचारी! नारी! गौरी ने सोचा। पुरुष द्वारा किए गए हर पाप के लिए स्त्री जिम्मेदार होती है क्या? बेचारी विधवा है। पति के देहांत के बाद से कदम-कदम पर मुसीबतें झेल रही है। पहली बार वह इस गाव में आई है। वह मुझसे बहुत प्रेम करती है। अत्तीत में जो हो गया सो हो गया। अब इन दिन-रातों के सापों से डरने की क्या बात है! गौरी ने सोचा।

“आओ! आओ न। अंदर आओ! कहते हुए गौरी ने बेगम को घर के भीतर ले गई। बेगम ने चुपचाप घर में प्रवेश किया। वहाँ पर बिछी चारपाई पर बैठ गयी। बहुत छोटा घर। मिट्टी की दीवारें। सुतली-बुनी चारपाई, मिट्टी के घड़े। गौरी के चहरे में अनंत संतोष का धन, संतृप्ति, गंभीरता, भोलापन झलक रहा था। उस छोटे से घर में बैठकर बेगम को लगा की एक बहुत बड़ा बोझ उसके सिर से उतर गया है। महल, महल के झंझट, लड़ाई-झगड़े,.. उन सबसे दूर यह छोटा घर कितना प्रशांत है! कितनी शांति, दुनिया से दूर शोर-शराबे से हटकर, कितना निराडम्बर.. "मैं यहीं रह जाऊँ?” बेगम ने गौरी से पूछा।

"इतने बड़े घराने की हैं आप, कैसे आई?” गौरी ने बेगम से पूछा। तुम्हारे पति तो कुछ नहीं कहेंगे न?” बेगम ने पूछा। “हमारे लिए यह छोटी सी झॉपड़ी बस है। जी लेते हैं।" 'साड़ियाँ वापस क्यों भेज दीं?” बेगम ने पूछा। “खाना खाओगी हमारे पास? गौरी ने पूछा। एक उर्दू ला थी, दूसरी तेलुगु में। कितना समझा, कितना नहीं समझा पता नहीं। लेकिन अपने प्रयत्न का स्वयं ही उत्तर समझकर दोनों ही तृप्त हो रही थीं। बेगम उनके घर से वापस नहीं गई और गौरी ने भी जाने के लिए नहीं कहा। चन्द्रम ने देख कर भी कुछ कहा नहीं।

ताड़के फल, शकरकंद... इनमें कोई स्वाद-मजा नहीं है। समझती हो क्या? जागीर के वंशजो ने कहा बेगम भाग गई है । हा! हा! भाग गयी है- नगर वासियों ने कहा। कुछ बुजुर्गो ने कहा वह चन्द्रम की रखैल बन गई है। और कुछ ने कहा चन्द्रम बेगम को भगा ले गया है। बेगम द्वारा रेडियो सुनना बंद करके तिन महीने हो गये थे। कानो ने लोक – निंदा सुनना बंद कर दिया था। गौरी की बातें पलाश के फूलों का बगीचा था, शीतल पवन के गीत थे। बेगम अब फटी-- पहनकर, गांठ वाली चोली पहन कर, तेल विहिन तांबे के रंग के बिखरी जुल्फों के साथ गौरी की बहन लग रही थी। बेगम गौरी के परिवार की सदस्या बन गई थी।

हैदराबाद में कांग्रेस की सभाएँ हो रही थीं। देखने के लिए गौरी, चन्द्रम् और बेगम तीनों भी चले आये थे। अब बेगम ने बुरक़ा पहनना छोड़ दिया था। वह कार में भी बैठना नहीं चाहती थी। उड़ता आँचल, आधा वक्ष खुला-खुला, फटी पुरानी साड़ी पहनकर खुल्लमखुल्ला घूमने वाली बेगम की ओर न कोई आँख उठाकर देखता, और न उसकी ओर ध्यान देता। कैसी विचित्र दुनिया है! अपने महल के सामने से गुज़रते हुए ज़ोर से हँस पड़ी बेगम। फीकी लाली वाले फूल! गाँव में शीतल अंगारों के पलाश, सुन्दर गौरी, महान् चन्द्रमू- यही असली दुनिया है। ये नगर-शहर सब केवल नाटक हैं। बेगम दुबारा हँस पड़ी। गौरी के जूड़े में पलाश हँस पड़े।

अनुवादक : 'द्विवागीश' गुड्ला परमेश्वर

तांडूर प्रांत के रासनम गाँव के निवासी, गुड्ला परमेश्वर जी अब हैदराबादवासी बन गए हैं। आपका जन्म 1948 को हुआ। आपकी मातृभाषा तेलुगु है और आपकी शिक्षा भी तेलुगु भाषा में हुई। राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रति प्रेम ने ही आपको हिन्दी क्षेत्र को अपनी जीविका बनाने के लिए प्रेरित किया। आप स्व. वीरम्मा और नीलप्पा के सुपुत्र हैं। हिन्दी विद्वान, साहित्य रत्न, एम.ओ.एल., हिन्दी प्रचारक आपकी शैक्षणिक योग्यताएँ हैं। 34 वर्ष तक हिन्दी अध्यापक के रूप में आपने हिन्दी की सेवा की।

आपने एक दर्जन से अधिक तेलुगु ग्रंथों (काव्य, उपन्यास, कहानियों) का हिन्दी में तथा लगभग इतने ही ग्रंथों का हिन्दी से तेलुगु में अनुवाद किया। हिन्दी, तेलुगु तथा अंग्रेज़ी में भी आपने कुछ मौलिक रचनाएँ की हैं। युवकों के लिए रेडियो प्रसारण के कार्यक्रम भी आपने किया है। आपकी तेलुगु कहानियों का अनुवाद नया ज्ञानोदय, समकालीन भारतीय साहित्य तथा पुस्तक संस्कृति में छपती रहती हैं।

आपने केन्द्रीय साहित्य अकादेमी के गाँधी परियोजना के अंतर्गत तेलुगु के उपन्यासों के अंश तथा कहानियों के अनुवाद में सहयोग भी दिया है। कितने ही संस्थाओं द्वारा सम्मानित होने के साथ-साथ आपने भारतीय अनुवाद परिषद द्वारा 'द्विवागीश' की उपाधि तथा केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय से एक लाख की सम्मान-राशि प्राप्त की है। साहित्य की सेवा के साथ-साथ आप भारत के स्काउट एवं गाइड के संगठन आयुक्त और राष्ट्रीय कार्यकारिणी के सदस्य हैं। आपकी स्वच्छंद सेवा के लिए संस्था की ओर से महामहिम राष्ट्रपति महोदय ने आपको संस्था के सर्वोच्च राष्ट्रीय पदक “सिल्वर एलिफेंट' से सम्मानित किया।

नंदिनी सिधारेड्डी

कवि, कथाकार, समीक्षक तथा आंदोलनों के नेता के रूप में प्रसिद्ध नंदिनी सिधारेड्डी जी का जन्म सन् 1948 में कोण्डपाक मंडल के बंदारं गाँव में हुआ था। 'आधुनिक तेलुगु कवित्वं; वास्तविकता-अधिवास्तविकता' के अंश को लेकर आपने पी.एचडी. की उपाधि प्राप्त की। सिद्धिपेट के डिग्री कॉलेज में तेलुगु प्राध्यापक के रूप में जीवन-मार्ग पर अग्रसर होने वाले सिधारेड्डी जी उसी कॉलेज से सेवा-निवृत्त भी हुए। "मंजीरा रचयितला संघं', 'तेलंगाणा रचयितल वेदिक' के संस्थापक अध्यक्ष हैं। अब तक आपके 8 कविता-संकलन, तीन निबंध-संकलन, एक गीत-संकलन प्रकाशित हो चुके हैं। तेलंगाणा राष्ट्र-साधना को केन्द्र में रखकर लिखी गई कविताएँ 'नागेटी सालललों' (हल की लीकों में) गीत के लिए आपको "'नंदी' अवार्ड से सम्मानित किया गया। "विचित्र कननु' (विचित्र आँख) आपका कहानी संकलन भी प्रकाशित हो चुका है।

"गोबर के उपलों के बीच से धीमा-धीमा धुआँ उठ रहा था। नरसय्या वोड्डे (पत्थर फ़ोड़ने वाली एक जाति) मुत्तड के साथ मिलकर शहर जाकर अपने सुअरों की बिक्री के लिए सोहनलाल सेठ के साथ मोल-भाव कर रहा था।

परुशुरामुलु, बारी-बारी से बेच डालने के बाद, अंत में बची आधा एकड़ ज़मीन को भी बेच कर पीने के लिए हाथ में दोना लिए हुए, ताड़ के पेड़ पर चढ़े एल्लगौड की ओर देख रहा था। नागराजम्, छात्रों को उनके घर वापस भेजकर, स्कूल में अध्यापकों के सिंडिकेट के साथ सिगरेट पीता हुआ ताश के पत्ते बिछा रहा था। ठीक उसी समय- उन तीनों को जन्म देने वाली बालव्वा की साँस रुक गई। विचित्र बात थी पर जैसे ही लच्चव्वा ने उसके मुँह में तुलसी का पानी डाला, बालव्वा ठंडी पड़ गई थी। लच्चव्वा चीखती चिल्लाती हुई रोने लगी तो आस-पास के लोग आश्थ्चर्य करते हुए वहाँ दौड़े-दौड़े चले आए। वहाँ बालव्वा सूखें घास पर निर्जीव पड़ी हुई थी। हवा के झोंकों से सूखी घास तो झुरझुरा रही थी पर बालव्वा निश्चेष्ट लकड़ी की भाँति अचल पड़ी हुई थी।

शाम के सात बजते-बजते जब अँधेरा होने लगा तो नर्सय्या ने एक निर्णय लिया। उसकी माँ ने कई बार उससे कहा था- "जब मैं मर जाऊँ तो मुझे दफ़नाना नहीं, बल्कि मेरी चिता को आग देना। चाहे उसके लिए मेरे शरीर के गहने भी क्यों न बेचना पड़े।" नर्सय्या ने अपनी माँ के हाथ में हाथ रख कर यह वादा किया था। लकड़ी काटने और ढफ़ली बनाने के लिए चमारों को बुला लाने के लिए मुत्तड को भेजा नर्सय्या ने। तभी गाँव के चार प्रतिष्ठित व्यक्ति वहाँ पहुँचे। दो चमारों के बुजुर्ग लोग भी वहाँ पहुँचे। उनके शरीर पर मैली घोती और रुमाल के अलावा दूसरा कोई कपड़ा नहीं था। "कितना लोगे?" यह जानते हुए कि ऐसे अवसर पर मोल-भाव नहीं करना चाहिए और जितना अधिक हो सके देना चाहिए, नर्सय्या ने कंजूसी दिखाते हुए पूछा। "दोनों काम के लिए कुल अस्सी रुपये दीजिए" उनमें से एक मुच्छड ने कहा। परुशुरामुलु वहीं दीवार से सटकर बैठा रहा पर उसने एक बात भी नहीं कही। "बीस रुपये दूँगा" कहकर, एक मिनट के बाद "क्या कहते हो?" फिर से पूछा नरसय्या ने। "हम नहीं करेंगे। हमने कम ही माँगा है। अस्सी से कुछ भी कम हो तो नहीं, हम नहीं करेंगे" लाल रुमाल बाँधे हुए व्यक्ति ने कहा।

"हाँ, क्यों करोगे भला? बहुत चर्बी चढ़ गई है तुम चमारों को। बीस रुपये मिलने पर भी इनकार कर रहे हो। तुम्हारी तो..." नरसय्या से बात करते समय उसके मुँह से छींटे उछल रही थीं। वहाँ खड़े बुजुर्ग आदमियों से पुलिस पटेल ने भी कुछ नहीं कहा। "बीस रुपये? थू... तुम्हारी जात ही ऐसी है" मुच्छड व्यक्ति ने क्रोध से कहा। "मुझ पर थूक रहे हो? तुम्हारी दृष्टि में मेरी यही हस्ती है तो यही सही, चलो तीस रुपये में काम निबटा दो" नर्सय्या को उन चमारों के साथ शव के सामने मोल-भाव करते देखकर वहाँ जमा हुए लोग उसकी कंजूसी पर उसे कोस रहे थे।

उन चारों बुजुर्गों में से पुलिस पटेल से अब रहा न गया सो वह शराब मँगवाकर वहीं पीने लगा। बग़ल में खड़ा मस्कूरी उसे शराब ग्लास में भर-भर कर दे रहा था। बाकी दोनों चुपचाप खड़े थे। बचा हुआ एक मुखिया ही सरपंच था।

उसने चमारों को समझाते हुए 'पचास' रुपयों में निपटाने को कहा। लाल रुमाल वाला व्यक्ति सरपंच की ओर देखते हुए अपने मन की भड़ास निकालने लगा-

“आप ही बताइए मुखिया जी, इसके पास क्या कमी है जो तीस रुपये या पचास रुपये देगा? क्या यह कम जात का हैं? या गरीब है? इसका सारा घर पैसों से भरा पड़ा है। हाँ... आप जैसे लोगों का मुँह देखकर हम पचास या साठ में काम कर सकते हैं। क्यों...” क्योंकि कभी-कभी तो हमने आपका नमक खाया है। क्या हमने कभी इस कंजूस के पास कुछ खाया है? उल्टा वो हमें लूट न ले वही बहुत है। इनके यहाँ इतने शादी-ब्याह हुए हैं. .. कभी किसी विवाह में बुलाकर एक निवाला खिलाया हैं? इतने फसल उगाए हैं... कटाई की है। कभी कटाई के दौरान एक बार भी धान का एक दाना दिया हमें? हम से काम ले तो कहीं हमें देना न पड़ जाए, इसलिए ये लोग अपने चप्पल भी स्वयं सीते हैं। रस्सी बट लेते हैं। इनसे हमें क्या लाभ हुआ? मछुआरे काम आते हैं... कुम्हार काम आते हैं... यह हमारे किस काम का? इनकी चार-चार भैंसें दूध देती हैं। जब हम छाछ के लिए इनके घर जाते हैं तो इसकी पत्नी कहती है पैसे दोगे तो छाछ मिलेगी। और पैसे लेकर भी उसने जो छाछ दी वह भी तो पानी के समान ही थी। यह सब सोचते हैं तो हमारी आँखों में खून उतर आता है। जहाँ-तहाँ बन पड़े इसने हमें ही लूटा है। खर्च के डर से ही तो साहब, इसके घर इतनी मौतें हुई हैं पर इसने कभी चिता नहीं जताई, केवल जमीन में दफ़ना दिया है। ऐसे लोगों का गाँव में रहना किस काम का? रहकर भी बेकार लोग...” उसकी बातों की बाढ़ का

कोई बाँध नहीं था। उसकी बातों से नर्सय्या आग बबूला हो गया। जैसे गुब्बारा हवा भरने पर फूलता और बड़ी आवाज़ से फूट जाता है उसी प्रकार उन चमारों पर बरस पड़ा नर्सय्या। "छिनाल के पिल्ले... क्या बके जा रहा हैं?... मारो साले को। कैसी-कैसी बातें कर रहा है। लज्जा नहीं आती? पीटो इनको। माई के लाल... मैं क्यों इनको खिलाऊँगा? क्या तुम्हें मैंने पैदा किया है?" वहाँ खड़े बड़े आदमियों की समझाने वाली बातें सुनने के लिए कोई तैयार नहीं था। वह मुच्छड़ और लाल रुमाल वाला व्यक्ति दोनों अलग-अलग रूप से नर्सय्या से गाली-गलौज करने लगे। परुशुरामुलु वहीं पुरानी दीवार से सटकर बैठा रहा और झपकी लेने लगा। "क्या कहा तुमने? हमें तुझसे पैदा होना था? यदि फिर से कहा तो चमड़ी उधेड़ देंगे तुम्हारी। यदि तुम बड़े आदमी हो तो अपनी जगह... तुम्हारे पास पैसा है तो उसे सर पर रखकर घूमो। ऐसी घिनौनी बात करने की तुम्हारी हिम्मत ही कैसे हुई? तुमने हमारी मेहनत की कमाई खाई है। हमें ब्याज पर कर्ज देकर हमें लूट लिया है। हमें डुबोकर तुम उभरे हो। क्या कभी हमने कहा है कि तुम हम से पैदा हुए हो?"

इतने में लच्चव्वा शब के पास से उठकर बाहर निकल आई। वह भी चारों के साथ मुँह चलाने लगी।लच्चव्वा, नर्सय्या एक पक्ष- लाल रुमाल वाला व्यक्ति और वह मुच्छड़ एक पक्ष। वे आपस में गंदी-गंदी गालियाँ देने लगे बाकी सब चुपचाप उन्हें देखने लगी। नर्सय्या ऐसे उछल रहा था जैसे अब उनको वह मार ही गिराएगा। पर बुजुर्ग उसे रोककर पीछे खींच रहे थे। क्योंकि नर्सय्या जानता था कि बड़े बुजुर्ग उस पर मार पड़ने से पहले ही उसे रोक देंगे, नर्सय्या बार-बार उछल-कूद कर रहा था। वहाँ लडाई ज़ोरों पर थी। चूल्हे में गिरे नमक की तरह बातें चिटपट करने लगीं। तभी वहाँ पर नागराजम् आ धमका। यह भाप कर कि वहाँ का माहौल खराब है और वह हस्तक्षेप करेगा तो पैसे देने की समस्या उसके सर आएगी, वह ज़ोरों से रोते हुए "माँ ओ माँ... हमें छोड़ कर कैसे जा सकती हो माँ..." कहते हुए शव के पास पहुँचा। उसकी आवाज़ कुछ लोगों को गधे के रेंकने जैसी लगी।

तब तक शव के पास जमा सारे लोग अब लड़ाई का आनंद लेने लगे।जैसे बड़े आदमियों ने बताया कि पचास रुपये ले लो, उससे एक पैसा भी अधिक न देने की ज़िद पर नर्सय्या अड़ा रहा तो चमार अस्सी से एक पैसा भी कम हो तो काम न करने की रट लगाए हुए बैठे थे।वहाँ बैठे लोगों के कितने ही प्रयासों के बाद भी वे गाली-गलौज बंद नहीं कर रहे थे। बड़ी विचित्र समस्या थी यह। उन चारों बड़े बुजुर्गी को यह समझ नहीं आया कि इस समस्या का समाधान करें तो कैसे करें?

उन बुजुर्गों में सरपंच और पुलिस पटेल भी थे। वे बोतलों में से शराब ग्लासों में उंडेलकर लोगों के सामने बेशर्मी से पिए जा रहे थे। जो बात बुजुर्गों के पल्ले नहीं पड़ी लच्चव्वा ने उसका हल निकाल लिया।उसने सबके सामने नर्सय्या से ऊँची आवाज़ में कहा-"हमें इनसे क्या लेना? उनकी मौत वे मरेंगे। हमारी अपनी झाड़ियाँ हैं- भगवान के दिए हुए हाथ हैं। यदि हम ही लकड़ी काटकर, हम ही चिता जमाएँ तो क्या जाएगा? चलो, इन्हें अस्सी रुपये देने की क्या आवश्यकता हैं? यदि हम करेंगे तो थोड़ी देर में हो जाएगा। चलो चलते हैं...

नर्सय्या को लच्चव्वा का सुझाव बहुत अच्छा लगा। उसे खेद हुआ कि इतना अच्छा विचार उसे क्यों नहीं आया? "हाँ, तुम्हारी घरवाली कह रही है न उसी प्रकार करो। तब तुम्हें हमारे काम का महत्त्व समझ में आएगा। पैसे पर दस गाँठ बाँधनेवाले तुम जैसों के लिए ही सही है" कहते हुए वे दोनों चमार वहाँ से चले गए। वे चारों बुजुर्गों और बाकी के लोगों को यह निर्णय कर्णकठोर लगा। उसी भीड़ में से कुछ लोगों ने लच्चव्वा के सुझाव की कड़ी निंदा की। "कितने भी धनवान हों तो क्या लाभ? बुद्धि भी उच्च स्तर की होनी चाहिए।' "ऐसे लोगों से तो शव ही भला" वहाँ भीड़ शून्य हो गई थी।

केवल शव बचा था। शव पर गिरकर रोने वाला नागराजम्, दीवार से सटकर सोनेवाले परुशुरामुलु, माँ के पास बैठकर लगातार रोनेवाली बेटी, बस यही बचे थे। अभी आधी रात नहीं हुई थी। कुल्हाडियाँ लेकर नर्सय्या, लच्चव्वा, उसका बेटा शंकररेडी, मुतड निकल पड़े थे। उधर मुँह फुलाकर लौटनेवाले अछूतों के मुखिया का सामना बाकी चमारों से हुआ। वहाँ

पर घटी घटना सुनकर सभी अपने-अपने विचार में डूबे अपनी झोंपड़ियों की ओर चल पड़े। “यदि ऐसा हुआ तो एक को देखकर दूसरा, दूसरे को देखकर तीसरा... सभी अपने कर्मकांड आपस में ही कर लेंगे...” उनमें से एक ने कहा। उनके भावी जीवन को लेकर एक चेतावनी थी उसकी बात में ।

"यदि ऐसा होता है तो उसके बाद हमें खाने को दाना नहीं मिलेगा। अभी से हम खाने-पीने के लिए तरस रहे हैं। यदि यह सहारा भी हमसे छिन गया तो हमारा गुज़ारा कैसे होगा?” उस मुच्छड़ ने कहा। हवा के झोंको से थरथरानेवाले पत्तों की तरह वे सब काँपते हुए आपस में एक-दूजे का मुख देखने लगे। भोर होते-होते नर्सय्या और उसके साथी चिता जमाकर घर लौटे। अर्थी की तैयारी कर दूसरे ढफ़लीवाले को बुला लिया। बुजुर्ग लोग नहीं आए। बाकी लोगों का आने का मन नहीं कर रहा था। परुशुरामुलु, चिता को आग देने के लिए एक हाथ में मिट्टी का ठिलिया और दूसरे हाथ में जलती लकड़ी पकड़े ठहरा हुआ था। सूरज धीरे-धीरे सिर उठा रहा था। अर्थी के तीसरे छोर पर शंकररेड्डी, फिर चौथा छोर कौन पकड़ेगा?औरतें अर्थी नहीं उठा सकती थी।

“क्या करें, नर्सय्या ने चारों ओर देखा। जहाँ तक दृष्टि दौड़ाई उसे कोई नहीं दिखा। मात्र मुत्तड खड़ा था। अब उसे अर्थी के चौथे छोर को मुत्तड से ही कंधा दिलाना पड़ा। ढफ़ली बज रही थी। शहनाई की कमी को बालव्वा की बेटी का रोना पूरा कर रहा था। अर्थी पर बालव्वा के शव पर से सफेद बादल चले जा रहे थे। बालव्वा ने अपने जीवन में सबकी भाँति नहीं बल्कि कुछ विशष स्वप्न देखे थे। अजीब सी कामनाएँ थीं उसकी। वह सब उसकी मौत के बारे में थीं।वह चाहती थी कि उसके चार बेटे हों ताकि उसके मरने के बाद उसकी अर्थी ढोने के काम आ सकें। परन्तु जब उसकी पहली संतान बेटी हुई तो बड़ा दुःख हुआ।

कालांतर में उसने अपने जी को समझा लिया कि चलो 'मेरे मरने के बाद रोने-धोने के लिए बेटी काम आएगी ।' जब बेटी के बाद लगातार उसके तीन बेटे हुए तो उसे इतना संतोष मिला जैसे उसने कोई पहाड़ खोद दिया हो। पर इतने में एक दुखद घटना हो गई, उसका पति चल बसा। उसके चौथे बेटे देने से पूर्व ही मर जाने पर, अपनी आखरी साँस तक पति को कोसती रही बालव्वा। शव यात्रा चुपचाप चल रही थी। बाज़ार में लोग भीड़ बनाकर देख रहे थे। परन्तु कोइ भी उस शव के पीछे नहीं चल रहा था। शव पर से उछाले गए खील बालव्वा पर पड़े बिना ही हवा में उड़ रहे थे। उन नीचे गिरे खीलों पर से उसके बेटे चल रहे थे। बालव्वा को सोने और पैसे से बहुत लगाव था। उसका यह पागलपन था कि काश इस ज़मीन पर जितना सोना और पैसे हैं सब कुछ उसके घर में भरा जाए। अपनी मौत पर रोने के लिए काम आनेवाली बेटी और अपनी चिता को आग देने वाले बेटे के अलावा उसे दूसरी संतान से प्रेम नहीं था। वास्तव में उन बच्चों पर प्रेम छलकाते हुए बैठेंगे तो पैसों का जुटाव कैसे होगा? यदि पैसे इकट्ठा नहीं होंगे तो उसकी अंतिम यात्रा धूमधाम से कैसे निकलेगी? इसी उद्देश्य से बालव्वा ने अपने पति को भी बच्चों से अधिक लाड़-दुलार करने नहीं दिया।

जब बालब्वा विवाह करके ससुराल में आई थी तब उसके पति की अपनी एक एकड़ ज़मीन और एक छोटा घर था।

छह महीनों तक कैन्सर से पीड़ित होकर जब नागमल्लय्या ने आखरी सौँस ली उस समय बालबव्वा के पास बीस तोले सोना, अस्सी एकड़ ज़मीन, दो सब्जी के बाग और गाँव के उधार लिए हुए लोगों के कुछ पत्र जमा थे।

बालव्वा ने अनावश्यक खर्च से बचने के लिए अपने पति का दहन संस्कार नहीं कराया बल्कि अपने बेटों से उठवाकर दफ़न करा दिया। पर उसकी प्रगाढ़ इच्छा थी कि उसका अंतिम संस्कार चिता जलाकर ही हो।

इसीलिए इतना सोना... पैसा... बालव्वा के अधूरे स्वप्न की भाँति, कसकर बाँधी गई अर्थी की लकड़ियों के बीच से सफेद कपड़ा फड़फड़ा रहा था। शव यात्रा एकदम चुपचाप चल रही थी। गाँव के बाहर पाँच कदम दूर पर ही बेटी ने रोना-धोना बंद कर दिया था। चिता से कुछ दूरी पर अर्थी उतारकर नीचे रख दी गई।

शव यात्रा की कुछ औपचारिकताएँ पूरी की गईं। डफ़लीवाले ने ही पूजा करके पानी छिड़का। बालव्वा के कानों में कर्णफूल थे उन्हें निकालने का निर्णय हुआ। नर्सय्या ने ज़ोर लगाकर खींचा। बिना किसी आवाज़ के बालव्वा के छिद्ध टूट गए। "ये कर्णफूल मुझे मिलने चाहिए" बालव्वा की बेटी ने कहा। "खर्चा हम कर रहे हैं इसलिए उन पर हमारा अधिकार है" लच्चव्वा ने जवाब दिया। उन दोनों के बीच वाद-विवाद गाली-गलौज शुरू हो गया। परुशुरामुलु और नागराजम् ने भी अपनी बहन के पक्ष में बात की तो उन कर्णफूलों को नर्सय्या के हाथ से निकलकर बालव्वा की बेटी के हाथों में जाना ही पड़ा। अर्थी फिर से उठी। ढफ़ली फिर से बजने लगी। शव आगे बढ़ गया। उनके कृदम डगमगाए ओर फिर रुक गए। परुशुरामुलु को आश्चर्य हुआ, ढफ़लीवाला अचरज में पड़ गया। अर्थी ढोने वाले उन चारों की और उनके पीछे आने वाली दो औरतों की आँखें अचंभित सी रह गईं। शव को ढोनेवाला नर्सय्या जैसे स्वयं शव बन गया हो। वह चिता- कड़े परिश्रम से जमाई गई वो चिता- उनकी रात की नींद गँवाकर जमाई गई वह चिता- पता नहीं क्या हुआ पर वहाँ पर राख का ढेर पड़ा हुआ था।

वह राख इस बात का प्रमाण है कि वहाँ शव पहुचने से पूर्व ही चिता को जला दिया गया है। लच्चव्वा की भाँति नर्सय्या को भी रोना आया, अर्थी उतारी गई। नर्सय्या जलते सूरज की भाँति आग का गोला बन गया। उसकी आँखें अंगारें बरसा रही थीं और उसने दाँत ऐसे पीसे जैसे कोई पेड़ों की डालियों को तोड़ रहा हो। "माई के लाल... बताता हूँ" पता नहीं नर्सय्या का मन क्या कह रहा था पर उसके पैर भयंकर ध्वनि करते हुए वहाँ से चल दिए। अछूतों की झोंपड़ियों की ओर वह भूचाल की भाँति चला जा रहा था। उसने एक इमली के पेड़ के नीचे ठहर कर देखा हर तरफ सन्नाटा था। दूर किसी झॉपड़ी के सामने चार-पाँच व्यक्ति बैठे हुए हैं बारूद से भरी तोप की तरह नर्सय्या उनकी ओर चल पड़ा। "राजालू', एक साँस लेकर, "जितनी रकम तुमने मौंगी है मैं दे दूँगा पर ज़रा जल्दी चलो" उसकी बातों में ऐसी नर्मी थी जैसे इमली के पेड़ की छाँव ने उसके क्रोध को शांत कर दिया हो।

वे कुछ नहीं बोले। अपने दूसरे साथियों के साथ कुल्हाड़ियों सहित चल पड़े। इस तरह नरसय्या का घुटने टेक देना उनके आनंद का कारण बना था। वे झाड़ियों में लकड़ी काटने लगे। हवा में झूलती डालियों की भाँति झूमते हुए फटाफट काम कर रहे थे। बड़े पहाड़ पर चढ़ने जैसे कोई संतोष उन्हें काम करने के लिए उत्साहित कर रहा था। औरतें अर्थी के चारों ओर बैठी हुई थीं। औरत न होते हुए भी औरतों के बीच शव के पास बैठा नागराजम्। परुशुरामुलु दूर कहीं ताड़ के पेड़ के नीचे बैठकर अपनी सोच में डूबा हुआ था। नर्सय्या, मुत्तड दूर झाड़ियों में खड़े होकर कुछ बातें कर रहे थे। देखते ही देखते चिता का जमाना पूरा हो गया था। सभी चिता के निकट पहुँचे। वहाँ केवल मुत्तड ही लापता था। संभवत: कहीं चला गया था। लगभग चमार जाति के सभी

पुरुष वहीं उपस्थित थे। अर्थी उठी। अर्थी से बालव्वा को उठाकर चिता पर लिटाया गया। सब मिलकर बालव्वा के ऊपर लकड़ी जमाने लगे। बड़ी-बड़ी लकड़ियाँ लाकर बालव्वा के शव पर जमाते हुए अछूतों को ऐसी खुशी मिल रही थी जैसे उन्होंने बरसों का बदला ले लिया हो।

परुशुरामुलु ने छिद्र वाला घड़ा कंधे पर रखकर चिता के चारों ओर गोल चक्कर लगाया और बाएँ हाथ से चिता को आग लगा दी धुएँ से ओतप्रोत चिता पर जब मुच्छड़ व्यक्ति ने मिट्टी का तेल डाला तो आग की ज्वालाएँ एकदम भड़क उठीं। पता नहीं क्यों वे अछूत प्रसन्न लग रहे थे। बालव्वा का शव काफी जल चुका था।

नर्सय्या के सारे परिवार वाले स्नान करने के लिए कुएँ की ओर चले गए। बीड़ी पीता हुआ मुत्तड आया और नर्सय्या के बारे में चमारों से जानकारी लेकर कुएँ की ओर चल पड़ा। तृप्ति का स्वाद लेते हुए उत्साह के घूँट पीते हुए उन चमारों ने गाँव का रास्ता पकड़ा।

उन्होंने देखा कि उनके कुछ बच्चे रोते हुए, हाँफते हुए, उनकी ओर चले आ रहे हैं। “क्या हुआ?...” लाल रुमाल वाले व्यक्ति ने पूछा। यही सवाल बाकी दो व्यक्तियों के मुख से भी निकला। “आग...” अस्पष्टता से, हिचकियाँ लेते और रोते हुए वे बच्चे बता रहे थे। उसके आगे वे कुछ कह नहीं पा रहे थे। नहीं, जो हुआ है वो बताने के लिए उन मासूम बच्चों का मुँह खुल नहीं रहा था। वह मुच्छड़ और बाकी कुछ लोग घबराते हुए दौड़ पड़े। बूढ़े लोग विभिन्न कल्पनाएँ करते हुए तेज़-तेज़ चल रहे थे। दौड़ने वाली वे आँखें उत्साह से भरी थीं। आखिर वहाँ पहुँचकर अपनी झोंपड़ियों को देखनेवाली उनकी आँखें काष्ठवत खुली की खुली रह गईं। उनमें से प्रत्येक व्यक्ति को एक-एक झोपड़ी अलग चिता सी जलती हुई नज़र आई।

अनुवाद : शकील अहमद

6 अप्रैल सन् 1980 ई. में तेलंगाणा के नागरकर्नूल नगर में जन्मे शकील अहमद जी अज़ीज़ अहमद और हमीदुननीसा के सुपुत्र हैं। बी.कॉम. स्नातक की उपाधि प्राप्त करने के बाद संप्रति हैदराबाद के “कर्षक आर्ट प्रिंटर्स' में कार्यरत हैं। पेशे से डिज़ाइनर होते हुए भी साहित्य के प्रति इनकी विशेष अभिरूचि है।
आपने एक दर्जन से भी अधिक तेलुगु ग्रंथों का अनुवाद हिन्दी में किया है। आपकी कृतियों में 30 कहानियाँ, 300 निबंध तथा कुछ कविताएँ भी हैं। आप हिन्दी, तेलुगु तथा अंग्रेज़ी में भी लिखते हैं। अनुवाद क्षेत्र में आप सिद्धहस्त हैं।
आँध्र प्रदेश हिन्दी अकादेमी द्वारा अनुवाद पुरस्कार, आचार्य भीमसेन निर्मल अवार्ड, बापू जी का अभिनन्दन सत्कार कमलाकर मेमोरियल ट्रस्ट के यंग जनरेशन अवार्ड के साथ-साथ कई अन्य संस्थाओं से भी आप सम्मानित तथा पुरस्कृत हुए हैं।

कहानी

ग्यारह कद्दू और बारह कोतवाल

सुरवरम प्रतापरेड्डी

मुगलों के शासन काल में जिसकी लाठी उसकी भैंस थी। एक भोला कापु (एक जाति) किसान कैसे लखपति बना इस कहानी में बताया गया है

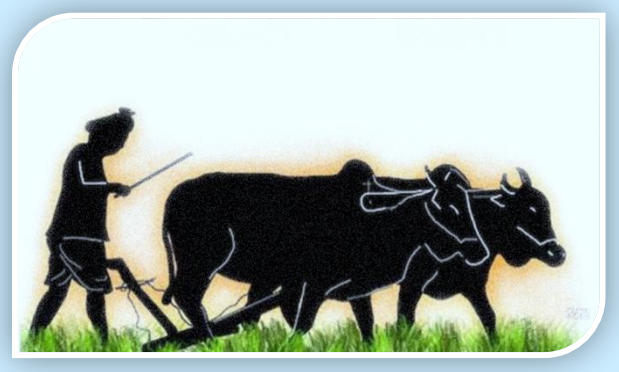

एक दिन एक ग्रामीण किसान ग्यारह कद्दू कंबल में डालकर एक गाँव सें उन्हें बेचने गया। ग्राम की स्त्रियाँ उसे घेरकर कद्दुओं का मूल्य पूछ रही थीं। इतने में माली पटेल' वहाँ आ गया। “अरे! यहाँ तुझे किसने बैठने को कहां? एक भली बात सुन, एक कद्दू देकर चला जा!

वह एक बड़ा कद्दू लेकर चला गया। कापु किसान गुनगुनाता रहा। इतने में तिल पर ताड़ के प्रहार-सा पुलिस पटेल वहाँ आया। “अरे! उसे पकड़ लो। मुसाफिरों के हिसाब में उसका नाम दर्ज कराना है।” गर्जन किया। तलारि (चौकीदार) आकर अपने लिए एक और पटेल के लिए एक कद्दू बलात् ले गया। कुछ देर बाद बड़ा चौकीदार आया। “अरे परसों तेरे जैसा ही एक आदमी आया था। शाम के समय तक तरकारी बेचने का स्वॉग भर उसने राह में बनिये के घर में सेंध डाली। चल! मैं तुझे आँगन में बाँध दूँगा।' कहते हुए उसने एक कद्दू हाथ में लिया। “हुज़ूर! मैं चोर नहीं, साहब भी नहीं, पास का. गाँववाला हूँ। हमेशा आता-जाता रहता हूँ। अभी तक तीन कद्दू उड़ गये हैं। अब आप कहाँ से टपक पड़े?” वह अपने दुखड़े का बयान करता रहा। उसी कद्दू से उसके सिर पर मार कर कद्दू साथ लेकर चला गया। इसी प्रकार उस गाँव के पुजारी,

पुरोहित, लुहार, बढ़ई आदि गाँव के ग्यारह नामी व्यक्ति एक के बाद एक आकर सारे कद्दू उड़ा ले गए। बह किसान रोता हुआ, कंबल झटककर उठ रहा था। अँधेरे में ही खेत में चला गया। कर्णम् (पटवारी) तभी उसके आगे प्रकट हुआ। “क्यों रे!

रो रहा है। तुझे किसने क्या कहा? मुझे बता मै इस गाव का कर्णम हूँ। जो का गलती करता है मैं उसे दण्ड दूँगा।” कहा। “न्याय करनेवाला प्रभु क्या एक भी इस गाँव मैं है? नारायण! यह कैसा गाँव है?"

कहकर किसान अपने 11 कद्दुओ के गायब होने की बात बताकर “महाशय! करणम! आप ही नारायण हैं किसी तरह मुझे पार लगाओ कहकर कंबल को उसके पैरों में डाल, पैरों को पकड़ लिया। कर्णम ने जोर की लात लगाकर, उस कंबल को खींचकर, कोंख में दबाकर उसने यों कहा - “अरे लुच्चा! सबको उनकी बारी का कद्दू देकर, मुझे उससे वंचित कर रहा है। मैं क्या चौकीदार से भी गया गुजरा हूँ। बढ़ई से भी बेकार हूँ? जिसे वर्णमाला का ज्ञान नहीं, उस माली पटेल से कम हूँ ? वे ही तुझे बड़े लगते हैं? ला मेरा कद्दू। उसे देकर कंबल ले जा।' कहकर आंखे लाल कर कंबल के साथ अपने घर चला गया।

किसान ने नीचे से ऊपर तक देखा। “क्या तू भी उतना ही हैं? वह सारा गाँव ऐसा ही है। यह कैसा देश रे! गया-गुजरा देश! अब मुझ जैसा अभागा कैसे जियेगा?” गुनगुनाते पटवारी के पीछे कुछ दूर चलकर उससे अनुनय-विनय करता चला। “अरे! एक पग भी बढ़ाया तो तेरा सिर फोड़ दूँगा। सावधान! खबरदार!” कहा पटवारी ने। किसान बेचारे को कुछ सूझा नहीं। वह ठगा-सा खड़ा रहा। बच्चे-सा कुछ समय रोता रहा। एक-दो औरतों ने उसे देखकर कहा- “जा! जा! सबेरे उठकर तूने किसका मुह देखा? इस गाँव के महाराज सब ऐसे ही हैं। अगली बार यहाँ आना नहीं हितबोध किया। किसान लंबी सोच के साथ घर की राह ली। घत्! हमारा भी कोई जीवन हैं? जन्म लेते हैं तो पंटेल-पटवारी हो जन्में। अन्यथा चौकीदार बन कर। यह जीवन मिला भी एक मरा भी तो एक ही... इसका बदला नहीं लिया तो जीवन ही क्या? पर मैं तो गरीब हूँ। कर हीं क्या सकूंगा? इस चौकीदार को हाथ भर की जमीन भी नहीं। मेरे पास खेत है। पत्नी के पास एक गहना हैं। एक बैल है। क्या मैं चौकीदार से गया-गुजरा हूँ? देवता को भी मारने की ताकत है। मैं भी कुछ उल्टा-सीधा करूँगा! ऐसी सोच में डूब चल रहा था। अपने कुएँ के समीप पहुँचा। तट पर बैठ गया। अभी लंबी सोच में ही था। अचानक उसके मस्तिष्क मैं बिजली की चमक-सी एक सोच चमकती प्रवेश कर गई। चट उठ गया! गाँव में गया। सीधा पत्नी के पास जाकर- *अरी! तेरा आभूषण बाजूबंद इधर दे देना।

तुझे कुछ नहीं होगा। अगली उगादि तक ऐसे सौ बाजूबंद बना दूँगा। मेरा नाम वेंकय्या! बोलना” कहकर उसने बाजूबंद खींच लिया। उसने उसे पटेल को दो सौ रुपयों में बेचा। पैसे लेकर दस मील की दूरी पर स्थित शहर पहुँच गया। शेरवानी, निकर, मोजे, पगड़ी, कमरपट्टी, गिल्टी आदि साधनों को जमा कर लिया। चार अरब जवानों को साथ लिया। सबकों गिल्टियाँ पहनाई। स्वयं भी वेश--भूषा में सज गया। एक बग्गी किरायें पर लिया।

चार कोस की दूरी पर एक बड़ी बस्ती है। वह एक चौराहा है। बड़े व्यापार का अड्डा। अधिकारी, मंत्री, नवाब भी उस मार्ग से शिकार को जाने का मार्ग। उस गाँव में किसान उतरां। गाँव के कूएँ के तट पर एक बड़ा बरगद था। उसके तले मेज-कुर्सी डलवाया। जवानों को कूएँ पर पहरे पर लगाया। सबेरे गाँव की औरतें पानी भरने को आने पर वे जवान- “खबरदार! घड़े के पीछे एक पैसा देकर पानी ले जाओ जवान धमकाते थे। पटेल-पटवारी आये। “अरे हमारे पक्ष में सरकार का हुकुम हुआ।

देखे यह फरमान!" उर्दू भाषा में लिखे फरमान को बताया किसान ने। हो सकता है, यह सोच ग्राम के अधिकारी चुप बैठ गए।

जैसे-जैसे दिन बीतते गए पैसा भी वसूल होता गया। पहलें-पहल दिन में 20 रुपये वसूल होते थे। क्रमशः आय बढ़ती गई। "मर्रिमान पर राजा की चुंगी" की बात आस-पास के चार कोस तक ख्यात हुई। इस प्रकार सप्ताह, महीने, साल बीत गये। एक दिन सूबेदार दौरे पर आया। उसने वहाँ तंबू लगवाये। उसके नौकर पानी के लिए गये तो "पैसा लॉव" कहा वहाँ के जवानों ने। वे खाली घड़े लेकर लौट गये। नौकरों ने सूबेदार से कहा- "सरकार! चार अरबी जवान बिना चुंगी दिये पानी लेने नहीं देते। हमने कहा सूबेदार सरकार के लिए। वे हमें तारने आ रहे।" नौकरों ने सूबेदार से विनती की। वहीं उनकी सेवा में पटेल--पटवारी थे। उन्होंने कहा- "हुजूर दस सालों से मर्रिमान पर राजा की चुंगी ठीक से वसूल हो रही है। इसके लिए सरकार का फरमान भी है।" "तो क्या? फरमान हो सकता है।' यह सुन उसने पैसे देकर पानीं मैंगवा लिया।

एक दिन दीवान बहादुर ने डेरा (तंबू) डलवाया। उसे भी यह सब भोगना पड़ा। अरब घड़े के पीछे एक पैसा वसूल रहे हैं। थोड़ा भी कम नहीं लेते। दीवान सब कुछ सुनकर यों सोचने लगे। हमारे हुजूर ने शायद फ़रमान दिया होगा। नहीं तो मुझसे पैसा मांगने का दम किसमें होता?

दीवान ने भी पैसा देकर पानी मँगवा लिया। अब किसान का अहं बढ़ गया। सूबेदार ही नहीं दीवान बहादुर भी बिना कुछ कहे चुंगी चुकाकर चला गया। यह देख लोगों ने मन में सोचा अरे! इसका क्या दबदबा है? कुछ दिन बीते कि नवाब साहब शिकार के लिए जाते-जाते शाम होने पर रात में उसी गाँव में डेरा डाला। नवाब हो, कोई भी हो किसान को परवाह नहीं रही। नवाब का नौकर पानी के लिए गया तो उसने कहा- "पैसा दो, पानी ले जाओ।" नौकर ने नवाब से शिकायत की। नवाब ने सोचा- "हमारे दीवान ने मेरें खज़ाने को भरने के लिए शायद ऐसा हुक्म दिया होगा। शहर जाने के बाद इस पर सोचूँगा। अब तो मुझे भी कानून के अनुसार चलना होगा।" यह सोच उसने भी चुंगी दी।

अब तक मर्रिमान परगना में दुमंजिला बंगला (भवन) खड़ा हो गया। उस गाँव की आधी भूमि किसान की बनी। 100 बैलों की खेतीबाड़ी। चारों ओर दस कोस की दूरी तक ऋण दिया। नवाब के वहाँ आकर जाने के बाद दीवान को बुलाकर पूछा- "तुमने क्यों पानी की चुंगी का प्रबंध किया? तो सरासर अन्याय है न?" तब दीवान ने कहा- "बंदगाने आबी, हुजूर मैनें भी इसी बात की गुज़ारिश करने की ठानी थी। मैंने भी चुंगी चुकाई। हुजूर ने फरमान मुबारक जारी किया मानकर मैं चुप रहा।' इस पर 'अरे! तूने हुकुम नहीं दिया, मैंने हुकुम नहीं दिया, 15 वर्षों से वह कैसे चुंगी वसूल रहा हैं? उसे जल्दी गिरफ्तार कर मेरे आगे पेश कर" नवाब गरज पड़े।

किसान ऐसे फरमान के लिए 40 वर्ष से प्रतीक्षा करता रहा। सौ अशरफ़ियों को स्वर्ण-थाल में डालकर, रेशमी काम किये मखमल कपड़े से ढककर किसान ने हुज़ूर के दरबार में जाकर नज़राना दिया। नज़राना देख हुज़ूर शांत हुए। "क्या रे? तुझे किसने चुंगी वसूलने का हुकुम दिया?' नवाब ने पूछा। "नवाब साहब, हुज़ूर! ग्यारह कद्दू बारह कोतवाल का हुक्म बना मर्रिमान परगना की चुंगी भी ऐसी ही बनी।" किसान ने कहा। "क्या कहता है रें? तेरा कहा कुछ भी समझ में नहीं आ रहा। ठीक-ठीक बता! "यदि हुज़ूर मेरी गलती माफ करेंगे तो मैं सब कुछ बताऊँगा। "ठीक है। बता। देखेंगे।

किसान ने अपनी कथा को सविस्तार बताया। हुज़ूर हँसतें-हँसतें सब कुछ सुन- "अरे! तू तो बड़ा होशियार है। तेरी गलती माफ़ करता हूँ। अबसे तू हमारी देवड़ी के पास रात में घंटे बजाता रह। यही तेरा दण्ड हैं" कहा।

कुछ दिन तक किसान का दिमाग काम नहीं कर सका। उसकी आय चली गई थी। अधिकार भी चला गया। उरो पूछनेवाले भी नहीं। रात भर जागना होगा। एक बार नींद की स्थिति में रात के ग्यारह बजे घंटा बजाना भूल गया। 12 बजे उठकर उसने बजाया। इस छोटी गलती पर सबकुछ उल्टा-सीधा हुआ।

हुज़ूर रोज 8 बजे एक-एक बेगम के पास जाते थे। 4 बजे घंटा बजा नहीं। इस कारण हुज़ूर बेगम के पास गये नहीं। अगले दिन 11 बजेवाली बेगम घंटा बजाते किसान को बुलाकर- "अरे मेरा घंटा बिना भूले बजाता रह। महीने में 50 रुपये दूँगी" कहा। "जी-जी हुजूर!" उसने घबराकर कहा। 'इन घंटों में कोई रहस्य है' किसान को लगा। एक दिन उसने 9वाँ घंटा बजाना बंद किया। अगले दिन दस बजे का घंटा बजाना बंद किया। एक दिन 12 बजे को छोड़ दिया। जो घंटा बजता नहीं था अगलें दिन उस घंटे की बेगम आती और किसान को वेतन देने को कहती। इस प्रकार उसे महीने में 400 रुपये महीने के वेतन के रूप में मिलने लगे। कुछ वर्ष बाद नवाब को यह सूचना मिली। उसे चालाक समझ उसने जहाँ वसूल की थी उस गाँव को उसे इनाम में दे दिया। देखा न कद्दू की महिमा! उसके बाद कद्दू काटने का अर्थ बना ऐसी ही कहानी बतानेवाले को कहते हैं।

(सन् 1930)

अनुवाद : डॉ. एम. रंगय्या

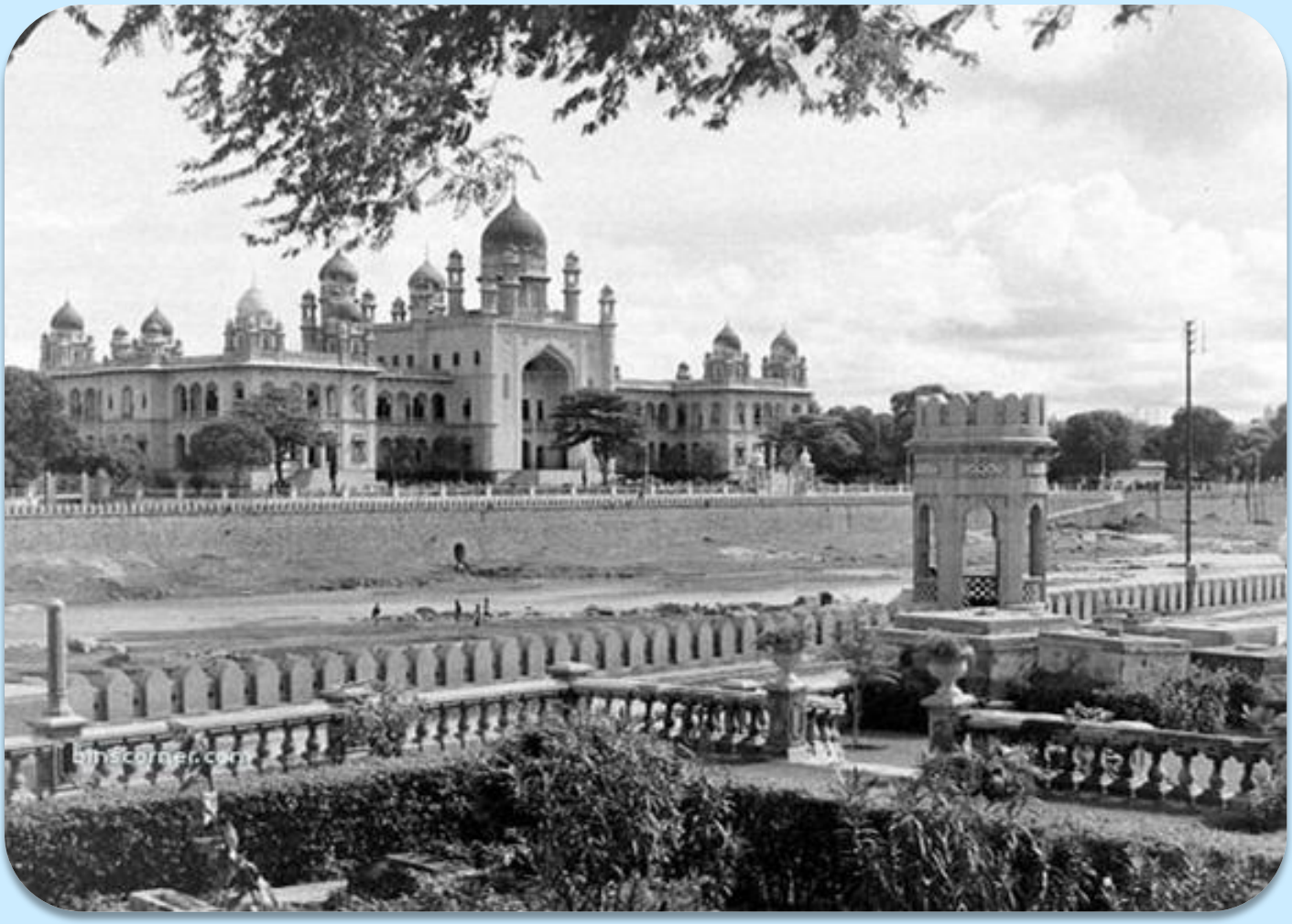

हिन्दी
कहानियाँ

किशन शर्मा

तिराहे पर खड़ा वह उचक-उचक कर बाईं, दायीं ओर बीच की राह पर दूर-दूर तक देखने की कोशिश कर रहा था। न जाने कब से वह इन राहों पर भटकता रहा है, वह तलाशता रहा है ऐसी राह जो उसे इस जगह से कहीं खुले में निकाल ले जाये, पर यह तीनों राहें बन्द हो जाती हैं एक जगह पहुंच कर ।

काफी देर भटकते रहने से उसकी सांस भर गई है। हर सांस कष्ट से नीचे तक जाती है और फिर ऊपर उठकर विश्वास में बदल जाती है।

हर राह के इर्द-गिर्द उसने बस्ती देखी थी और मकान भी उसे नजर आये थे। वह उन बस्तियों में से किसी एक क्यों न घुस जाये और बाहर जाने वाले किसी रास्ते को तलाशे, या फिर क्यों न वह बस्ती में पहुंचकर किसी से दरखास्त करे कि इस जगह से बाहर ले जाने वाले रास्ता कौन सा है। इस सोच ने उसमें एक मरियल सी आस जगा दी, हो सकता है बस्ती में उसे कोई जना ऐसा मिल जाय जो इसे जानता या पहचानता हो। क्षीण त्रास से सांस घिरने लगी, बजाय मुंह के वह नाक से सांस लेने लगा। उसकी थकान कम हो गई थी।

ताजगी महसूस करने लगा था। तिराहे के दायीं और उसे एक बस्ती दिखी और दिखा बस्ती में जाने का एक बड़ा दरवाजा । दरवाजे को पार कर जब वह अन्दर दाखिल हुआ तो उसने देखा, सामने, दायीं-बाईं और दरवाजे के अगल-बगल मकान बने हुए हैं । वहां चहल-पहल बिल्कुल नहीं थी । दरवाजे सब मकानों के बंद थे । थोड़ी देर तक वह इंतजार करता रहा किसी भी मकान मैं से किसी के बाहर निकलने का , पर उसका इंतजार करना फिजूल ही रहा ।

वह उस मकान की ओर बढ़ चला जिस पर सबसे पहले उसकी निगाह पड़ी थी । उसके दरवाजे तक पहुंच कर वह आवाज लगाने की सोच ही रहा था कि उसे खुद का ऐसा करना अहमकाना लगा । उसकी आवाज का मकान में से किसी ने जवाब

भी दिया तो वह उससे पूछेगा क्या। यह तो वह भी साफ-साफ देख पा रहा था कि उस चौकनुमा बस्ती में से बाहर जाने और उसमें अन्दर आने का केवल एक ही रास्ता। वह था वही दरवाजा जिससे वह वहां आया है।

घोर निराशा उसके दिल और दिमाग पर तारी हो गई। अब क्या करे?

क्या न करे ? कोई तदवीर सूझी नहीं। वह जिस मकान तक पहुंच गया था उसके आगे के मकानों के करीब-करीब वह चलने लगा। एक चक्कर। उसने दायें हाथ की छोटी अंगुली के पहले खाने पर अंगूठा रखा। दो चक्कर। अंगूठा दूसरे खाने में सरका दिया। तीसरा चक्कर अंगूठा तीसरे खाने में सरकाते ही बड़े दरवाजे के करीब बनी सीढ़ियां उसे नजर आ गईं बिल्कुल साफ-साफ।

वह जोश से भर गया। करीब-करीब भाग कर वह सीढ़ियों तक पहुंचा और बहदवासी की हालत में दो-दो सीढ़ी एक साथ चढ़ता हुआ ऊपर पहुंच गया। चारों तरफ मकानों की छतें थी हौद की मानिंद। वह डोलियां फलांगता हुआ छतों पर दौड़ने लगा। एक छत पर पहुंच कर वह ठिठक गया। उस छत से सीढ़ी नीचे तक थी और फिर बहुत लम्बा चौड़ा मैदान था | मैदान में हजारों लोग थे जो अलग-अलग रंगों के झंडे हाथों में पकड़े हुए थे और नारे लगा रहे थे।

नारे गड्ड मड्ड होने के कारण उसकी समझ में नहीं आ रहे थे। कुछ साफ सुनाई पड़ रहा था तो इस इतना, जिन्दाबाद ! मुर्दाबाद ! ले के रहेंगे। नहीं चलेगी। नहीं चलेगी। नारों के इन टुकड़ों ने उसकी समझ को और चक्कर में डाल दिया। अलबत्ता यह ख्याल उसे हुआ कि इतने लोग जरूर कहीं से आयें होंगे और इन सबको या इनमें से किन्हीं को यह पक्का पता होगा कि तिराहे से फटने वाली राहों के अलावा कोई राह ऐसी है जो कहीं जाकर बन्द न हो और दूर-दूर तक चलती चली जाये।

वह उनके करीब गया। कोई उसकी तरफ देखेगा और उससे कुछ पूछेगा या कहेगा। उसने सोचा , पर एक-एक करके बहुत से लोगों की मुख-मुद्रा देखकर उसे लगा। वह लोग एक दूसरे के खिलाफ आवाज बुलन्द कर रहे हैं और हाव-भाव से विरोधी को डरा धमका रहे हैं। उनमें से किसी को उससे सरोकार ही नहीं है। उसकी मौजूदगी उनके लिए बेमानी है। वह खड़ा रहे तो उसकी मर्जी। चला जाये तो मर्जी।

बेचारगी से उसने चलने को कदम बढ़ाया ही था कि देखा, एक से रंग के झंडे लिए हुए लोग अलग से खड़े हो रहे हैं और जुलूस बनाकर चलने लगे हैं। जरूर यह अब कहीं जायेंगे। बेकार भटकने से तो अच्छा है उनके पीछे-पीछे चला जाये। उसने सोचा वह उनके पीछे-पीछे चल दिया , पर जैसे ही उसने उन्हें मैदान में ही मुड़ते हुए देखा उसे अपने सोच पर पछतावा हुआ। उसने एक जने को बांह से पकड़ कर पूछा, ,'यहां से बाहर निकलने का रास्ता कौन सा है ? 'उस आदमी ने बांह को झटके से छुड़ा कर एक तरफ इशारा कर दिया।

वह उस तरफ चल दिया। आगे जितनी दूर तक वह देख सकता था इतनी दूर देखने की कोशिश करते हुए। सामने मकान दिखते ही उसके कदमों मैं तेजी आ गई। मन ही मन उसने उस आदमी का शुक्रिया अदा किया जिसने उसे इस तरफ आने

का रास्ता बताया। वह एक गली तक पहुंच गया जिसके दोनों तरफ गलियां थी और उन गलियों के इर्द-गिर्द मकान थे। लोग आ जा भी रहे थे लेकिन अपने में ही खोये हुए और दूसरों से बेपरवाह ।

वह बाईं ओर गली में मुड़ गया जल्दी जल्दी कदम बढ़ाते हुए. इसकी चिंता न करते हुए कि वह कितनी दूर चला है। सामने मकान देखते ही वह बुदबुदाया, बंद गली । धत तेरी की । वह मुड़ा और फिर उसी जगह पहुंच गया जहाँ से वह चला था। गली जो सामने थी उसके मुहाने पर खड़ा होकर उचक कर ताकने लगा। वह पक्का यकीं कर लेना चाहता था कि यह अंधी गली तो नहीं है। तय न कर पा कर वह आगे बढ़ा सामने नजर टिकाये हुए। गली के आखिर में बिल्कुल बीचोंबीच मकान पर नजर पड़ते ही वह मुड़ा खास गली की तरफ। उस पर चलते हुए जो भी गली दिखी उसमें वह घुसा बेतहासा दौड़ते हुए । बन्द गली के आखिरी मकान को ही देखते हुए उसे झटका लगता और वह मुड पड़ता है।

उसे इतना होश भी ने ही रहा था कि वह कितनी गलियों में जाकर वापस आया है | पसीने से तरबतर और थक कर चूर हो जाने पर भी वह बाहर निकल जाने को छटपटाने लगा था ।

खास गली के बीच भी एक बड़ी इमारत देखकर उसके पैर धरती से चिपक से गये । उसके करीब से लोग गुजर गये पर उसने उनकी और ध्यान नहीं दिया। वह यह जरूर देख पाया कि लोग इस इमारत में से आ जा रहे थे बेखटके, ऐसे कि वह भी आम रास्ता हो। इमारत में घुसते ही उसको बेहद प्यास का अहसास हुआ। अब उसके लिए फौरी सवाल पानी की तलाश का हो गया। वहां तक कि कोई सामने पड़ जाय तो उसे रोककर आजिजी से कहे, भाई साहब, पीने का पानी कहीं मिल सकेगा? पर उसकी आत्मा को यह गवारा न लगा। उसने बरज दिया ।

पेंट की जेब में हाथ डाल वह इमीनान से इमारत में दाखिल हो गया। वह कई कमरों के सामने रुकता हुआ ऐसे चल रहा था जैसे उसे किसी की तलाश नहीं थी, वह भी इसमें ही रहता है | कमरों में बैठे लोग उसे अजीब से लगे । कोई भी कुछ करता हुआ उसे नहीं दिखा। लोग सटे हुए बैठे खुसर-पुसर कर रहे थे। वह सहमे हुए भी उसे लगे। जरा सी आहट से वह चौंक पड़ते थे और दरवाजे पर खोजी निगाह डालते थे। उसकी इच्छा हुई कि वह किसी कमरे में जाकर खैर खबर ले। फिर उसने सोचा', छोड़ो भी । कोई भी तो उसकी तरफ तवज्जोह नहीं दे रहा है । '

एक जगह रुककर उसने चारों तरफ देखा। करीब-करीब सभी कमरों के सामने से वह गुजर चुका था । दुबारा चक्कर लगाने से क्या फायदा। उसे जीना दिखा । वह उसकी पैड़ियों पर चढ़ने लगा आराम से । उसे थोड़ी सी गरमाहट महसूस हुई । एक बुखारी में कुछ लोग बैठे थे । सबके हाथ में गिलास थे और उनमें से भाप निकल रही थी । खाली बैंच देखकर वह भी बैठ गया। एक बूढ़े ने उसकी ओर ताका। फिर वह उठा-घुटनों पर हथेली जमा कर। कमर से वह झुक रहा था। उसने एक गिलास उठाकर उसे थमा दिया।

'इसमें क्या है ?' पूछना चाह कर भी वह पूछ न पाया । और लोग भी पी रहे हैं जो कुछ भी है वह तो वह भी पी कर क्यों न देख ले । गिलास होंठ से लगाते ही एकदम से नाक और चेहरे पर सिकताव खा महसूस हुआ | उसने एक घूंट गले में उतार कर कृतज्ञता के भाव से बूढ़े की ओर देखा,पर बूढ़े ने शायद इस तरह को भाव की अपेक्षा नहीं की थी । वह अंगीठी

पर रखी भगोनी में चम्मच डाल कर हिला रहा था। गिलास खाली करकें उसने जेब में हाथ डाला । बूढ़े ने 'रहने दो' के भाव से हाथ झटका दिया । वह बैठा रहा काफी देर और लोगों को बतियाते देखता और सुनता रहा । वह यह भूल चुका था कि वह इस जगह से बाहर निकल जाने को कितना बेताब था । यहां फंस जाने से कितनी हटपटाहट और घुटन महसूस करता रहा था ।

वह उठकर पास वाली उस बैंच पर जा बैठा जिस पर दो तीन और बैठे थे । एक जना उससे मुखातिब हुआ तो बिना आगा पीछा सोचे उसने पूछ लिया, 'आप यहां कब से हैं ?' उसने पास ही एक की गोद में लेटे एक बच्चे की ओर देखा ।

'आप कब तक यहां रहेंगे ?' दूसरा सवाल उसने किया जैसे उससे नहीं अपने आपसे। उसने उस बूढ़े की ओर देखा। 'यहां से बाहर जाने का कोई रास्ता है ?' उसके स्वर में झुंझलाहट साफ झलक रही थी। उस आदमी ने ऊपर देखा और अपने ख्यालों में खो गया।

वह चिढ़ गया उस आदमी की रुखाई से। एक लफ्ज भी नहीं बोला था। इतनी बेरुखी । वह उठ बैठा, पर वहां से चल पड़ने से पहले एक बार फिर उसने उस बूढ़े के प्रति हाव-भाव से आभार जरूर प्रदर्शित किया। वह वापस जीने पर आ गया । अंधेरा घिरने लगा था पर उसे अंधेरे-उजाले की परवाह नहीं थी। वह यही फंसे रहकर बुढ़ापा आने तक नहीं ठहर रह सकता था। वह यहां से कैसे भी निकल भागना चाहता था बद से बदतर जगह। सीढ़ियां चढ़ता हुए वह पहली मंजिल पर पहुंच गया था। और फिर एक गैलेरी में कहीं कोई गहमागहमी नहीं थी।| कमरों में लोग बैठे हुए थे या फिर सो रहे थे इस जगह के होकर।

वह ऊपर जाने के लिए फिर जीने में चढ़ने लगा। दूसरी मंजिल पर भी यही आलम था । इसे बेहद कोफ्त होने लगी । वह छत पर चला गया और वहां एक कोने में उकड़ूस बैठ गया। थकान के कारण उसकी पलक झपकने लगी । वह बैठे-बैठे ही सो गया। वह जगा तो सुबह हो चली थी । उसने नजर ऊपर की तो उसे एक दरवाजा दिखाई दिया - ऊपर से गोल | उसमें से दिव्य रोशनी बाहर आ रही थी और सुगंध भी । बरबस दिल और दिमाग को खींच लेने वाली मधुर ध्वनि उसे सुनाई दी । वह उठा और यंत्रवत् उस गोल दरवाजे की ओर बढ़ा।

दहलीज पर जाकर वह खड़ा हो गया। दरवाजे के बाहर धुंध छायी हुई थी जिससे वह कुछ भी देख नहीं पा रहा था। उसने कदम बढ़ाये, चन्द कदम। उसे लगा वह अधर में लटक गया है और नीचे गिरता जा रहा है। उसकी चीख निकलने के पहले वह अचेत हो गया था।

अशोक आत्रेय

दोस्तो । फिलवक्त शुरूआत में ही अगरचे किसी परेशानी से कोई सिलसिला शुरू किया जाए तो शायद यह सभी को नागवार ही गुजरेगा। लेकिन किया भी क्या जाए जब हालात ऐसे ही पैदा हो जाएं तो ? कोई न कोई मुनासिब रास्ता तो निकालना ही पड़ता है। फिर आपका वास्ता भी किसी टटपूंजिए से नहीं पड़ा है आप जिनसे अब दो- दो हाथ करने जारहे हैं वह और कुछ चाहे हो ना हो एक बातपोशी जरूर है और यह भी सभी को मालूम है कि वह किसी भी सूरत में हार मानने वाली शख्सियत नहीं है,फिर आन बान और शान की बात भी यही है कि उसका नाम भी अल्लाह के पहले 'अक्षर' अलिफ से ही शुरू है। कहना होगा अलिफ और अक्षर काफी हद तक समानार्थी यानि कि एक जैसे एक ही सिलसिले या सफर या आसमानी किताब घर से जुड़े दो जुडवां भाई हैं।

तो हाजिर है आपके सामने आपकी इस कथा सराय में यह नाचीज असद बाराबंकी। यह बाराबंकी केवल इसलिए कि कभी इन असद साहब के पुरखे बाराबंकी के नबाब हुआ करते थे लेकिन अब कहां की नबाबी और कहां की वो शान शौकत व आबो अदब ।

बस कहने भर को कुछ यादें हैं और उन्ही यादों के सहारे जिंदा हैं असद साहब की वह जिंदादिली भी जो आज तक उनको एक ऐसे खयाली ताज और तख्त का बादशाह बनाए हुए है जो किसी भी हालत में किसी से छीनी नहीं जाती।

तो जनाब यह बाराबंकी की बादशाहत भी लखनऊ के उन दो बांकों से कतई कम नहीं है जो किसी जमाने में उर्दू- हिंदी लिटरेचर की खास पहचान बन गये थे । याद कीजिए वे तांगा चलाने वाले पुश्तैनी नबाब घराने के किरदार। खैर बात छोडिए। यह बात इसलिए अलग है कि हमारे असद साहब तांगा नहीं चलाते वे एक जानेमाने बातपोशी हैं और बस यही तो वह खूबी है जिसकी वजह से आज वे हमारे बीच हैं। यह खुशकिस्मती है हमारी।

तो फिर देर किस बात की । सुनते हैं हम अपने बातपोश भाईजान असद बाराबंकी से उनकी ही जुबानी उनकी कहानी । - जी हां मैं ही तो हूं आपका एक अजीम दोस्त। यह बात परोशी का इल्म मेरे खून में ही है जनाब। अगर सिलसिले की बात की जाए तो अमीर खुसरो का नाम ही क्यों ना लिया जाए। यह तो हम सभी हिन्दुस्तानियों की पहचान ही तो होगी। इधर - उधर की सियासत करने के बजाय सौ फीसदी सच भी तो यही है। लेकिन हमारा मकसद यहां कुछ दूसरा ही है।

यहां इतिहास भूगोल और मजहब और उससे भी आगे के सारे दुनियां जहान की अदबी और आसमानी किताबों के किस्से सुनने की किसी को फुर्सत नहीं। यह महफिल है बस दस बीस मिनट की। और मजा भी इसी में है और दारोमदार भी कि हम अपनी जाजम को बस इतनी सी देर में समेट लें और रुखसत लें। यानि आपसे इजाजत ली जाए।

तो दोस्तो आपका यह बातपोश असद बाराबंकी आपसे फिलहाल यह कहना ही मुनासिब समझता है कि वह अपनी दस मिनट की किस्सागोई इस तरह से आपके सामने रखदें कि यह हमारा बात परोसी का हुनर भी आपके सामने आजाए और हमारी शान में कुछ ऐसे कसीदे भी पढ लिए जाएं जो हमारे पुरखों की इज्जत अफजाई को बढाने वाले ही साबित हों।

एक छोटा सा मुहावरा तो यह भी है कि सांप भी मर जाए और लाठी भी नही टूटे। लेकिन यह यहां फिट नहीं बैठता। यहां बात फसादी नहीं मामला मोहब्बत का है जो जहां तक भी पहुंचे।

आपका यह बातपोश कभी नहीं चाहेगा कि हम लखनऊ के दो बांकों की तरह सड़क पर भीड़ इकट्ठी करें,इधर- उधर की नौटंकी करें और उस सबका हासिल यह हो कि बात वहीं घूमफिरकर पहुंच जाए जहां से शुरू हुई थी। दोनों नबाब और हमारे वे दो बांके अपने अपने तांगे बिना किसी हुज्जत के साइड से निकालकर अपनी अपनी राह चले जाएं।

आप आ गये ना मेरी बात परोसी की भूल भुलैया में ? तो इसमें मेरी गल्ती कहां है दोस्त ? यही तो हमारे हुनरी मदरसे की तारीफ है। आप से बस इतनी सी इल्तजा कि आप हमारे साथ चलते चलिए। तो फिलहाल आप आ खड़े हुए हैं अब लखनऊ की किसी अनजान सड़क और दो तांगेवालों की चकल्लस से अब इस अवधे शाम में एक दूसरे ट्यूरिस्ट स्टोप इमामबाडे और भूलभुलैया में। यही वही इमामबाडा है जनाब जिसमें है एक भूल भुलैया।

यह इमाम बाडा छोटा है या बडा फिलहाल यह मुझे याद नहीं है लेकिन इसकी एक जादुई खूबी यही है कि आज भी यह हमारे अंग्रेजी के मुहावरे ' पिन ड्राप साइलेंस ' को अपने साइंटिफिक व नाटकीय अंदाज में उसी तरह से मुकम्मल करता है जिसे उर्दू या फारसी अंदाज में कहा जाता है - हाथ कंगन को आरसी क्या ? पढे लिखे को फारसी क्या ? फारसी मतलब पर्शियन यानि की सारे संसार की सबसे मीठी जुबान। कभी इसी जुबान में हिन्दुस्तान को धरती का स्वर्ग कहा गया था। आपको बोलकर बता सकता हूं जैसे सचमुच कोई कोयल ही बोल रही है ।

'गर बहिश्त हश्त हमिंजाज हमिंजाज हमिंजाज । दुनिया में अगर कहीं जन्नत है तो यहीं है यहीं है यहीं है। '

तो दोस्तो यह बात किसी और ने नहीं मुगल बादशाह जहांगीर ने कश्मीर के बारे में कही थी जो हिन्दुस्तान का स्वर्ग है। और यह मीठी बोली सुनने के लिए तो आपको एक सैकिण्ड के लिए अब तानसेन की बजाय कानसेन भी होना पड़ेगा। इस नाचीज के ही अल्फाज में । तर्जुमे में। कम से कम मेरी इस दास्तानगोई के मुतअल्लिक जिसे मैं कला का दर्जा देना पसंद करूंगा। क्या आप ऐसा नहीं सोचते ? कम अज कम अपने मादरे वतन के हक या मोहब्बत में !

अब इसी शीरीं जुबान में अगर आप लखनऊ के इमामबाडे के विशाल महलनुमा हाल की पहली या दूसरी मंजिल के एक कोने में केवल दीवार से चिपककर अपनी फुसफुसाहट में भी कुछ भी कहेंगे - जैसे जयहिन्द या वन्देमातरम या मां तुझे सलाम। तो आपकी यही आवाज इमामबाडे के दूसरे कोने में दीवार पर टिके कम से कम एक हजार फीट की दूरी पर साफ साफ सुनाई देगी । दोस्तो यह एक कोने में दीया सलाई जलाने या किसी कागज को फाड़ने की आवाज के साथ भी ठीक उसी तरह से होगा। यही है भारत का जादू। जो कल भी था आज भी है और कल भी रहेगा। यही है भारत जिसे लोग कभी सोने की चिड़िया कहते थे। और जिसके लिए हमारे अजीम शायर अल्लामा इकबाल ने अपनी शायरी में ही कहा है - सारे जहां से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा । हम बुलबुलें हैं इसकी। ये गुलिस्तां हमारा। तो दोस्तो आपसे इस नगमानिगार का अब रुखसत लेने का वक्त आ गया लगता है। जी हां । ये आकाशवाणी है। सामने कांच की खिडकी से इशारा हो रहा है। अवर टाइम इज ओवर। बस इतनी सी कहानी। धन्यवाद।

कहानी

उजाड़ और अधमरे

मणि मधुकर

मेरे जूतों में बार बार रेत घुस जाती थी और तलुवों से लेकर अंगुलियों की दरारों तक चिकौटी सी काटने लगती थी, मैं उसे फटकारते.. झाड़ते परेशान हो उठा था, कंधे पर लद्धड़ कंबल था....भैंसे के सूखे, भारी चमड़े जैसा। मुझसे संभाले नहीं

संभल रहा था। पाजामें में भरूट के कांटों की लड़ियां इस कदर लिपट गयी थीं कि उसके पाँयचे बिल्कुल अलग नजर आते थे। घंस-घंसीली पगडंडी पर चलते-चलते मेरे फेफड़े उल्टे बोल बोलने लगे थे और नथूनों में साँस समा नहीं रही थी। अरंड के दरख्तों की लम्बी कतार लांघने के बाद मुझे रिगसाना ढाणी का मुंह दिखलायी दिया....टीलों और झाड़-झंखाड़ों के बीच खोह की तरहे खुला हुआ,. दूर से डरावना, किन्तु नजदीक से गमगीन। अंदर घुसने पर,एक अनवरत मोह और अथक धैर्य से लबालब।, बाऊ छपरे की छत पर आंकड़े की सीटियों और खींप का जाल गूँथ रहे थे। मुझे देखकर नीचे उतर आये.। कुछ क्षण एकटक देखते रहे एडी से चोटी तक रौ रंगत.।हम दोनों के बीच दस माह का मनहूस, मंथर समय था,. मैंने तनिक संकोच के साथ उसे पार किया और बांह का थैला उतारकर चबूतरी पर रख दिया। अपनी सफेद, संजीदा दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए बाऊ ने एक बाल खींच कर तोड़ दिया और उसे गौर से तकते हुए बोले—'बहुत दिन लगा दिये?'

सूरज शिखर पर था और धूप उतनी ही ठँडी थी जितनी कि हवा। चौतरफ धूल के निरंतर बदलते हुए नक्शे और कुछ रहस्यमय संबंध थे, जो हमेशा मेरी समझ के आस-पास उड़कर विलीन हो जाते थे.।

मैंने स्वयं को इस तरह देखा, मानों कोई प्रेत अभी गड्ढे से बाहर निकल आया हो और जबरन मेरी जगह खड़ा होकर दाँत बजाने लगा हो.। मैं थकान-भरे असमंजस में होठ काट रहा था। उन पर पपड़ी जमी थी। उनके छिलके जीभ की नोक पर आ गये थे।

....'लुगाई और वो... क्या नाम उसका....छोरी ठीक है' ? वाऊ ने पूछा. फिर पुकारा...'.धनसिंग ! ' '..सब मजे में है,' मैंने कहा। बाऊ ने आवाज दी '-हौका भर ला, भई'। उनका स्वर कमजोर और अस्वस्थ था. .'... तबीयत अच्छी नहीं है, अज्जू ! बस, वक्त बेवक्त पेट में आँठ घुमड़ने लगती है और चित्त में खराबी आ जाती है. उमर भी तो ज्यादा हो गयी ससुरी ! हाँ, तुम सुनाओ, राज-काज में क्या हो रहा है आजकल ?'

मैं मुस्कराया। जब जब धानी आता हूँ, बाऊ यह सवाल जरूर ... पूछते हैं। कुल उन्नीस घरों की वह बस्ती। दो ढाई सौ मील तक रेगिस्तान और उस जैसी ही कई ढाणीयाँ दो मुल्कों के बीच में हैं लेकिन दोनों ही अलग-अलग अभागेपन को ढोती हुई। विवश। मेरी उपस्थिति उन्हें उस दुनियाँ से जोड़ती है। जिसमें अचरज ही अचरज है। लोग मेरे खून के हर कतरे से वाकिफ....मुझ में बरसों से बसे हुए वे लोग...।

चुपचाप सब कुछ सुनते हैं और घृणा से होठ सिकोड़ लेते हैं। वे जानते हैं, उस दुनियाँ की हँसी और खुशी उन पर पहाड़ की तरह गिरती हैं। 'लड़ाई शुरू होने वाली है,बाऊ!' मेरी आँखों से एक भाप सी उठी और पूरे चेहरे पर फैल गयी।

नौ साल की कठिन भुखमरी के बाद पहली फसल देखी है इन ढाणीयाँ ने। रास्ते में मैंने जगह-जगह सरसों के उजास को महसूस किया था। खेत....हरे पीले प्रसन्न खेत। लड़ाई उनकी प्रसन्नता को नोंच कर फिर वहीं बरबादी बिछा देगी. चारों ओर, जिसकी कल्पना करने मात्र से मेरे रोंगटे जलते लगते हैं।

,'लड़ाई! 'बाऊ की आंखे सिकुड़ गयी '' वो तो कभी की शुरू हो गयी, अज्जू उधर देवों 'उन्होंने कोस भर के फासले पर खड़े एक ऊँचे टीवे की तरफ, जहाँ सीमा-चौकी थी, इशारा किया।

'वहाँ अब उस पार की फौज का कब्जा है। परसों काफी धाय-धाय मची फिर भारत वाले खाली कर गये। सुना, आदमी ओर औजार कम थे उनके पास।' मेरा चेहरा कस गया। टीले पर सचमुच एक अनदेखा दृश्य था। इधर-उधर तंबू गाड़ दिये गये थे और उनमें चहल पहल थी. इतनी दूरी से आदमकद आकार बौने नजर आ रहे थे।

तभी छपरे के अन्दर से एक व्यक्ति बाहर आया। फूंक मारकर हौके की आग सुलगाता हुआ। उसकी आँखें बडीं और कठोर थीं। भोंहों की लंबाई कानों तक चली गयी थी। माथे पर खुदे हुए आड़े तिरछे खडडों से पता चलता था कि उसने काफी मार खायी है। बाऊ बोले-'धनसिंग है यह चार पाँच महीने पहले आया था, जाने कहाँ से.. अब यहीं रहेगा'। धनसिंग ने बाऊ के सामने हौका रख दिया। वह उसकी नाल को मुँह में लेकर बोले ।–'

'मेरा लड़का है, अज्जू नालायक... शहर में जाके बस गया है'। बाद मैं धनसिंग से ही मालूम हुआ कि यह फौज में होलदार रह चुका है। गुस्से में मेस के एक रसोइये को कत्ल कर दियां, फिर डरकर फरार हो गया। छिपकर रहने के लिए. रिगसाना ढाणी अच्छी लगी, ।बाऊ को राजी कर जुगाड़ बिठा लिया. किसी गस्ती हाकिम को शक न हो, इसलिए दाखों को "नाते" की चुड़ियाँ पहना दीं. दाखाँ मेरे मामा की लड़की थी. अकाल के दिनों की भागम-भाग में उसका पति कहीं चला गया था., वह न लौट कर आया न उसका कई समाचार ही मिला।. दाखाँ हर रात किसी न किसी मरद की बगल में सोई मिलती थी, सो बाऊ से छूट मिलने पर धनसिंग ने उसकी नाक में नकेल डाल दी।. मुझे धनसिंग एक मजबूत और मौजी आदमी लगा, हालांकि वह मामूली सी बात पर रीस में भर उठता था ।

शाम को हम दोनों ने एक साथ अम्मल लिया और देर तक बातें करते रहे.। अफीम का असर नसों में घुल रह था.। जाड़े की तीर सी तीखी हवा हड्डियों को भककोर रही थी।. धनसिंग स्यालकोट के किस्से को सुना रहा था, पैंसठ की लड़ाई में वह उस मोर्चे पर था.।

गली सुनसान थी।. कीकर की सूखी पत्तियाँ घुमेर लगा रही थीं.। अचानक दाखाँ प्रकट हुई.। वह लहेंगे की पटलियों को कमर में खोंसे गुनगुनाती हुई आ रही थी.। मुझे सामने पाकर चौंक पड़ी-‘ -अरे, तुम कब आंये ?’ मैं कुछ कहूँ, इससे पहले धनसिंग गरजा

‘--दिन भर कहाँ थी तू? ..’.. दाखाँ ने उसकी ओर मुंह बिचका दिया. ।मेरे निकट आकर बोली_’ यह जानवर कौन है, ?’ धनसिंग का चेहरा सुर्ख हो उठा—‘तेरा चुलबुलापन अभी गया नहीं ? भरतार भी तो ऐसे मिले हैं जायेगा कैसे ? ‘

सहसा उसे कुछ याद आया ‘--अज्जू, पिछली बार तुम एक पौथी छोड़ गये थे न, मैंने उसमें से एक फोटू फाड़कर अपने पास रख ली, यह देखो ! ‘-दाखां ने काँचली की झड़ से एक मुड़ा-तुड़ा कागज निकाला... उसमें बहीदा रहमान का चित्र था सायास मुस्कान बाला. –।

‘-यह तुम्हें अच्छा लगा ?’ मैने उस मैले, अखबारी कागज को उसकी अंगूलियों में हिलते देखा किसी चिड़िया के बच्चे की तरह। ‘इस हरामजादी का दिमाग चल गया है’. धनसिंग बड़बड़ाया- ‘मैने ऐसी बेशर्म औरत कभी नहीं देखी’ . दांखा तमतमा उठी-‘-तुमने कितनी औरतें देखी हैं, चमगादड़ ? ‘

धनसिंग की भूकुटियाँ तन गयीं. वह बाज की तरह झपटा.। दाखां के गले को दबोच कर उसने एक तगड़ा धौल उसकी पीठ पर जमा दिया.।वह दूहरी हो गयी.। धनसिंग उसे घसीटता हुआ छ़परे में ले गया और ठोकर से किवाड़ उढका दिये.।

थोड़ी देर बाद छपरे में दाखाँ की खिलखिलाहट सुनायी दी.। जहाँ तक मेरा अनुमान है, धनसिंग अब भी वैसे ही गुर्रा रहा था.। दूसरे रोज छावनी से कुछ सैनिक आये और ढाणी के तमाम ऊँटों को इकट्ठा कर ले गये.। रेतीले बियावान में. जहाँ जीपें और ट्रक अडकर खड़े हो जाते थे, ऊँट ही काम देते थे.। उनके जरिये रसद और दूसरा सामान आसानी से इधर उधर पहुँचाया जा सकता था।. एक सैनिक, जिसकी ठुड्‌टी पर छोटी सी डाढ़ी थी, जब बाड़ की तरफ घूमकर पेशाब कर रहा था, धनसिंग उसके पास गया और धीमे से बोला-‘तुम्हारी यह हरकत ठीक नहीं है. ‘। सैनिक ने पलट कर देखा, फिर पतलुन की पेटी कसते हुए बोला-‘ कौनसी ? मूतने की ?’

‘ नहीं मजाक मत करो’, धनसिंग के जबड़े खिच गये। ‘. मैं जानता हूँ तुम मेरी औरत पर हाथ साफ कर रहे हो.’। ‘ भला इसमें किसी का क्या नुकसान है ? ‘कहकर सैनिक ने धनसिंग के कमर में हाथ डाल दिया, धनसिंग हतप्रम हो गया।. वह

इस तरह मुंह पपोलने लगा, मानों कीचड़ खा रहा हो। ‘ तुम यह क्यों नहीं सोचते कि हम दो दुश्मन मुल्कों के बासिंदे है, लकिन उस औरत ने हमें एक कर दिया है.’।

दुपहर ढ़ल रही थी।. ऊटों की टोली जा चुकी थी।. सिर्फ एक ऊँटनी, जो बीमार थी, खेजडे के खूंटे से बँधी हुई अरड़ा रही थी.। उसकी बिलबिलाहट से माहौल एकदम निरीह और असहाय हो उठा था.। ऊंटों को हमेशा के लिए खोकर लोग अपने झोंपड़ों में दुबक चुके थे.।कहीं किसी स्त्री के रोने की घुटी-घुटी आवाज आ रही थी.। ऊँट का मतलब है, फसल उजड जाऐ, तो भी जीने का एक आधार।. वह आधार छिन चुका था.। विरोध का एक झौंका भी कहीं से उठ खड़ा होता तो समुची ढाणी को जलाकर बराबर कर दिया जाता।. सब खामोश थे.। यही होता है कोई बचाव नहीं.। कोई चारा नहीं. । बाऊ मेरे पास बुत की तरह बैठे थे. । मुझे लगा, वह सदियों से इसी तरह बैठे हैं।. नंगे बदन, हताश,। दाखाँ खिचड़ी के लिए बाजरा कूट रही थी।. ओखली की धम्म धम्म पहले मेरे सिर में गुजती रही, फिर कलेजे में उतर गयी.। निहत्थी निष्फल नजरों से मैंने अपने बाप को देखा.। वह जाने किस मिट्टी का बना एक करारा व्यक्तित्व था, जो क्षण भर के लिए तमतमा कर लाल हुआ, फिर राख की तरह काला पड़ गया।. एक अस्फुट यन्त्रणा मुझ तक आ कर ठहर गयी-‘अज्जू, हमारा कोई नहीं है. !’

धनसिंग चिलम भरकर ले आया था और उस सैनिक को पिला रहा था।. मैंने सैनिक का एक उड़ता सा वाक्य सुना-‘जब हम एक चिलम, एक तम्बाकू साथ साथ बैठ कर पी सकते हैं तो एक औरत के संग दोनों सो क्यों नहीं सकते ‘

? धनसिंग ने कोई उत्तर नहीं दिया. बुझी –बुझी दृष्टि से उस बन्दूक को घूरता रहा जो सैनिक के कन्धे पर टंगी थी,। एकाएक ऊँटनी धड़ाम से गिर पड़ी श्रौर टाँगे पछाड़ कर बुरी तरह चीखने लगी.। बाऊ उसके पास गये बोले-‘इसे गर्म लोहे से दागना पड़ेगा. कोई रंग खिच गयी है, जिसकी वजह से इतनी तकलीफ है.’।

धनसिंग ने पुछा—‘मैं दाग दू ? हाँ, जल्दी करो, नहीं तो यह दर्द के मारे खतम हो जायेगी, ‘। कुछ घरों के सामने सैनिक बैठे थे और स्त्रियों से छेड़छाड़ कर रहे.थे,। एक सैनिक निसार की बड़ी लड़की को एक टाँग के बल नचा रहा था।. निसार उस और पीठ किये, मुंह पर गमछा डाले सो रहा था.। खाट उसकी धरधरी से हिल रही थी. .। ‘हमीद ! ‘दाखाँ ने मन्द आवाज में पुकारा—‘यहाँ आ जाओ

.’ वह सैनिक चिलम का आखिरी कश लेकर उठा.। धनसिंग की तरफ व्यंग्यपूर्ण निगाहों से देखा उसने और दाखाँ की बगल में जाकर बैठ गया.।वह छाजले में बाजरे का तुस अलग करती हुई मुसकरा रही थी.। बाऊ ने अध मिचे होठों से गाली दी –‘चुडैल.’ धनसिंग लकड़ियाँ जमा कर आग सुलगाने लगा.। बाद में एक लम्बी सी छड़ लेकर उसने अंगारों के बीच धँसा दी।. ऊँटनी का पेट फुलता जा रहा था और वह अपनी गन्दली, कातर आँखों से बाऊ को देखती हुई लगातार

अरड़ा रही थी ।, धनसिंग ने हाथ के चारों और कपड़ा लपेट कर गर्म छड़ को पकड़ा और ऊँटनी के नजदीक ले आया ।'किस तरफ ?' उसने पूछा।

' पुटठो पर... दायें ...घुड की सीध में' बाऊ ने कहा और ऊँटनी की पिछली टाँगों को अच्छी तरह दबाकर बैठ गये । 'अज्जू, तुम इसकी गरदन कसदो, हिल न सके', मैंने गरदन दवोच ली। गर्म लोहा लगते ही ऊँटनी छटपटायी.। उसके मुंह से झाग गिरने लगे।, अरड़ाना आकाश को चीरने लगा.। दो बार दाग लगाकर धनसिंग परे हो गया । 'अब लोहे को पानी में डालकर ठंडा कर दो. 'बाऊ ने कहा,। दाखाँ को हमीद ने औखली के पास ही जमीन पर लढका दिया था और मसल रहा था.। मैंने उधर से मुंह फेर, लिया, ।

'अज्जू, जरा मेरी मदद करो, 'मैं बाऊ के साथ जुटकर ऊँटनी के पेट को जोर-जोर में रगड़ने लगा.। वह शायद कुछ आराम महसूस कर रही थी।. आफरा धीरे-थीरे हलका पड़ रहा था.। पूट्टो का तनाव भी ढीला हो गया था.।.सहसा एक तेज चीख निकली. जो घिधियाहट में बदल गई। उसके शाँत होते ही हंगामा मच गया.। धनसिंग ने गर्म लोहे की छड़ हमीद की गरदन पर रख दी थी.। वह तड़प कर खतम हों गया.। घास फूस के ढेरों और पत्थरों पर बैठे हुए सैनिक दौड़ पड़े,।

धनसिंग ने छड़ पानी के कुण्ड में फेंक दीं और सब कुछ सहने के लिए तैयार हो गया।. कॉचली के कसने बन्द करती हुई दाखाँ उठी.। उसने धनसिंग का मुंह नोच लिया।. बह रोती जा रही थी और चिल्ला रही थी '-कमीने. कुत्तों ! यह क्या किया. तुमने ? क्यो मार डाला इस बेचारे को.... ? मारना ही था, तो मुझे मार डालते... मैं तुम्हें कच्चा चबा जाऊँगी', नासिर की लड़की नाचना बन्द कर दाखाँ कीं तरफ देखने लगी.... चकित सी, फ़िर वह निसार की खाट पर बैठकर चेहरा पोंछने लगी।. होठों पर सैनिक ने काट खाया था और खून बह रहा था. ।

धनसिंग को घेर लिया गंया, कोई निर्णय नहीं कर पा रहा था कि उसका क्या किया जाये तभी एक सैनिक ने उसको पसलियों पर लात जमा दी, दूसरे ने कुल्हों पर, तीसरे ने खोपड़ी पर बन्दूक का कुन्दा बजा दिया.। धनसिंग गिर पड़ा। दाखाँ फटी आँखों से इस दृश्य को देखती - रही:। दनादन घूंसे चल रहे थे. ।अचानक उसने एक सैनिक को . धक्का दिया - 'और चिल्लायी-'- सूअरो. तुम इसे मार ही डालोगे क्या ? 'वह धनसिंग से लिंपट गयी.। एक अधेड सैनिक ने जो ठरें में घुत्त था ने सुझाया--दोनों को पकड़कर छावनी ले चलो, ।

धनसिंग और दाखाँ कों रस्सी से बाँध दिय गया.। वे उन्हें धकेलते हुए ढाणी से बाहर लें गये.। एक फौजी ने मृत सैनिक को पीठ पर लाद लिया और अलापनें लगा –'- हाय हमीद प्या-आ--रे 'उसके स्वर में दुःख की कोई गाँठ थी या खुशी, पहचानना मुश्किल था.। भीड़ छट गयी - ढाणी इतनी जड़ और निःशब्द थी, मानो. अब कभी जिन्दा नहीं होगी।. सर्दी डंक मार रही थी,। मैंने जेब से आधी पी हुई सिगरेट निकाली, होठों तक लाते लाते उसे अंगुलियों से मसल दिया और अस्थिर हो उठा.। बाऊ ऊँटनी की गरदन सहला रहे थे....निःसंग और भयकर रूप से भाव शून्य,। इस बूढ़े को सहना

आता है, यह आदी हो गया है, मैंने सोचा और अवसाद में डूबने लगा,। हिकारत भौर मितली, मैं कायरता के दो हिस्सों में बंट गया ।

निसार की लड़की कुछ देर पहले की दुर्घटना को भूलकर प्याज रोटी खा रही थी.। काँसी की थाली पर वह इस तरह झुकी हुई थी मानों अपना चेहरा देख रही हो.। उसकी पिंडलियों और कुहनियों पर छोटे-छोटे घाव थे.। रात को एकदम नींद टूटी, तो किसी की सिसकियाँ सुनायी दीं। कम्बल लपेट कर बाहर चौगान में आया.। चाँदनी धूप चमक रही थी।, टीलों पर. रेत, बर्फसी ठंडी रेत में मुट्टीयाँ मारती हुई दाखाँ फफक- फफक कर रो रही थी.।

'अज्जू ! 'उसकी देह में अंधड़ उठा हुआ था ।

'तुम्हें छोड़ दिया उन्होंने ?' मैंने पूछा पर वह स्वर मेरा नहीं था।. दाखाँ ने सिसकारते हुए हाँ भरी और कहा 'धनसिंग, को गोली. मार दी उन्होंने....मेरे सामने ही'।कह कर. वह फिर मुंह में ओढ़नी ठूस कर रोने लगी.। आंसुओ से तर एक ध्वस्त, परास्त चेहरा जिस पर पीड़ा ऐंठ रही थी.। मैंने चाहा कि मुझ पर उसके रुदन का कोई असर न हो, मैं खाली पीपा बना रहूँ, पर अचानक मुझे लगा कि धनसिंग की आत्मा की शांति के लिए हमें प्रार्थना करनी चाहिए. ।

'दाखाँ, उठो. प्रभु के आगे हाथ जोड़ दो', मैंने कहा., पर वह नहीं उठी. ।मेरे मुंह से निकला—'हे ईश्वर, हे नीच ईश्वर.'और आँखे बन्द हो गयीं।. कपाल में धुझाँ भर गया.। तड़के गोलियों की आवाजों से कान फटने लगे।. फिर हवाई जहाजों का शोर और बमों के धमाके.। धरती मेंढ़की की तरह उछलने लगी।. सूरज निकलने के साथ ही सुना कि चौकी फिर हिन्द्स्तान के कब्जे में आ गयी थी।. बाऊ, दाखाँ, मैं और दूसरे लोग दौड़ कर छावनी तक गये और दु:खद आ।श्चर्य से भर उठे....कल वाले सैनिकों और इन सैनिकों में अदभुत समानता थी, वैसे ही चेहरे, मारकाट को मनहूसियत पुते हुए... खुंखार अलबत्ता गहराई से देखने पर आँखों में उदासीनता और हमदर्दी का पुट मिल जाता था....अनिश्चित सा. । उस रोज से लड़ाई बाकायदा शुरू हो गयी ।

सुभाष दीपक

किसी समय एक पहाड़ी की तलहटी पर एक नदी के किनारे एक बड़ा और सुन्दर पेड़ हुआ करता था।जब अंकुरित हो कर धरती के ऊपर उसने झांकना शुरू किया तब से नदी ने उसे अपना अमृत पिलाना चालू कर दिया था। हवा को ठंडी करके वह उसे दुलारती।कलकल की अपनी मधुर आवाज से हर शाम उसे लोरियां सुनाकर सुलाती और अपनी फुहारों से हर सुबह जगा देती। पहाड़ ने भी हमेशा उसे अपने आगोश में रखकर हिफाजत बख्शी।एक अध्यापक की भांति ऊंचा और अटल खड़े होना सिखाया। झंझावातों से डटकर मुकाबला करने का प्रशिक्षण दिया।

यह बात उन दिनों की है जब पेड़ों, पहाड़ों और नदियों के बीच एक सनातनी रिश्ता हुआ करता था।एक डोर से बंधे वे अपने को अधिक महफूज समझते थे। पहाड़ पिता हो जाता था और पेड़ संतान। नदी निःसंदेह मां हो जाती थी।उसका लहराता आंचल जाने कितनी मुसीबतों को अपने में समेट लेता था। अपनी संतान को बढ़ता चढ़ता देखकर पेड़ और पहाड़ फूले नहीं समाते थे।

कुछ समय बाद पेड़ बहुत बड़ा हो गया और साथ ही बूढ़ा हो गया पहाड़ भी। पेड़ के आसपास तब अनेक छोटे छोटे नये पेड़ मुस्कुराते हुए उग आए। बूढ़ा पहाड़ उन्हें अपनी जवानी के किस्से सुनाता और सुनाते सुनाते सो जाता।कभी कभी अपनी मजबूरी पर उसे रोना आता तो वह मुंह फेर लेता।

नदी तब भी बहती थी। नन्हे नन्हे पेड़ों को लोरियां सुनाती।अपनी फुहारों से उन्हें हर सुबह जगाती।वे पूछते _"मां तुम बूढ़ी नहीं होती?"तो वह हंसकर कहती _"बच्चों मैं मां हूं , मैं बूढ़ी नहीं होती"।

ऐसे ही एक दिन जब नदी अपनी लहरों से नन्हें नन्हें पेड़ों के साथ अठखेलियां कर रही थी, जाने कहां से खूबसूरत फूलों से लदी एक बेल बहती हुई वहां आ गई। इतने सुन्दर फूल पेड़ो ने पहले कभी नहीं देखे थे।उनके स्पर्श से पेड़ों के बदन एक बार तो सिहर उठे।इतने रंगों को इतने नजदीक पाकर वे एक अलग ही दुनिया में पहुंच गए थे। अचानक तब हवा चली और फूलों की बेल जाकर पेड़ों से लिपट गई। पेड़ों को भी अच्छा लगा।वे सब रंगीन लिबास पहने बच्चे सरीखे लगने लगे।वे अब अपनी सपनों की दुनिया में खो चुके थे।

दूर खड़ा पहाड़ यह सब देख रहा था।शायद उसे वे दिन याद आने लगे थे जब नदी दुल्हन बनी उसके घर आई थी।पर दूसरे ही पल वह हकीकत की दुनिया में लौट आया।उस पार मौसम बिगड़ चुका था। आसमान में बिजली कड़क रही थी और तेज अंधड़ आने को तैयार बैठा था।उसने चाहा छोटे छोटे पेड़ों को वह अपने आगोश में छुपा ले पर वह लाचार था।वह न हिल सकता था और न डुल सकता था और न ही पेड़ चल कर उसकी गुफाओं में सुरक्षित होने के लिए घुस सकते थे। बहुत पहले उसके पड़दादा ने एक बार उसे बताया था कि पहले पहाड़ अपनी मर्जी से चल फिर सकते थे।एक दिन उनकी चहलकदमियों से भगवान् शिव की तपस्या में विघ्न पड़ा गया और उन्होंने पहाड़ों को एक जगह स्थिर बने रहने का शाप दे दिया।वे घट बढ़ तो सकते थे लेकिन अपनी जगह से हट नहीं सकते थे।

पहाड़ ने देखा आने वाले संकट से बेखबर नन्हें नन्हें पेड़ अपनी दुनिया में खोए हुए हैं।उसे चिंता होने लगी।उसने पास में खड़े बूढ़े पेड़ की ओर एक आस के साथ देखा।उसे निराशा हुई यह देखकर कि वह खुद किसी तरह अपने को बचाए खड़ा है उससे अधिक उम्मीद करना बेकार है।अब उसकी आस नदी पर जा टिकी।

उसे लगा नदी खतरे को भांप चुकी है। जैसे ही पहाड़ ने नदी की तरफ देखा वह मुस्कराई और उछल कर उसे आश्वस्त कर दिया। पहाड़ ने चैन की सांस ली।

उसी समय भयानक काले बादलों से आसमान पट गया और तेज हवा दस्तक देने लगी।नदी चुपके से पेड़ों के पास गयी और उन्हें कुछ समझाया। पहाड़ ने देखा सब पेड़ नदी की बात सुनकर सिर हिला रहे हैं। वह निश्चिंत हो गया कि अब सब ठीक हो जाएगा।

सच में ऐसा ही हुआ। जैसे ही चीखता हुआ अंधड़ उन पेड़ों के पास आया सब जमीन तक झुक गये। अंधड़ बिना कोई नुकसान किये उनके ऊपर से निकल गया।

मौसम ठीक हो गया। नन्हे नन्हे पेड़ अपनी रंगीन पोशाक पहने खेलने लगे।

नदी मां ने जब पहाड़ को देखा तो पाया कि वह शुक्रिया कहने के लिए पहले से इंतजार कर रहा है।

देखते देखते पेड़ बड़े हो गए।उनकी टहनियां मजबूत हो गईं। फलों और फूलों से लदे इन पेड़ों की शाखाओं पर असंख्य पक्षियों ने अपने घर बना लिए। उनकी घनी छांव से मुसाफिर राहत महसूस करते और दुआएं देते हुए चले जाते। नदी इस खुशगवार मौसम को देखकर नाचती रहती और पहाड़ फूल कर कुप्पा हो जाता।एक दिन दोनों ने तय किया कि इस अवसर को यादगार बनाने के लिए एक जश्न मनाया जाए।नटखट हवाओं को इसकी खबर लगने की देर थी कि उसने तुरंत इसकी मुनादी कर दी।फटाफट सब जुट गए।

तितलियों ने अपने रंगीन पंखों से वंदनवार सजा दिए।भंवरों ने अपने मंगल गान और पक्षियों ने सामूहिक गीतों से पूरे वातावरण को सुरमयी बना दिया। जाने कितने दिनों तक उत्सव चलता रहा।

जैसा कि हमेशा होता आया है खुशियां ज्यादा दिनों तक नहीं टिकतीं। कुछ ही दिनों बाद वहां सरकारी अफसर और उनकी गाड़ियां आने लगीं। पहाड़ और पेड़ों के बीच होती हुई एक चारदीवारी का निर्माण कर दिया गया। पहाड़ अब दूर खड़ा अपने पेड़ों को तक सकता था। नदी पर पहले तो एक पुल का बोझ डाला गया और फिर घाट बनाकर उसकी हद भी तय कर दी गई।

कुछ दिनों बाद ठेकेदार नामक एक माई-बाप की वहां नियुक्ति हो गई।वह वहां जब चाहे आता, पेड़ों से फल तोड़ता और अपनी गाड़ी में भरकर ले जाता।जब फल नहीं रहे तो वह मशीनें लेकर आया और उसने पेड़ों के मजबूत तनों को काटना शुरू कर दिया। जल्दी ही तमाम पेड़ ठूंठ होकर रह गये। अब वहां कोई पक्षी नहीं आता । किसी मुसाफिर के लिए भी अब वहां ठंडी छांव नहीं थी। पहाड़ उदास खड़ा ठंडी आहें भरता रहता। एक दिन पेड़ों ने नदी मां से पूछा _"क्या हमारे पुराने दिन कभी लौटेंगे?"

नदी निराश कतई नहीं थी।उसने उन्हें आश्वस्त करते हुए कहा _"तुम्हारी मां अभी है।सावन के आने तक इंतजार करो, तुम्हारे बादल मामा तो तुम्हें जी भरकर सींचेंगे ही, तुम्हारी मां भी सारे तटबंध तोड़ कर तुमसे लिपट जावेगी।" पेड़ आश्वस्त हो कर मुस्कुराने लगे। दूर खड़ा पहाड़ भी सिर हिला रहा था।

हेमंत शेष

वह एक कुशल प्रशासक थीं. हर दफ्तर में अपनी योग्यता की नहीं, उन्होंने अपने 'सफाई-पसंद' होने की अमिट छाप ज़रूर छोड़ी.

जहाँ-जहाँ वह पदस्थापित रहीं, दफ्तर के बाबू और अफसर, सब, रोजमर्रा सरकारी कामकाज की बजाय, साबुनों-डिटर्जेंटों और फिनाइल के प्रकारों, पौंछा लगाने की आदर्श तकनीकों, डस्टर की सही-आकृति, कूड़ेदानों की स्थिति, शौचालय की टाइलों और फर्श की धुलाई वगैरह जैसे गंभीर-विषयों की ही चर्चा किया करते थे.

कलफ़ लगे साफ़े में एक चपरासी, पूरे बोर्ड ऑफिस में सदा उनके पीछे-पीछे, एक डस्टबिन लिए चलता था. मजाल क्या, जो एक भी चीज़ यहाँ-वहाँ बिखरी नज़र आ जाए!

अगर फर्श पर माचिस की एक बुझी हुई सींक भी नज़र आ जाए तो वह बुरी तरह बिफर जातीं. शौचालय अगर हर दो घंटे बाद एसिड से साफ़ न किये जाएँ, तो उनका पारा सातवें आसमान पर जा पहुंचता, रोज सबेरे नौ और शाम चार बजे, दफ्तर के सारे बाबुओं और अफसरों को अपने कमरे में बुला कर वह सफाई के महत्व को ले कर भाषण पिलातीं!

एक दिन पता नहीं कहाँ से उन्होंने पढ़ लिया कि "सर्वश्रेष्ठ सफाई-व्यवस्था" के लिए एक अंतर्राष्ट्रीय संस्था, सरकारी दफ्तरों को 'आई एस ओ' प्रमाणपत्र देने वाली है!

मुकाबला बेहद बड़ा था-कड़ा भी, पर एक अखिल-भारतीय अँगरेज़ 'आई. सी. एस.' की तरह उन्होंने चुनौती को स्वीकारा. दफ्तर में आनन-फानन में नए सफाई-कार्मिकों की भर्ती की गयी और तभी से उनका सारा वक्त प्रतिभा और ध्यान इसी तरफ लग गया!

शाम को देर तक घर न जातीं, देर रात तक पौंछा वालों की टीम के साथ दीर्घाओं, छतों और कमरों की झाड़ू-बुहारी करवाती रहतीं....पर लोग थे जैसे उन्हें अपने मकसद में कामयाब ही होने देना नहीं चाहते थे!

कभी कोई गाँव वाला अदालत के फर्श पर बीड़ी का ठूंठ फ़ेंक देता तो कभी कोई वकील, बस का पुराना टिकिट या माचिस की खाली डिब्बी! वह घटनास्थल पर भुनभुनाती आतीं और गांधीवादी तरीके से कचरा उठवा ले जातीं!

पतझड़ का मौसम तो जैसे जान लेने को आमादा था....हवा के साथ टहनियों से टपके भूरे-पीले पत्ते गिरते रहते और यहाँ वहाँ उड़ते-फिरते. उन्हें ठिकाने लगाने के लिए वह साड़ी चढ़ा कर उनके पीछे दौड़तीं.

एक बार तो उनकी तबीयत हुई कि सफाई का अनुशासन तोड़ने वाले सब पेड़ों पर कुल्हाड़ी चलवा दें, पर दफ्तर के बड़े बाबू ने उन्हें ऐसा न करने की राय दी क्यों कि सरकारी 'वन-महोत्सव' दस दिन बाद ही आने वाला था और तब हमें पेड़ों पर पेड़ बचाओ पोस्टर लगाने की ज़रूरत पड़ सकती थी.

मुआयने का दिन ज्यों ज्यों नज़दीक आता गया उनकी नींद-चैन-भूख गायब होती गयी. कभी आँख लगती, तो फर्श की टाइलों पर छूट गए अदृश्य धब्बे उन्हें झंझोड कर उठा देते!

आखिरकार सफाई के अंतर्राष्ट्रीय-विशेषज्ञ हमारे दफ्तर पहुँच ही गए. उन्होंने हर कोने का बड़ी बारीके से मुआयना किया था.

हम सब बाबू लोग दम साधे अपनी अपनी सीटों पर बैठे ये सब तमाशे देख ही रहे थे कि तीन जूनियर क्लर्कों ने, जो देर से पेशाब रोक कर बैठे थे, आ कर हमें बताया कि सब कुछ बेहद सफलता से निपट गया है, और अब कुछ देर बाद टीम "मैडम" का इंटरव्यू करने उनके कमरे में जाएगी, जहाँ पास के सेमिनार हाल में बाद में उन लोगों के लिए एक शानदार चाय-पार्टी का आयोजन रखा गया था.

सीधे दार्जिलिंग से मंगवाई गयी एक्सपोर्ट क्वालिटी की चाय बनवाने काम मुझे सौंपा गया था, इसलिए भागता हुआ मैं मैडम के कमरे की तरफ दौड़ा, ताकि हाई टी के मेन्यू पर उनके 'नवीनतम निर्देश' नोट कर लूं!

मैंने उनके दरवाज़े पर दस्तक दी और प्रविष्ट हो गया.

उनकी कुर्सी खाली थी, मैंने उनके रेस्टरूम की तरफ देखते हुए खंखारा, वह कहीं नहीं थीं- न वेटिंग-लाउंज में, न अपने कमरे के चमचमाते शौचालय में.....

उन्हें दफ्तर में हर जगह खोज कर हांफता-हांफता वापस पहुँचा तो उनके कमरे में फिनाइल की तेज गंध छाई हुई थी...और ये देख कर मैं जड़ हो ही गया कि मैडम की कुर्सी पर उनकी जगह पर ठीक उनकी लम्बाई की एक आदमकद सींक-झाड़ू बैठी थी !

उन्हीं की आवाज़ में हमेशा की तरह मुझे डाँटते हुए झाड़ू बोली - "ऐसे क्या देख रहे हो-सुधीन्द्र ! टीम कहाँ है ? जाओ-पेंट्री में जा कर देखो- चाय कॉफ़ी कहीं ठंडी न हो गयी हों !"

कमलानाथ

आज वह पब्लिक पार्किंग में मिल गई और मुझे देख कर मुस्कुराई। मैं भी मुस्कुराया। हैलो" - मैंने कहा। उसने उसी तरह अपनी मुस्कुराहट बनाए रखी। "आप यहाँ पार्क करते हैं अपनी गाड़ी?" - उसने पूछा। "नहीं, ज़्यादातर तो कॉलेज की पार्किंग में ही करता हूँ। आज वहाँ जगह ही नहीं थी। आप भी यहीं करती हैं?" "नहीं, मैं भी नहीं। पर आजकल बहुत से स्टुडेंट्स भी गाड़ियां लाने लग गए हैं, इसलिए कई बार कॉलेज के अंदर जगह ही नहीं मिल पाती। मैं सोचती हूँ, कॉलेज मैनेजमेंट को स्टाफ़ के लिए अलग से पार्किंग रिज़र्व करनी चाहिए" - उसने कहा। "हाँ, हम लोगों ने तो बाक़ायदा एक रिप्रेज़ेंटेशन भी दिया है अपने मैनेजमेंट को इस बारे में" - मैंने कहा। मुझे लग रहा था जब कोई अपने आपको संजीदा समझने वाला आदमी दोस्ती की अंदरूनी गरज से किसी संजीदा सी दिखने वाली औरत से पहली बार बात करने वाला होता है तो अपनी बौद्धिकता का ठप्पा लगा देने की मंशा से वह अपने हिसाब से 'बुद्धिमानी' की बात करने की कोशिश करता है।

लेकिन एक लड़की के सामने फ़िज़ूल की बातों में यह मौक़ा फिसलते देख कर मन ही मन मुझे अफ़सोस हो रहा था। पर एक पार्किंग में हम जो इस तरह की निरर्थक बात कर रहे थे उसके अलावा आप अज्ञेय, सार, पिकासो, ओबामा-केयर, या चाइना-पाकिस्तान इकोनोमिक कॉरिडोर की बात तो नहीं सकते न! मुझे लगने लगा, ज़रूरी है कि अब जल्दी ही हमारी दूसरी मुलाक़ात होनी चाहिए।

कॉलेज के खुलने के समय गेट के आसपास बाहर सड़क पर स्टुडेंट्स और स्टाफ़ की काफ़ी भीड़ होजाती थी इसलिए गेट में धीरे धीरे दाखिल होना पड़ता था। लगभग साढ़े नौ बजे के आसपास वह भी हर रोज़ अपने कॉलेज में घुसती दिखाई देती थी और अक्सर हम लोगों की निगाहें एक दूसरे पर पड़ ही जाती थीं। ऐसी ही कुछ मुलाक़ातों के बाद फिर हमने

कुछ दिनों पहले से ही एक दूसरे को देख कर मुस्कुराना शुरू किया था। बस, आज ही पहली बार 'हैलो' कहा था। सामने कॉन्वेंट कॉलेज था जिसमें वह पढ़ाती थी, यह तो ज़ाहिर हो गया था। कौन सा विषय, यह पता नहीं।

'हम लोगों ने भी रिप्रैज़ेंटेथन दिया' इससे वह भी समझ ही गई होगी कि मैं भी सामने वाले कॉलेज में पढ़ाता ही हूँ, क्योंकि स्टूडेंट की तरह खास दिखता नहीं हूँ, सिवा इसके कि जीन्स पहने हुए हूँ। वह भी कौन सी फ़ॉर्मल साड़ी में थी, वह केवल एक सलवार सूट में ही तो थी। स्टुडेंट्स को हर दिन कोई न कोई नया शगल् या स्कैंडल चाहिए, इसलिए अगर स्टाफ की कोई महिला लेक्चरर किसी पुरुष लेक्चरर से बात भी करती दिखाई पड़ जाए तो उनके लिए नई कहानी बन जाती है। और अगर एक कॉलेज की लेक्चरर किसी दूसरे कॉलेज के लेक्चरर से मुस्कुरा कर बात करती दिखाई दे, तब तो ज़ाहिर है कोई न कोई अफ़साना बनना तय है।

हमारा 'हैलो' ही आज या कल तक दोनों कॉलेजों में एक प्रेम कहानी के रूप में बयां किया जायगा यह लगने लगा था, क्योंकि हमें देख कर लड़कों का एक गुट खड़ा खड़ा हमें ध्यान से देख रहा था और एक दूसरे की तरफ़ मुस्कुराते हुए बातें कर रहा था। वैसे मुझे लड़कों की यह मानसिकता पता नहीं क्यों इस समय बुरी नहीं लगी थी। लेकिन मैं जिस बात को लेकर सोच में पड़ा हुआ था वह यह थी कि अगली बार कब ऐसा इत्तफ़ाक़ हो सकता कि अगर वह इसी तरह मिल जाय तो हम लोग कुछ ज़्यादा बात कर सकें। दूसरी बार न तो मुझे और न उसे यह पूछने की ज़रूरत होगी कि क्या हम अपनी गाड़ियां हमेशा वहीं पार्क करते हैं। हमको पता चल चुका है कि यहाँ क्यों पार्किंग करनी पड़ती है, इसलिए तक़ल्लुफ़ की ये शुरुआती बातें बेमानी होंगी। पर बिना जाने कि उसके इंटरेस्ट क्या हैं, अपनी डुगड़गी बजा देना भी उल्लूपन ही होगा। कौन सी डुगड़गी बजानी है, यह भी तो पता होना चाहिए।

वह लेक्चरर या जो कुछ भी है, उसके हिसाब से साड़ी की बजाय उसने सलवार कमीज़ पहनी, इससे यह तो ज़ाहिर होता है कि वह इन्फ़ॉर्मल हो सकती है। इसका साधारण सा मतलब यह हो सकता है कि उसका इंटरेस्ट बहुत ज़्यादा क्लासिकल टाइप का तो नहीं होगा। यानी अगर वह म्यूज़िक में रुचि रखती है तो उससे बाख़, चैकोस्की, बीथोवन, चोपिन क़िस्म के, या पं. ओंकारनाथ ठाकुर, बड़े गुलाम अली खां, या बाबा अलाउद्दीन खां, पन्नालाल घोष, रविशंकर, अली अकबर खां जैसे संगीतज्ञों के बारे में या उनके संगीत के बारे में बात करने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी। पर क्या उसे आजकल के बेयॉंस, लेडी गागा, मैरिया कैरी, मिली सायरस टाइप के, या बॉलीवुड टाइप के गाने पसंद होंगे?

अगर वह दकियानूसी टाइप की नहीं है और उसे साहित्य में कुछ रुचि है तो फिर वही बात आयेगी - पश्चिमी साहित्य या भारतीय साहित्य? और अगर आर्ट, पेंटिंग जैसे विषयों में, तो रैनेसां, नियोक्लासिक, रोमांटिसिज़्म, वगैरह तो नहीं, पर क्या मॉडर्न मैं भी मैटा-रियलिज़्म, नियो-एक्स्प्रेशनिज़्म, रीमॉडर्निज़्म वगैरह? अगली मुलाक़ात में हो सकता है, मुझे यह पूछने का मौक़ा मिल जाय। पर मेरा यह सोचना भी तो ठीक नहीं है न कि चूँकि उसने साड़ी की बजाय सलवार सूट पहना इसलिए उसे क्लासिकल टाइप की चीज़ों में कोई रुचि नहीं हो। यह भी ज़रूरी नहीं कि अगर उसने साड़ी पहनी

हुई होती तो उसे सचमुच क्लासिकल टाइप की चीज़ों में रुचि होती। और यह भी बिलकुल ज़रूरी नहीं है कि उसने सलवार सूट पहना है और कॉन्वेंट कॉलेज में पढ़ाती है इसका मतलब वह दकियानूसी नहीं हो।

यह भी मुमकिन है कि वह भी मेरी तरह सिविल सर्विसेज़ के लिए तैयारी कर रही हो और उसका कॉलेज में पढ़ाने का उद्देश्य केवल लायब्रेरी की सुविधा हासिल करना हो। ऐसी स्थिति में वह कया पहनती है यह उसके खुद के लिए, या कॉलेज के दूसरे लोग उसके बारे में क्या राय बनाते हैं ज़्यादा मायने नहीं रखता। पर तब यह तो मानना पड़ेगा कि वह जनरल नॉलेज की तैयारी कर रही होगी और अगर उसकी रुचि किसी ख़ास विषय में नहीं भी हो, तो कम से कम जानकारी ज़्यादातर चीज़ों के बारे में ज़रूर होगी।

क्या उसे मालूम होगा, जैसा माना जा रहा था कि शेक्सपियर ने हैमलेट नाटक 60 में नहीं लिखा, जब एलिज़ाबेथ-। राजगद्दी पर थी, बल्कि जेम्स- की तख़्तपोशी के बाद उसको खुश करने के लिए 603 में पूरा किया। इसीलिए उसके बाद शेक्सपियर को अपनी नाटक कंपनी के पहले वाले नाम 'लॉर्ड चैम्बरलेन्स मैन' की बजाय 'द किंग्स मैन' के नाम से शाही कंपनी के रूप मैं काम करने की इजाज़त मिल गई। हो सकता है मैं जो कुछ सोच रहा हूँ, वास्तव में ऐसा कुछ भी नहीं निकले और वह निरी बुद्धू क्रिस्म की ही हो, जिसे इन सब में कोई इंटरेस्ट ही नहीं हो, या निहायत ही घरेलू किस्म की निकले जो पनीर की नई नई रेसिपीज़ बनाने या स्वैटर की नई डिज़ाइन बुनने की फ़िराक में ही रहती हो। लेकिन उसके साथ बिना थोड़ा समय बर्बाद किए यह सब मालूम पड़ना मुश्किल था। लेकिन मेरे 'हैलो' कहने पर उत्तर में बजाय 'हैलो' कहने के, वह सिर्फ़ मुस्कुराती रही थी उसका क्या मतलब हो सकता था? या तो वह अपने आपको मुझसे ज़्यादा होशियार समझ रही थी, या यह दिखाने की कोशिश कर रही थी कि मैं सिर्फ़ 'एक कोई भी आम आदमी' हूँ जो उसे अपनी गाड़ी पार्क करते हुए पार्किंग में मिल गया।

दोनों ही कारणों से मैं समझौता नहीं कर सकता था। उसने कहीं यह तो नहीं सोचा कि मैं 'हैलो' कह कर उससे किसी तरह दोस्ती करने की कोशिश कर रहा था, या मैं उससे इतना ज़्यादा प्रभावित था कि हमेशा की तरह सिर्फ़ मुस्कुरा भर देने की जगह उसे मैंने 'हैलो' पहले कहा। पर एक बात जो क़ाबिले गौर है वह ये है कि पहले वह मुस्कुराई थी, उसके बाद ही मैंने 'हैलो' बोला था। इसलिए मेरा यह सोचना कि मैं सिर्फ़ 'एक कोई भी आम आदमी' हूँ उतना ठीक नहीं बैठता।

ज़ाहिर है वह मुस्कुरा इसलिए रही थी कि उसे मुझसे बात करने में न तो कोई झिझक थी और न मेरे लिए किसी तरह की कमतरी का अहसास। उसके यहाँ न आने का कोई दूसरा कारण भी हो सकता है। वह कहीं बीमार न पड़ गई हो। उस स्थिति में यह पता चलना मुश्किल है कि वह अगले कितने दिन तक नहीं आयेगी, क्योंकि मालुम नहीं उसे कौन सी बीमारी हो और ठीक होने में कितना वक़्त लगे! यह अनिश्चितता सचमुच पसोपेश में डालने वाली है, क्योंकि मैंने पिछले चार दिनों से कॉलेज पार्किंग में जाकर भी नहीं देखा कि वहाँ जगह है या नहीं, और न तब तक जा सकता हूँ।

मुझे जीन्स में कॉलेज आते देख कर हो सकता है वह भी सोच रही होगी कि मैं बुर्जुआ क़िस्म का आदमी नहीं हूँ जो ढीले ढाले फ़ॉर्मल सफ़ारी सूट में रहता हो, जैसा प्रोफ़ेसरों के दुर्भाग्य से आजकल कंपनियां अपने सिक्यॉरिटी स्टाफ़ और चपरासियों तक को देने लग गई हैं, या सफ़ेद शर्ट-कात्री पैंट टाइप के लिबास में सैंडल के साथ जुर्राब पहने हर रोज़ कॉलेज जाता हो। या वही सब, कि जीन्स के बावजूद मैं बुर्जुआ हो सकता हूँ, या अगर सफ़ारी सूट, सफ़ेदशर्ट-कालीपैंट में होता तो उसके अंदर मैं बुर्जुआ दिमाग़ पाल रहा होऊँ या तब भी नहीं पाल रहा होऊं... वगैरह।

अगर उसको मुझमें थोड़ी भी रुचि है तो वह भी सोच रही हो सकती है कि मुझसे बिना मिले उसे मेरे बारे में कुछ पता नहीं लग सकता। जो भी हो, अगले चार दिनों तक मैंने अपनी गाड़ी इस जनरल पार्किंग में ही पार्क की, इस उम्मीद मैं

कि वह कभी अपनी गाड़ी पार्क करते वक़्त दिखाई दे जायगी। पर इन चार दिनों तक वह नहीं आई। लगता है उसके कॉलेज के लड़के लड़कियां इन दिनों अपनी गाड़ियां लेकर कॉलेज नहीं आये और उसे वहीं पार्किंग की जगह मिल गयी। लेकिन लड़कों की आमतौर से ये फ़ितरत होती नहीं कि अपने बाप की गाड़ी एक बार लाने के बाद हर रोज़ नहीं लायें।

यह भी नहीं हो सकता कि उसके कॉलेज मैनेजमेंट ने स्टाफ के लिए इतनी जल्दी अलग से व्यवस्था कर दी हो, क्योंकि उसने कहा था वह अभी सोच ही रही थी इस बारे में मैनेजमेंट को कहने के लिए। बल्कि मुझे ठीक से याद है तो वह कहने का भी नहीं सोच रही थी, बल्कि यह केवल उसकी राय ही थी कि अलग से पार्किंग होनी चाहिए स्टाफ़ के लिए। जो भी हो, मेरे अस्सी रुपयों का शुद्ध नुकसान हो चुका था। अगर मैं अपनी गाड़ी यहाँ पार्क नहीं करता तो उसके साथ दोस्ती होने के बाद इन रुपयों में कुछ और जोड़ कर मैं उसे एक बार कैंटीन में समोसे के साथ कॉफ़ी तो पिला ही सकता था।

मैंने उसे बताया था कि हम लोगों ने तो एक रिप्रेज़ेंटेशन दे भी दिया था। कहीं उसने यह तो नहीं समझ लिया कि इतनी जल्दी हमारे मैनेजमेंट ने स्टाफ़ की बात मान कर स्टाफ़ पार्किंग के लिए अलग जगह बना भी दी होगी इसलिए मैं अब इस पब्लिक पार्किंग में नहीं आऊँगा, और इसीलिये वह भी इन चार दिनों में यहाँ नहीं आई। हो सकता है, इन चार दिनों में उसे कॉलेज की पार्किंग में ही जगह मिल गई हो। अब अगर मैं आगे भी यहाँ आता नहीं रहा और इस बीच वह एक बार भी अपनी गाड़ी यहाँ पार्क करने आगई, तो वह ज़रूर समझ लेगी कि मैंने अब कॉलेज में ही अपनी गाड़ी पार्क करना शुरू कर दिया होगा, इसलिए अब आयन्दा इस पार्किंग में आने की मुझे ज़रूरत ही नहीं पड़ेगी। इसका मतलब यह निकला कि मुझे अब लगातार यहीं पार्क करने के लिए आते रहना चाहिए और इस तरह अपना नुकसान बढ़ाते रहना चाहिए, जब तक कि आगे के एरेंजमेंट के लिए एक बार उससे मुलाक़ात नहीं होजाए। पर अब रह रह कर एक सवाल जो मन में उठ रहा है वह यह है कि जिस तरह मैं उसके बारे में सोच रहा हूँ, क्या वह भी ऐसे ही मेरे बारे में कुछ सोच रही होगी? खाली पीरियड में स्टाफ़ रूम में बैठे हुए, या लायब्रेरी में किसी किताब को पत्टते हुए, या अगर वह बीमार है तो बिस्तर में पड़े पड़े। भले ही उसने उस समय 'हैलो' नहीं बोला पर वह लगातार मुस्कुराती रही थी और जब हम बात कर रहे तब भी उसका चेहरा उसी तरह खिला हुआ था। यानी यह तो लगता है कि उसने यह नहीं सोचा होगा कि कोई आदमी ज़बर्दस्ती गले पड़ने की कोशिश कर रहा है, वर्ना वह चाहती तो मुझे हतोत्साहित करने के लिए अपना चेहरा थोड़ा सीरियस सा भी बनाए रख सकती थी। पर मैं ऐसा कर ही क्यों रहा हूँ? मुझे इन फ़िज़ूल की बातों से क्या मतलब कि वह इन दिनों अपने कॉलेज में अपनी गाड़ी पार्क कर रही है या यहाँ, किसी दिन उसे वहाँ जगह मिलनी कि नहीं, मुझसे अगली बार उसकी मुलाक़ात होनी ही चाहिए और तब तक मुझे इसी पार्किंग में दिन भर के पैसे दे देकर गाड़ी रखनी चाहिए, वह कहीं बीमार तो नहीं हो गयी, उसने क्या सचमुच अपने मैनेजमेंट को स्टाफ़ के लिए पार्किंग की अलग से व्यवस्था करने के लिए कह दिया होगा... वगैरह।

माना वह बेशक खूबसूरत है, लेकिन उससे भी ज़्यादा खूबसूरत लड़कियां मैंने देखी हैं और उन्हें इग्नोर किया है (या शायद उन्होंने मुझे किया है) । इसको ज़्यादा भाव देने का कोई ख़ास कारण नहीं है, सिवा इसके कि हम दोनों लगभग एक ही समय पर अपने अपने कॉलेज में घुसने के लिए अपनी गाड़ियां धीमे करते हैं और उस दौरान एक दूसरे पर निगाह पड़ जाती हैं, जोकि स्वाभाविक है। यह बात दीगर है कि पिछले कुछ दिनों से लगातार दिखाई दे जाने के कारण एक दूसरे को देख कर हल्का सा मुस्कुराने भी लगे हैं। पर इसका अर्थ यह बिलकुल भी नहीं है कि उसके बारे में इतना सोचा जाए, जब कि मैं सोने के लिए बिस्तर मैं घुस गया हूँ और कल सुबह फिर हर रोज़ की तरह कॉलेज जाने के लिए समय पर उठना पड़ेगा। नींद की बीमारी यही है कि इसे लाने के लिए कुछ सोचना पड़ता है।

या यूं कहें कि यह जब आती है उससे पहले कुछ बेकार के सोच दिमाग में घूमने लगते हैं। इनमें से कई सोच तो ऐसे होते हैं जो नींद लाने में ख़लल डाल देते हैं और कुछ ऐसे, जिनके बारे में ज़्यादा सोचा ही नहीं जा सकता और जल्दी ही नींद आजाती है। लगता है, निश्चित रूप से उसके बारे में सोच ने कुछ ख़लल डाला है, क्योंकि सबसे पहले तो यह सोच ही, कि उसका सोच मेरे दिमाग में क्यों आया कुछ अजीब सा लग रहा है। यूनिवर्सिटी के बाद स्कॉलरशिप में कुछ साल के लिए मैं इंग्लैण्ड में रहा था और उसी दौरान यूरोप और अमरीका घूमा था जहां लड़कियां आधे अधूरे कपड़े पहने भी चलती फिरती दिखाई देती थीं, आपसे किसी भी विषय पर मुस्कुराते हुए ही क्या, मस्ती से हँसते हुए खुल कर बात करती थीं, और जहाँ रास्ते में लगभग सभी लोग एक दूसरे को देख कर शिष्टाचार के नाते मुस्कुराते थे या 'हाय' कहते थे। वहाँ ऐसी कई लड़कियां मुझसे परिचित थीं जो नाक-नक्श के भारतीय मानदंड के हिसाब से भी काफ़ी खूबसूरत कही जा सकती थीं, जिनमें से एक दो भारतीय भी थीं। वहाँ तो इस तरह का सोच दिमाग में नहीं पनपा।

मुझे फिर अपने आपसे विद्रोह करने की मुद्रा में आजाना चाहिए और अब तक के अपने उस सारे चिंतन को ख़ारिज कर देना चाहिए जो उसके मुस्कुराने से या उसके पहनावे से सम्बन्धित था, या मुझसे उतनी ही, या उस तरह की बात करने या अपनी डुगडुगी न बजा पाने से जुड़ा था, या कुल मिला कर उसके बारे में सोचने से था। मुझे पूरी तरह से निरपेक्ष, तटस्थ, निरासक्त भाव में सिमट जाना चाहिए और उसके बारे में न सोचने का निश्चय कर लेना चाहिए। वहाँ से ध्यान हटाने के लिए मुझे पिछले कई दिनों से अपनी उस अधूरी कहानी के बारे में सोचना चाहिए, जिसमें खुद मैंने ही उसके मुख्य किरदार को अगले कुछ दिनों में फ़ैसला ले लेने के लिए अनिश्चय की स्थिति में छोड़ा हुआ था। शायद अब मुझे उसे किसी निर्णय तक पहुंचा देना चाहिए। लेकिन फिर भी एक जो विचार अब भी आरहा है वह है - इतने दिनों से वह क्यों नहीं आई?

प्रभात गौतम

जैसे ही घड़ी ने आठ बजाये वह फैक्ट्री के दरवाजे पर पहुँच चुका था। दोनों चौकीदारों ने बस अलसाईनजरों से देखा भर और जाने दिया। वह अपनी साधारण चाल से कदम बढ़ाते हुए फैक्ट्री के भीतर दाखिल हो गया। कमरा एकदम साधारण था। वहां पर एक पुरानी टाइप की टेबिल व दो कुर्सियां आमने सामने रखी हुई थी। टेबिल के दराज से पुराना कपड़ा निकाल कर उसने जमी धूल साफ की, फिर कुर्सी पर बैठ गया। वहाँ पड़े पुराने से रजिस्टर पर उसने अपने हस्ताक्षर कर उपस्थिति दर्ज कर दी जिसका कोई महत्व नहीं था। छत पर लगे पंखे में कोई हरकत नहीं थी क्योंकि फैक्ट्री की बिजली कट चुकी थी। कमरे में खुली खिड़की से वह सामने का बड़ा हॉल देख सकता था, जिसमें मशीनें तरतीबबार पड़ी हुई थी। एकदम शांत और निश्चल। मानो उनकी शक्ति किसी ने छीन ली हो। उनमें जमी धूल की परतें बता रही थी कि वह बरसों से इसी हालत में पड़ी हैं। छत पर लगे पंखों में भी मिटटी की मोटी परतें जम गयी थी। वहां पर अनेकों जगह चिड़िया और कबूतरों ने अपने डेरे बना लिये थे। वह बहुत चाहता था उन मशीनों को साफ सुथरा कर दे पर उसे अन्दर प्रवेश करने की अनुमति नहीं थी। वह बस खिड़की से नजरें टिकाये उनसे बातें करता रहता। कभी-कभी कोई हल्का सा हवा का झोंका उससे टकरा कर पसीने से राहत दे जाता और वह कुर्सी पर बैठ कर अपने पुराने कागजों को पढ़ते हुए फाइल पर लिखना शुरू कर देता , फिर कुछ काट छांट करते हुए अपनी डायरी में तारीखें अंकित करने लगता । उसकी डायरी से मालूम होता है कि यह फैक्ट्री पिछले तीन साल व दो महिने से बन्द पड़ी है। जैसे ही सरकार बदली उसके मंत्रियों को लगा मैनेजमेंट के कुछ अधिकारी विपक्षी दलों से लगाव रखते हैं। इससे फैक्ट्री को मिलने वाली राशि में कटौतियां शुरू हो गयी जिससे खराब मशीनों को सुधारना बन्द हो गया। इसका असर यह हुआ कि अच्छा खासा प्रोडक्शन कम होते होते बन्द हो गया। फलस्वरूप कर्मचारियों को वेतन मिलना बन्द हो गया। कुछ जुगाड़ू अधिकारियों

और कर्मचारियों ने अपना स्थानांतरण अन्य फैक्ट्री में करवा लिया और कुछ कर्मचारी घर बैठा दिये गये, जिनमें वह सुपरवाइजर भी शामिल था जो फैक्ट्री में पिछले बीस वर्षों से कार्य कर रहा था और इसे अपना धर्म, अपना घर, अपना मन्दिर, अपना तीर्थ मानता था। शायद ही कोई ऐसा दिन गया होगा जब घड़ी की सूई ने आठ बजाये हों और वह फैक्ट्री के गेट के अन्दर नहीं हो। दरवाजे में प्रवेश करते ही वह सीढियां चढने से पहले वह मन्दिर की तरह सिर झुका कर ईश्वर का नाम लेता और अन्दर प्रवेश करता था। पहले अपनी उपस्थिति पंजिका में अपनी उपस्थिति दर्ज करता और पूरे हॉल का चक्कर लगा कर हर एक मशीन का मुआयना कर लेता । उस पर जरा सी भी धूल जमा होने पर उसे साफ करने करने की हिदायतें दे डालता था। तब तक अधिकतर कर्मचारी आकर अपना कार्य शुरू कर चुके होते थे। जो भी कर्मचारी देरी से आता उससे वह स्पष्टीकरण जरूर मांगता और भविष्य में समय पर आने की चेतावनी दे डालता।

इन बीस वर्षों में पहले भी कई बार सरकारें बदली पर इस फैक्ट्री में यथावत कार्य चलता रहा। राज्य में चलने वाले प्रमुख उद्योगों में इसका नाम था। इसमें निर्मित अधिकतर माल बिना लाभ के विक्रय किया जाता था इसलिये यह फैक्ट्री लाभ नहीं कमा पाती थी. परंतु इसके माल की क्वालिटी भी काफी बेहतर थी। इस फैक्ट्री से सैकडों लोगों को रोजगार मिला हुआ था और उनके परिवार पल रहे थे। सबसे अच्छी बात यह थी कि जनता को रियायती दर पर उत्तम क्वलिटी का माल मिल रहा था। इस बार जैसे ही सरकार बदली कुछ मंत्रियों को भ्रम हो गया कि फैक्ट्री का मैनेजमेंट विपक्षी सरकार का समर्थन करता था, अतः इसके बजट में कटौतियां आरंभ कर दी गयी। सैकड़ों दलीलों के बावजूद प्रशसन में कमियां गिना कर फैक्ट्री को एक साल के भीतर बन्द होने के कागार पर ला खड़ा किया। यद्यपि ऊपर के मैनेजमेंट पर इसका कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा क्योंकि उन्होंने अपना तबादला अन्य राज्यों में करवा लिया। धीरे धीरे अन्य कर्मचारियों ने भी अपना अन्य विभागों में सामंजस्य बैठा लिया। शेष रह गये उसके जैसे गिने चुने कर्मचारी जिनको

अंततः घर बैठना पड़ गया। वह किसी अन्य स्थान में जाने को कतई तैयार नहीं था। साल भर तक बिना वेतन के इधर उधर की व्यवस्था से घर का गुजारा चलता रहा। इस बीच घर का लग्जरी सामान व कार बिक चुकी थी। गनीमत थी कि बड़े बच्चे को घर चलाने लायक नौकरी मिल गयी।

उसका अंतर्मन किसी भी प्रकार से यह मानने को तैयार नहीं था कि उसे नौकरी से निकाल दिया गया है और फैक्ट्री बन्द हो गयी है। पिछले तीन वर्षों से वह नियमित रूप से फैक्ट्री आता रहा है। वह बार बार लोगों को यह विश्वास दिलाने की कोशिश करता है कि वह एक दिन इस फैक्ट्री को चलवाने में सफल होगा। कई बार तो वह इतना भावुक हो जाता है कि इसे अपनी माँ बता कर पूछने लगता है कि इसे कैसे छोड़ा जा सकता है। कुछ लोग इसे भावना में बहने वाला बेवकूफ समझ कर उसका समर्थन कर प्रकरण समाप्त करने की कोशिश करने लगते तो कुछ लोग उसे वास्तविकता समझाने का असफल प्रयास करने लगते हैं।

फैक्ट्री पर आने के बाद पिछले दो वर्षों में उसने न जाने कितने लम्बे लम्बे लेख लिख कर अखबारों भिजवाने शुरू कर दिये थे। इस बीच उसने अनेकों पत्र सरकारी मंत्रियों को भी पोस्ट कर डाले थे। जैसे ही फैक्ट्री में कोई पत्र आता वह बड़े गौर से उसे देखता और खोलने लगता। इस आशा के साथ कि उसे अपने पत्र का जवाब मिलेगा, परंतु ऐसा कुछ नहीं होता। वह हताश होकर रुके हुए पंखे को देखने लगता। फिर खुद ही अपने को दिलासा देने लगता कि वह कभी तो कामयाबी प्राप्त करेगा। एकदिन जैसे ही उसने जाना कि केन्द्र से कोई मंत्री उनके शहर आ रहे हैं, वह धक्के मुक्के खाता हुआ उनके पास पहुँच गया और फैक्ट्री शुरू करने का आग्रह पत्र मंत्रीजी को देने में सफल हो गया।

ऐसे ही एक दिन वह अलसाया सा बैठा अपनी फाइल लिखने पढ़ने में लगा हुआ था कि अचानक उसे फैक्ट्री के गेट पर एक बड़ी गाडी रुकने की आवाज आई। कुछ देर में तीन अधेड़ उम्र के व्यक्ति फैक्ट्री के अन्दर प्रवेश कर चुके थे। उसे लगा उसने अपना खोया हुआ खजाना प्राप्त कर लिया है। वह नई उमंग से भर गया और उसमें पहले से कई गुना ऊर्जा भर गयी। अपनी कमीज व पेंट ठीक कर वह सीधा उनके पास जाकर खड़ा हो गया।

-तुम यहां के चौकीदार हो ? उनमें से किसी एक ने उसे सामने खड़ा देख कर सवाल किया।

- नहीं नहीं मैं यहाँ का सुपरवाइजर हूँ। उसने थोड़ा सा अकड़ कर जवाब दिया। वह बहुत देर से इंतजार कर रहा था कि उसे फैक्ट्री व मशीनों के विषय में, मैनेजमेंट के बारे में बात की जाए। उसने अपने आपको पढ़ा-लिखा साबित करने के लिये कुछ अंग्रेजी शब्द भी मन ही मन सोच लिये थे। उनकी बातचीत के बीच में उसने कई बार बोलने का प्रयास किया परंतु उन लोगों की रुचि मशीनों की जांच में अधिक थी।

दूसरे दिन समाचार पत्रों में जब समाचार आया कि सरकार फैक्ट्री पुनः चालू करने पर विचार कर रही है तो वह खुशी से झूम उठा। एक स्थानीय पत्र में उसका नाम भी छपा था जिसे पढ़ कर तो ऐसा महसूस होने लगा था जैसे उसने बहुत बडी लॉटरी हासिल कर ली है। वह अपने हर परिचित अपरिचित को यह बात बताना चाह रहा था। जब कभी भी इसकी चर्चा होती वह जेब से अखबार की कटिंग निकाल कर दिखाना नहीं भूलता।

कुछ ही महिनों में फैक्ट्री में फिर से हलचल आरंभ हो गयी और इंजिनियर्स की टीम मशीनों को चालू करने में लग गयी। वह सुबह से शाम तक फैक्ट्री की देख रेख में जुट गया और हर किसी को मशीनों की जानकारी देने लगा। उसके चेहरे का उत्साह देखते ही बनता था।

दो महिने में ही फैक्ट्री की मशीनें दुरस्त करली गईं और वह पहले की तरह चालू अवस्था में आ गयी। इस बीच फैक्ट्री का नया मैनेजमेंट भी बना दिया गया और वर्कर्स भी नियुक्त करने शुरू हो गये। परंतु इन सब में उसका कहीं भी नाम नहीं था। वह बार बार अपनी दलील देता रहा कि वह बीस वर्षों से यहाँ काम कर चुका है पर फैक्ट्री के नये मैनेजमेंट में उसकी कोई आवश्यकता नहीं समझी गयी।

एक बार फिर फैक्ट्री अपनी अपने जोशीले अन्दाज से चलने लगी थी। तेज गति से गाड़ियां गेट में प्रवेश कर रही थीं। वर्कर्स भी नयी यूनीफार्म के साथ अन्दर बाहर आ जा रहे थे। लग रहा था जैसे वह जमीन पर पड़ा हुआ है और सारे लोग उसके ऊपर से निकल रहे हैं। फिर वह पथराई आखों से फैक्ट्री की चिमनी के धूंए को उड़ते देख रहा था। ऐसा लग रहा था जैसे फैक्ट्री के कचरे के साथ उसे भी बाहर कर दिया गया है। कुछ ही देर बाद उसने अपने चेहरे पर जोर से मुस्कराहट फैलाई। उसने तय किया कि वह अपनी नौकरी की चिंता नहीं करेगा। उसने फैक्ट्री फिर से शरू करवाने का मिशन जीत लिया है। उसे याद आया कि ऐसे ही एक और फैक्ट्री तीन वर्षों से बन्द पड़ी है। अपने शरीर में नई स्फूर्ति पैदा की और वह चल पड़ा उस बंद कारखाने, अपने नये मिशन की तरफ।

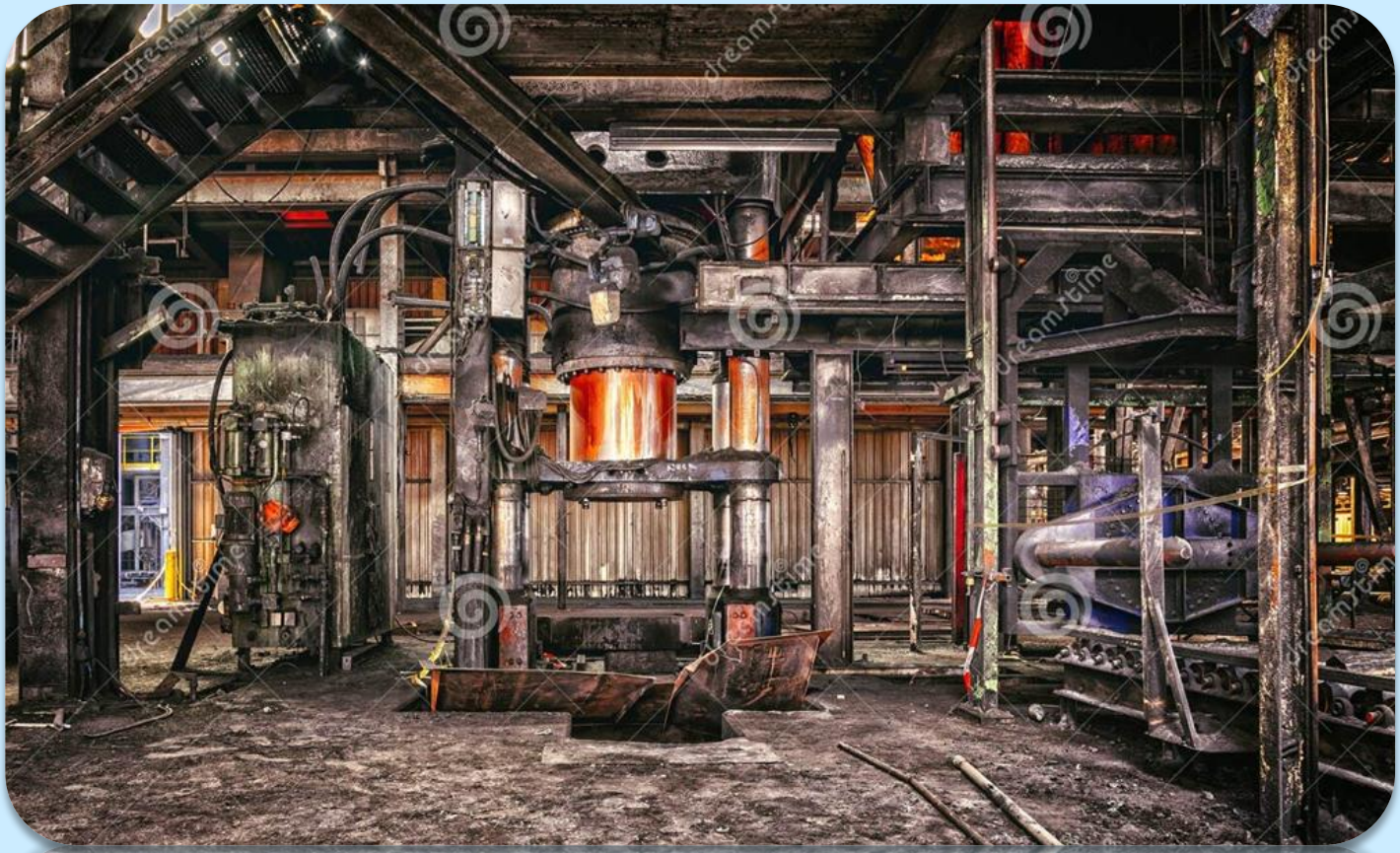

कहानी

चमगादड़ों वाला पेड़

राजेश जोशी

पुराने और नए शहर के बीच दो तालाब थे। एक बड़ा तालाब और दूसरा छोटा तालाब। छोटे तालाब को छोटे मियाँ ने बनवाया था जबकि बड़े तालाब को बनाने के कई किस्से थे जो राजा भोज की कथाओं तक जाते थे।दोनों तालाबों पर पुल बने हुए थे जो पुराने शहर से नए शहर को जोड़ते थे। बड़े तालाब पर बने पुल के दोनों तरफ की सड़क काफी संकरी थी। उस के दोनों तरफ बहुत पुराने और बहुत घने पेड़ थे। इन्हीं पेड़ों में एक विशाल पेड़ था जिसे सब लोग चमगादड़ों का पेड़ कहते थे। कुछ लोगों का मानना था कि वह पेड़ तीन सौ साल से भी ज्यादा पुराना था। अलग अलग लोग उसकी अलग अलग उम्र बताते थे। उसकी छाँह इतनी चौड़ी थी कि सड़क की पूरी चौड़ाई पर हमेशा बनी रहती थी।

चिलचिलाती धूप में भी जब उसके नीचे से गुजरो तो मौसम बदल जाता था। गर्मियों में पैदल चलते लोग अक्सर चार घड़ी उसके नीचे रूक कर राहत की सांस लेते। राहत की सांस लेने का मुहावरा इसी की छाँह में आकर समझ में आता था। दिन के समय हजारों की संख्या में चमगादड़ें इसकी डगालों पर लटकी रहती थीं। चमगादड़ें मनुष्यों की ही बिरादरी में आती थीं। याने स्तनधारी प्राणियों में। कलाकारों की तरह ये चमगादड़ें दिन भर पेड़ पर उलटी लटकी रहतीं। चमगादड़ें दिनभर सोती रहतीं और सूरज के ढलते ही पेड़ छोड़ कर पूरे आकाश पर छा जातीं। वे मनुष्य की इच्छाओं की तरह उड़ना जानती थीं। झुण्ड के झुण्ड जब वे उड़तीं तो पूरे आकाश पर छा जातीं। चमगादड़ों का पेड़ घना तो था ही उसका तना इतना मोटा था कि अगर आठ-दस आदमी अपने दोनों हाथ फैला कर घेरा बनायें तभी उसका तना घेरे में आ सकता था। इस पेड़ पर दिनभर चमगादड़ें लटकी रहतीं जैसे वे इस पेड़ पर लगने वाले फल हों।

नई अर्थनीति के पेट से एकाएक इतनी कारें और मोटरसाइकिलें पैदा हो गयी थीं कि शहर की सड़कों पर चलना मुश्किल हो गया था। यह सड़क खास थी। जो हवाई अड्डे को नये शहर से जोड़ती थी। इस सड़क पर ट्राफिक ज्यादा था। इसलिए

इसको चौड़ा किये जाने का निर्णय लिया गया। कार्यवाही चालू हुई तो इस सड़क के दोनों और बने कालेजों और पुराने भवनों की चौहद्दी वाली दीवारों को तोड़ कर पीछे कर दिया गया। हजारों पेड़ काट दिये गये। सड़क और तालाब के बीच बने पार्क उजाड़ दिये गये। चमगादड़ वाले पेड़ पर चमगादड़ों की आबादी पिछले कुछ साल में इतनी ज्यादा बढ़ चुकी थी कि एक अकेले पेड़ पर उनका गुजर बसर नहीं हो पा रहा था। इसलिए उन्होंने उस पेड़ के आसपास के पेड़ों पर भी बसेरे बना लिये थे। चमगादड़ वाले पेड़ की डगालें इतनी ज्यादा फैली हुई थीं कि वे आसपास के सारे पेड़ों पर पुल बना लेती थीं। चमगादड़ों को इन पुलों की ज़रूरत नहीं थी। डगालें गिलहरियों के लिये फ्लाई ओवर थीं। उन्हें एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर आने जाने के लिये वापस ज़मीन पर नहीं उतरना पड़ता था। चमगादड़ों वाले पेड़ के आसपास के पेड़ों के कटने के कारण आसपास के पेड़ों पर बसेरा बना चुकी चमगादड़ों को भी मुख्य पेड़ पर ही आना पड़ा। पेड़ पर चमगादड़ों की संख्या बढ़ गयी। सारी चमगादड़ों को अब बहुत सट सट कर लटकना पड़ता था। आकाश में जगह बहुत थी। शाम जब चमगादड़ें आकाश का चक्कर लगातीं तो तालाब और आकाश के बीच उनकी आवाजों का एक पूल बन जाता। इस पुल पर शाम को तफरीह के लिये आये जवान लड़के लड़कियों की आवाजें स्केटिंग करती रहती थीं।

आसपास की सारी सड़कों पर से बाधाएँ दूर हो चुकी थीं। एक चमगादड़ों वाला पेड़ ही बचा था। यह इतना बड़ा था कि इसको काटे जाने के लिये इस सड़क का ट्राफिक रोकना ज़रूरी था। इतवार को ट्राफिक कुछ कम हो जाता था लेकिन तालाब के किनारे तफरीह के लिये आने वालों की तादात बढ़ जाती थी। पुल के बगल वाले पार्क के बाहर तरह तरह की खाने पीने की चीजों के ढेले लग जाते। शाम के बाद वहाँ मेला सा लग जाता। सरकार ने निर्णय लिया कि पेड़ काटने का काम शाम के बाद किया जायेगा , जब चमगादड़ें पेड़ छोड़ कर तफ़रीह को निकल जाती हैं। एक दो दिन के लिये ठेले लगाने और तफरीह के लिये आने वालों पर भी पाबन्दी लगा दी जाएगी। ऐसा ही किया गया। पाबंदी के कारण उस शाम लोगों की आवक जावक कम हो गयी। नगर निगम के कर्मचारियों का अमला अपने साजो सामान के साथ जब चमगादड़ों वाले पेड़ के पास पहुँचा तो दंग रह गया। वहाँ कोई पेड़ नहीं था। पेड़ अपनी चमगादड़ों सहित गायब था। सिर्फ एक बड़ा सा खोखल सड़क के किनारे खुला पड़ा था।

इतना बड़ा पेड़ रातों रात कैसे गायब हो सकता है ? किसी को यह बात समझ नहीं आ रही थी। ऐसी मशीने भी शहर में नहीं थीं जो पेड़ को .....और वह भी इतने विशाल पेड़ को ज़मीन से साबुत उखाड़ कर ले जायें। इतने बड़े पेड़ को कहीं ले जाया जाता तो भी सड़क चलते पचासों लोगों की नज़र में आता। काट काट कर ले जाया जाता तो उसमें भी बहुत समय लगता। यह दिमाग चकरा देने वाली घटना थी। तत्काल नगर प्रशासन मंत्री और तमाम बड़े अधिकारियों को फोन लगाये गये। थोड़ी देर बाद ही मंत्री और अधिकारियों का दल घटना स्थल पर पहुँच गया। आसपास मुआयना किया गया। अगर पेड़ को काटा जाता तो डगालों के टुकड़े , पत्तियाँ आदि कोई तो सबूत मिलता लेकिन ऐसा कुछ भी वहाँ नहीं था। खोखल के आसपास पेड़ की जड़ों के भी टुकड़े नहीं थे। बहुत देर की माथापच्ची के बाद सबने एक राहत की सांस ली कि बिना किसी मेहनत के चलो एक बड़ी बाधा खत्म हो गयी। नगर निगम के अमले के साथ आये मजदूरों ने तत्काल मिट्टी डाल कर खोखल को भर दिया। बाकी काम तो सड़क बनाने वालों को करना था और उसमें अभी वक्त था। इस

काम के बाद नगर निगम का अमला भी लौट गया। रास्ते पर ट्राफिक रोकने के लिये लगाये गये बैरीकेड हटा दिये गये। ढेले वालों पर लगा प्रतिबंध भी हट गया। देखते ही देखते सारे शहर में यह खबर फैल गयी कि चमगादड़ों वाला पेड़ अपने आप गायब हो गया।

लम्बी लम्बी गप्प हांकने और अफवाहें फैलाने में इस शहर का कोई सानी नहीं। शाम होते न होते सारा शहर गायब हो चुके पेड़ की जगह पर उमड़ने लगा। जब रास्ते चलता कोई दूसरे से पूछता कि .....कों खाँ काँ जा रए हो ? तो एक ही जवाब हर दिशा से आता कि मियाँ चमगादड़ों वाले उस पेड़ को देखने जारए हैं.....जो गायब हो गया। किसीने यह सोचने की जहमत ही नहीं की कि जो गायब हो चुका है उसे देखा कैसे जा सकता है। और जो दिखाई देगा वह गायब कैसे हो सकता है। लेकिन लोगों का तांता रूकने का नाम नहीं ले रहा था। जब हजारों लोग उस जगह पहुँचे तो देखा कि चमगादड़ो वाला पेड़ बिना किसी खरोंच के अपनी जगह मौजूद था। शाम हो चुकी थी इसलिए चमगादड़ें आकाश पर मंडरा रही थीं। लोगों को निराशा भी हुई और खुशी भी कि पेड़ अपनी जगह सही सलामत था। लोगों को लगा कि शहर ने अपनी फितरत के हिसाब से ही यह अफवाह उड़ाई है। कुछ लोगों का ख्याल था कि पेड़ के गायब होने की अफवाह खुद सरकार ने उड़ाई है जिससे किसी भी तरह का विरोध न हो सके और पेड़ की लड़की को भी ठिकाने लगाया जा सके।

शहर के हजारों फोन फिर घनघना उठे। कुछ ही पलों में हड़कम्प मच गया। मंत्री ,संत्री और अधिकारियों का अमला एक बार फिर अपने लावलश्कर के साथ घटना स्थल पर हाजिर हो गया। सब हैरत से ताक रहे थे। पेड़ मौजूद था। एकदम पहले वाली ही जगह पर और पहले वाली ही शक़्ल में। कोई समझ नहीं पा रहा था कि माजरा क्या है। प्रेस और मीडिया भी अपने कैमरे और माइक्रोफोन्स के साथ आ धमका था। तरह तरह के सवाल हवा में उछल रहे थे। चमगादड़ों की आवाज़ में कई बार सवाल और कई बार दिये जा रहे जवाब डूब जाते। न सवालों में कोई विविधता थी न जवाबों में। न सवाल पूछने वालों की अक़्ल काम कर रही थी न जवाब देने वालों की। पेड़ की तरफ देखने से लगता था कि पेड़ सारे तमाशे पर धीरे धीरे मुस्कुरा रहा है। गायब होने का रहस्य या तो उसे पता था या चमगादड़ों को।

लंतरानियाँ नए नए किस्से गढ़ने में मशगूल थीं। वहीं रेत घाट से नीचे उतर कर रंगरेजों के कुछ मकान थे। पेड़ के सामने से एक घाटी गिन्नौरी वाले तालाब की तरफ़ उतरती थी , जिसे रेत घाट कहा जाता था। वहीं रंगरेजों की एक बस्ती थी। माना जाता था कि जब किसी कपड़े पर बार बार चढ़ाने के बाद भी रंग नहीं चढ़ता तो रंगरेज ऐसी ही अफवाहें उड़ा दिया करते हैं। अफवाह चल निकले तो कपड़े पर रंग चढ़ने लगता है। पेड़ के गायब होने की अफवाह की तोहमत सरकार के माथे से होकर अब रंगरेजों के सिर आ गयी थी। लोग कह रहे थे कि यह अफवाह रंगरेजों की ही उड़ाई हुई है। वर्तमान मेयर को बदलवाने के लिये यह अफवाह विरोधियों ने उड़वाई है। जितने मुँह उतनी बातें थीं। अनुमान की डोर लगातार लम्बी हो रही थी। जिसका दिमाग जिस दिशा में चलने लगता वह उधर ही निकल पड़ता। चमगादड़ों की तरह चाहे आदमी न उड़ पाये लेकिन दिमागी उड़ान तो भर ही सकता है। आदमी की बिरादरी की एक मछली होती है और एक यह उड़ने वाली चीज़ इसलिए आदमी में भी दोनों खूबियाँ पाई जाती हैं। जीवन में जिन्होंने तैरना तो दूर कभी तालाब के किनारे की सीढ़ियों पर खड़े होकर पाँव भी गीले नहीं किये वो भी दिमागी गोता लगाने में उस्ताद थे। इसी तरह उड़ने का हुनर चाहे किसी को न आता हो लेकिन दिमागी उड़ान भरने से भला किसी को कौन रोक सकता था।

आधी रात तक तमाशा चलता रहा। पुलिस ने जब डण्डा बजाना शुरू किया तभी लोगों की भीड़ छटना शुरू हुई। नगर प्रशासन की नये सिरे से मीटिंगें शुरू हुई और एक बार फिर पेड़ को काटे जाने का निर्णय लिया गया। तारीख तय हुई और पेड़ के आसपास सख़्त पहरा बैठा दिया गया। इस बार प्रशासन ज्यादा ही चौकन्ना था। किसी भी तरह की गड़बड़ी की कोई गुंजाइश नहीं छोड़ी गयी थी। पेड़ काटे जाने के लिए जो तारीख़ तय की गयी थी उसके एक दिन पहले ही पेड़ के

आसपास पुलिस का पहरा बिठा दिया गया । दस पन्द्रह पुलिसवालों की एक पूरी टुकड़ी पहरे पर थी । बीच बीच में आसपास घूमकर गश्त भी लगाई जा रही थी । लेकिन सुबह होती और नगर निगम का अमला पेड़ काटने पहुँचता इससे पहले ही , पता नहीं कैसे , हवा का एक झौंका आया और पहरे पर बैठे सारे सिपाहियों की पल भर को आँख लग गई । गश्त कर रहे सिपाही गश्त करते करते ही सो गये और पेड़ के आसपास बैठे अपनी अपनी जगह लुढ़क गये । मुश्किल से दो पल को आँख झपकी होगी और पेड़ गायब हो गया ।

एकाध बार की बात होती तो बात आई गई हो जाती लेकिन ऐसा अब बार बार हो रहा था। बात राष्ट्रीय और धीरे धीरे अन्तर्राष्ट्रीय आसमान में उड़ान भरने लगी थी । अब पेड़ के आसपास विदेशी मीडिया के लोगों ने भी अपना डेरा जमा लिया था । इस बीच ही कई हजार फोटो उस पेड़ के चमगादड़ों के और गायब होने के बाद बचने वाले खोखल के लिये जा चुके थे । शहर के अखबारों और न्यूज़ चैनल्स पर इन दिनों बस एक ही खबर थी - चमगादड़ों वाले पेड़ की , उसके गायब होने और वापस आने की । दो दिन बाद पर्यावरणवादियों की एक संस्था का एक जत्था भी घटना स्थल पर आ गया । उनमें कई नौजवान लड़के और लड़कियाँ थीं । ज्यादातर लड़के और लड़कियाँ जीन्स और हरे रंग की टीशर्ट या कुर्ते पहने हुए थे । उनकी टीशर्टस् पर अंग्रेजी में तरह तरह के वाक्य लिखे हुए थे । उन्होंने आते ही जगह जगह अपने पोस्टर और बैनर लगा दिये । मीडिया का आकर्षण अब बदल गया था । कैमरों के मुँह अब उनकी तरफ घूम गये थे । संस्था का सचिव मीडिया को अपनी बाइट दे रहा था । उसने कहा सवाल पेड़ के गायब होने और वापस आने का नहीं है , सवाल चमगादड़ों के नैसर्गिक न्याय का है । वे धरना दे कर बैठ गये थे और अपनी अपनी मिनरल वाटर की बोतलों से पानी पी रहे थे । धरने के बाद ही उन्होंने एक सेमीनार की घोषणा भी की । इसी बीच किसी संस्था का एक बयान आया कि यह जादूगरों द्वारा किया गया कारनामा है । जिस तरह हिप्नोटिज़्म के द्वारा जादूगर बड़ी बड़ी चीजों को गायब कर देते हैं इसी तरह जादूगरों ने ही पेड़ को गायब करने का कारनामा अंजाम दिया है । सत्ताधारी दल के एक नेता जो हमेशा ही कुछ उटपंटाग बयान देने के लिये मशहूर थे उन्होंने बयान दे दिया कि प्रतिपक्ष जादूगरों से मिलकर यह काम करवा रहा है । इस बयान के आते ही राजनीतिक चिल्लपौं शुरू हो गयी । सारे बयानवीर खम्ब ठोंककर मैदान में उतर आये ।

हर बार नगर निगम का अमला पेड़ काटने पहुँचता और पहरेदारों को झपकी आ जाती और पेड़ गायब हो जाता । सरकार की ही नहीं लगता था कि सारे शहर की और वैज्ञानिकों की भी अकल घास चरने चली गयी थी । शहर के लोगों ने मान लिया था कि चमगादड़ें ही पेड़ को लेकर उड़ जाती हैं । हालांकि चमगादड़ों की संख्या जो भी हो इतने बड़े पेड़ को लेकर उड़ना उनके लिये संभव नहीं था ।

शाम का वक़्त था। मैं और मट्टू तालाब की सफ़ीलों पर बैठे इसी मसले पर बात कर रहे थे। मट्टू ने कहा- चमगादड़ें भी अजीब झक्की हैं यार ,अगर पेड़ को लेकर उड़ जाती हैं तो किसी दूसरी जगह पर जाकर अपना पेड़ रख लें और वहाँ मजे में रहें , जबरन पूरे शहर की नाक में दम कर रखा है। किसी राह चलते ने कहा -आखिर चमगादड़ें आदमी की ही बिरादरी में आती हैं .....।

तभी एक आदमी इस बातचीत में आकर शामिल हो गया .....मट्टू की बात काटते हुए उसने कहा कि तुम्हें अपनी कार चलाना है तो तुम एक नई सड़क क्यों नहीं बना लेते ,इन पेड़ों के पीछे क्यों पड़े हो.....चमगादड़ें अपने पेड़ की जगह क्यों बदलें ?

मट्टू को अपनी बात काटने वाले पर बहुत गुस्सा आया कि एक तो बिना जान पहचान जबरन बातों में ठुस आया और उस पर बात भी काट रहा है लेकिन जब तक मट्टू अचानक बातचीत में शामिल हुए उस आदमी को जवाब दे पाता , उस आदमी ने अपने दोनों हाथ हवा में फैलाए , ऊपर उठा और चमगादड़ों के बीच जाकर गायब हो गया।

अकस्मात अब तक

प्रभात गौतम

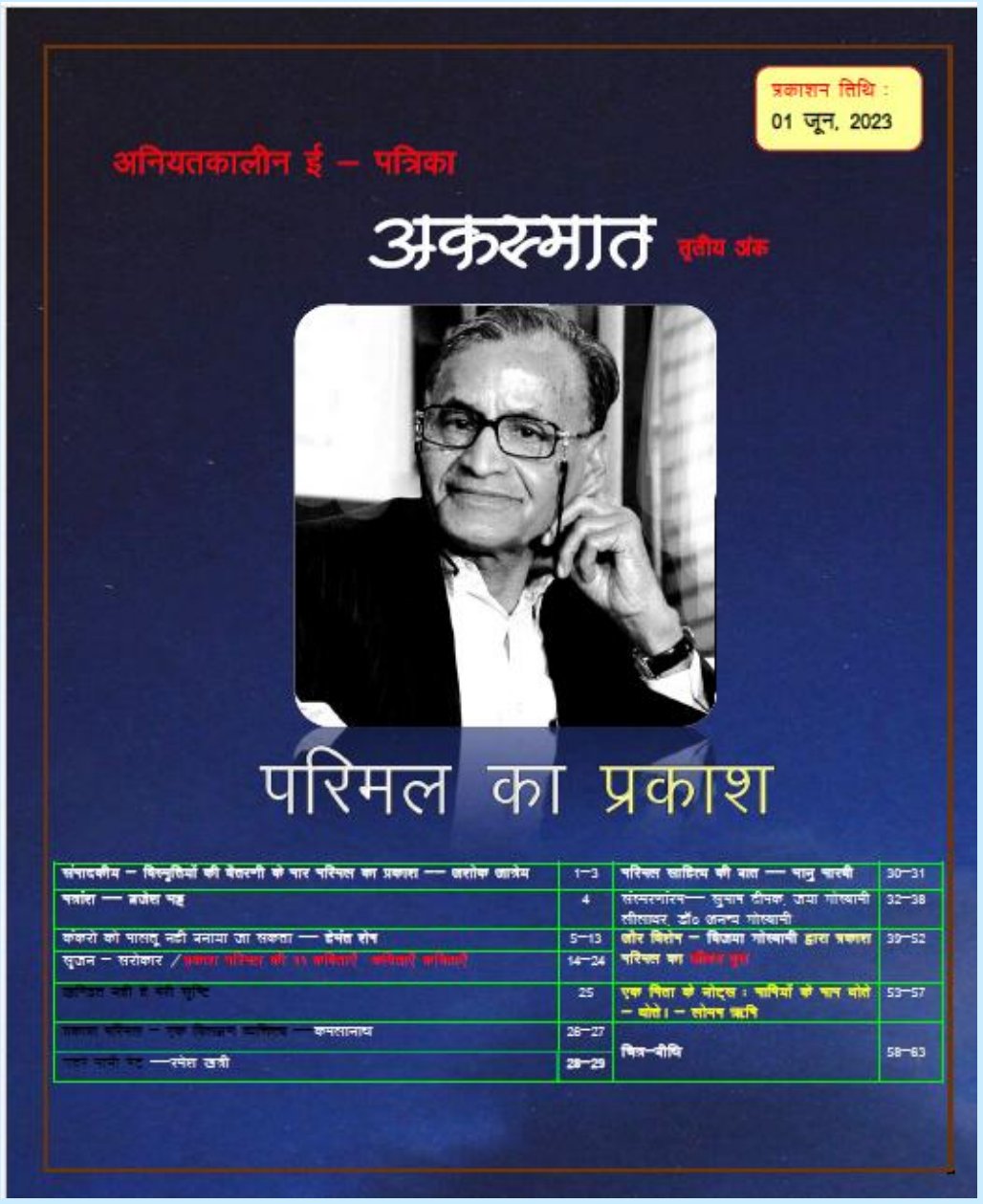

देखा जाए तो अकस्मात के शुरू से लेकर अब तक के सभी अंक एक अलग पहचान स्थापित करने में सफल रहे हैं। इसी क्रम में हिंदी और तेलुगु कथाओं को लेकर अकस्मात का यह आजादी विशेषांक पाठकों के लिए और भी विशेष होने जा रहा है, क्योंकि इसमें चौदह लेखकों की चुनी हुई कहानियां ग्यारह भिन्न दृष्टिकोणों को अभिव्यक्त करती हैं। इन्हें किसी भी तरह से साधारण नहीं कहा जा सकता है। अपनी कथा वस्तु, अपने कथानक, अपने संदेश और अपनी शैली के लिए पाठक इन्हें पंक्ति से अलग खड़ा पाएंगे। किसी कहानी में रिश्तो की कमजोर होती कड़ियां हैं तो कहीं अपने मन के द्वंद से जूझते आम आदमी की कसक है। कहीं प्रकृति से वार्तालाप है तो कहीं संवेदनाओं का संगीत है। खास बात यह है कि इन कहानियों के पात्र इन सबके बावजूद अपने कद से ऊंचा दिखने का प्रयास नहीं करते। अपनी प्यास बुझाने के लिए अंजुरी से ज्यादा जल की मांग नहीं करते। जब दरवाजे और खिड़कियां खुली हो तो मकान में चोरी की गुंजाइश नहीं रहती।

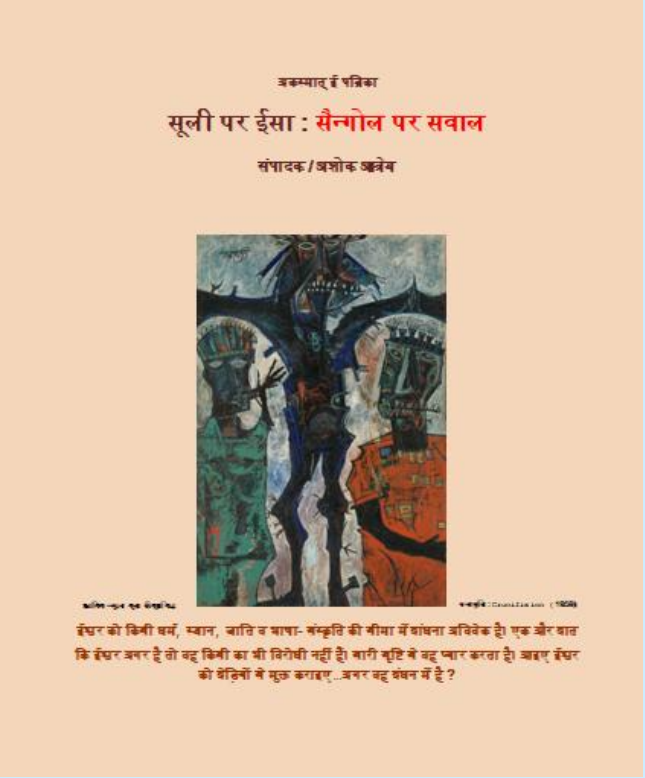

अकस्मात एकाएक अवतरित ई-मैग्जीन नहीं है, बल्कि समय-समय पर चित्त को मथने में समर्थ विषयों के विमर्श का एक सशक्त मंच भी है। सुभाष दीपक के शब्दों में मजदूर दिवस पर प्रकाशित अपने पहले ही अंक से इसने सुषुप्त अट्टालिकाओं के लौह दरवाजों पर दस्तकें दीं और अपनी उदासीनता ओं के खोलों में छुपे कुछ साहित्य कारों को प्रतिक्रिया व्यक्त करने को विवश कर दिया। द्वितीय अंक में राघवेंद्र रावत की नाट्य समीक्षा रक्त कल्याण और राजेंद्र बोड़ा का अखबार में कार्टून/ जैसे गधे के सिर पर सींग लेख बहुत कुछ बातें कह जाते हैं।

अकस्मात शुरू से ही एक कोरस की मानिंद रहा है। मेरा, आपका और उन सब का, जो किसी ना किसी वजह से अपनी बात नहीं कह पा रहे थे। वे घबराकर अपनी छवि अपनी उम्मीद ढूंढते ढूंढते थक गए थे। अकस्मात में उन्होंने सामयिक सवालों का जवाब पाया। सारगर्भित संपादकीय लेख देखा। विचारोत्तेजक सामग्री देखी। सैंगोल हो या संसद की नई इमारत, अकस्मात में पाठकों ने सदैव विचारणीय विषयों पर रचनाएं पाई। अकस्मात ने वरिष्ठ लेखक, चित्रकार, कवि, उपन्यासकार और दार्शनिक प्रकाश परिमल पर समग्र और सार परक सामग्री प्रकाशित की जो सराहनीय है। शुरुआत में प्रकाशित श्री अशोक आत्रेय जी की संपादकीय पठनीय है।

बम्बई से विजिया गोस्वामी लिखती हैं - अकस्मात की सभी कहानियां बेहद साधारण भारतीय मध्यमवर्गीय जीवन में रचे बसे अनेक रूपों वाले चरित्रों का संधान तो करती ही हैं, वे खास तौर पर उन भावनात्मक धागों की ओर भी हमारा ध्यान आकर्षित करती हैं जो भारतीय समाज को एक विशिष्ट सूरत देते हैं...इस तरह ये कहानियां समकालिक-सामाजिक यथार्थ को सामने लाते हुए मनुष्य की मनोभावनाओं, उसके अनेक छोटे बड़े सुखों और दुखों को अद्भुत साफगोई से प्रस्तुत करतीं हैं।

अकस्मात श्री अशोक आत्रेय द्वारा रोपा गया पौधा है जो श्री सुभाष दीपक और श्री हेमंत शेष जैसे सहयोगी कथा करों और सहृदय रचनाकारों द्वारा सींचा जाता रहा है जो बधाई के पात्र हैं।

तैलंगनामा : स्वयं सिद्ध तैलंग-प्रतिभा का प्रमाण

प्रभाकर गोस्वामी

संस्कृति, उप-संस्कृति एवं प्रवासीय प्रतिभा-संरक्षण अध्येताओं विशेष रूप से तैलंग भट्ट गोस्वामी समाज के सजातीय बंधुओं के लिए यह हर्ष का समाचार है कि श्री हेमंत शेष की लंबी उत्सुकता, अध्ययन और शोध के लिए समर्पण और प्रतिबद्धता ने एक असाधारण और ऐतिहासिक अविस्मरणीय ग्रंथ प्रस्तुत कर दिया है जिसे हाल ही में उन्होंने 'तैलंगनामा' पुस्तक के रूप में प्रस्तुत किया है।

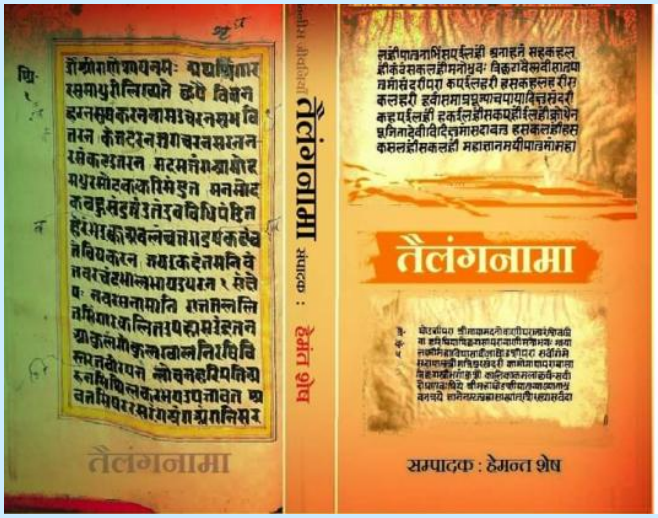

जब श्री हेमंत शेष अपनी इस शृंखला के कुछ लेख फ़ेसबुक पर लिख रहे थे तो अधिकांश पाठकों की जिज्ञासा शांत हो रही थी वहीं अपने समाज और संस्कृति को अधिक जानने और समझने का मन भी बराबर हो रहा था। तब मुझ सहित, अनेक पाठकों ने यह अनुरोध भी किया था कि इसे पुस्तकाकार रूप में लाया जाय तो दीर्घकालिक प्रामाणिक ग्रंथ के रूप में यह अध्येताओं का मार्गदर्शन कर सकेगा। अतीव प्रसन्नता का विषय है श्री हेमंत शेष ने इस सुझाव को नज़रअंदाज़ नहीं करते हुए पाठकों की इस इच्छा का सम्मान किया। बधाई और अभिनंदन।

कवि, कथाकार, चित्रकार और समीक्षक श्री हेमंत शेष के इस संपादित ग्रंथ 'तैलंगनामा' में उनके खुद के प्रभूत अवदान के अतिरिक्त कथाकार एवं जलवैज्ञानिक श्री कमलानाथ शर्मा और लेखक एवं समाज-सेवी श्री भानु भारवि के लेख हैं।

कथाकार श्री कमलानाथ शर्मा ने श्री वल्लभाचार्य, आदि दस तैलंग विचारकों को 60 से अधिक पृष्ठों में समेटते हुए पन्द्रहवीं सदी से लेकर इक्कीसवीं सदी की विद्वत् परंपरा के आधार पर पुस्तक के लिये ठोस शास्त्रीय पृष्ठभूमि स्थापित की है । ये विभूतियाँ हैं - महाप्रभु वल्लभाचार्य, गोस्वामी विट्ठल, गोस्वामी हरिराय, गोस्वामी गोकुलनाथ, जगन्नाथ पंडितराज ,श्रीकृष्ण भट्ट 'कवि कलानिधि', श्री रमानाथ शास्त्री, भट्ट मथुरानाथ शास्त्री, गोस्वामी हरिकृष्ण शास्त्री , श्री कलानाथ शास्त्री !

यों तो अधिकांश जानकारी इन विद्वानों पर अनेक मंचों पर उपलब्ध थी पर अनेक पाठक इन सब के अवदान और व्यक्तित्व के अनेक पहलुओं से अनभिज्ञ थे : सभी लेखों में कोई न कोई नयी बात भी पढ़ने में आयी है और इस उपक्रम ने उनका ज्ञानवर्धन ही किया है। पुस्तक में पृष्ठ-संख्या की सीमा, प्रकाशक ने अवश्य ही निर्दिष्ट की होगी, अन्यथा कमलानाथ जी के शोध की सीमा और गहराई ख़ासी अच्छी है और वे लंबा रोचक और अर्थपूर्ण गद्य लिखने में माहिर भी हैं क्योंकि उनकी कहानियों की लंबाई मापने में आम-पाठक को कई बार ज़ोर तो आता है किंतु वह उसे अधूरा छोड़ नहीं पाता है।

श्री भानु भारवि ने 'कल्याण-कल्पतरु' के संस्थापक-सम्पादक एवं कल्याण हिन्दी के भी सम्पादक रहे श्री चिम्मनलाल गोस्वामीजी पर साढ़े चार पृष्ठों का एक लेख प्रस्तुत किया है जिस में उस विराट व्यक्तित्व को समेटना लगभग नामुमकिन सा है । इसी तथ्य को भांपते हुए श्री हेमंत शेष ने गोस्वामी जी के रामचरितमानस पर अवदान को लेकर लगभग पाँच पृष्ठ और जोड़े हैं - किंतु मुझे अनुभव हुआ कि यह सब भी उनके कृतित्व का बस एक अंश-मात्र ही प्रस्तुत कर सका है ।

भानुजी के पास चिम्मनलाल जी सहित अनेक अन्य तैलंग-प्रतिभाओं के कृतित्व पर वृहद् सामग्री का संकलन है किंतु पता नहीं वे किस द्वंद्व में फँस कर यहाँ उसे उंडेल नहीं सके। जबकि अपने 'अनुष्टप प्रकाशन' से श्री सुभाष दीपक द्वारा संपादित एक ग्रंथ चिम्मनलाल गोस्वामी जी पर वे अभी प्रकाशित करके ही चुके हैं । विश्वास है कि इसके अगले परिवर्धित संस्करण में हमें अधिक शोध और सामग्री सुलभ होंगे।

श्री कमलानाथ शर्मा और श्री भानु भारवि के इस अवदान हेतु बधाई।

पुस्तक छापना आजकल शायद सबसे आसान कार्य है । अनेक लेखकों की रचनाओं को जोड़ कर उन्हीं में से अपना एक संपादकीय लेख निकाल देना और पुस्तक प्रकाशित कर देना अब आम प्रवृत्ति हो चुकी है । किंतु श्री हेमंत शेष इस मामले में आरम्भ से एक सजग अपवाद हैं । वे इस आदत को सिरे से नकारते हुए अपने अब तक के सभी प्रकाशनों में यह प्रमाणित भी करते हैं कि संपादक का काम केवल कटिंग पेस्टिंग नहीं है !

उन्होंने इस पूरी पुस्तक में संपादकीय सहित नए तथ्य गुने हैं और कुल 85 पृष्ठ स्वयं लिखे हैं। उनकी कलम से सामने आये ये सभी ऐसे विद्वान तैलंग-रत्न हैं - जिनकी न गहराइयों का हमें पहले पता था और न ही भूगोल के संकेत हमारे पास थे । अधिकांश के तो नाम भी हम सभी ने सुने तक नहीं थे । उन में से कुछ के व्यक्तित्व और कृतित्व की वर्णमाला के प्रारंभिक अक्षरों से भी हमारा अक्षर ज्ञान नहीं हुआ था। जैसे - श्री समरपुंगव दीक्षित, श्री शिवानन्द गोस्वामी, श्री अप्पय दीक्षित, श्री जनार्दन भट्ट , श्री पद्माकर , श्री गोरेलाल 'लाल कवि' श्री गट्टूलाल शास्त्री, श्री हृषीकेश शर्मा , श्री कमलाकर 'कमल'।

किंतु यह सुखद सुयोग है कि श्री हेमंत शेष की प्रेरणा और दिव्य-दृष्टि ने इन्हें गहराई से खोज और शोध कर आख़िर पहचान ही लिया ! गर्त में समा गए इन इतिहास-पुरुषों के व्यक्तित्व और कृतित्व पर अपने शोधक की पैनी नज़र डाल कर उन्होंने अनेक परतों को खोला और फिर से उनका विराट स्वरूप तैलंग-समाज के समक्ष ला खड़ा किया । साधुवाद।

इस पूरी प्रक्रिया में श्री हेमंत शेष ने अनेक प्रचलित भ्रामक तथ्यों का अपनी दृष्टि शोध, और प्रभावी कलम के सहारे खंडन भी किया है। पुरानी अनेक धारणाओं में सुधार किया है। अनेक विचारों को पुनः प्रतिपादित किया गया है। यह सब एक बड़ी हिम्मत और शोध की जड़ों में उनकी पैठ को दर्शाता है जिसमें हेमंत शेष कभी चूक नहीं करते। उनका श्रमसाध्य शोध और समझ दोनों ही वंदनीय और प्रशंसनीय हैं। शोध के बाद सामने आये नए तथ्यों को हमें उदारता के साथ स्वीकारना भी चाहिए।

पुस्तक का सम्पादकीय- 'प्रवासी तैलंग समाज और उसका अवदान' एक पठनीय और विचारणीय लेख है। इसमें प्रवास के कारण और प्रभावों की व्याख्या करते हुए श्री हेमंत शेष के समाजशास्त्रीय दृष्टिबोध से मुझे व्यक्तिगत प्रसन्नता हुई है। पुस्तक के अंत में उन्होंने सोलहवीं सदी में आत्रेय कुल के दक्षिण भारत के मूल निवासस्थलों को चिन्हित करते हुए प्रवास मार्ग को भी समझाने का प्रयास किया है।

इसी लेख में उन्होंने बड़ी ईमानदारी और उदारता के साथ यह भी स्वीकार किया है कि यह पुस्तक अभी भी 'अधूरा-तैलंगनामा' है। उनसे आंशिक-सहमति दर्ज करते हुए कहूँगा कि हर कृति में विस्तार और सुधार की अपार संभावनायें हमेशा होती हैं; जैसे जैसे हम आगे बढ़ते हैं और हमारी दृष्टि का विस्तार होता जाता है। किंतु अभी ये गिलास आधा ख़ाली नहीं है बल्कि भरा हुआ है। उम्मीद है इस तरह की उनकी अन्य पुस्तकों से उनका यही गिलास भविष्य में छलकने भी लगेगा। पुनः बधाई

विविधता का वैभव

विनय जोशी

तेलंगाणा भारत का वह राज्य है जहाँ भारत की विविधताओं के एक साथ दर्शन होते हैं। इसे 'उत्तर के दक्षिण और दक्षिण के उत्तर के रूप में जाना जाता है। विभिन्न भाषाओं और संस्कृतियाँ की संगम भूमि तेलंगाना में हमे विरासत के भी खून दर्शन होते हैं और विकास के भी भारत का यह 29 वीं राज्य वास्तव में उम्मीदों का भी राज्य है। भारतीय खाद्य परंपरा का यहाँ बखूबी संरक्षण हुआ है और यह राज्य अपने परम्परागत खानपान के लिए भी आकर्षण का केन्द्र है।

02 जून 2014 को आंध्रप्रदेश से अलग होकर बना तेलंगाना राज्य भारत का बारहवाँ सबसे बड़ा राज्य है जो 1,14,840 वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है। महाराष्ट्र, छत्तीसगढ, आंध्रप्रदेश और कर्नाटक इसके सीमावर्ती राज्य हैं। तेलंगाना की राजधानी हैदराबाद को 10 साल के लिए आंध्र प्रदेश और तेलंगाना राज्य की संयुक्त राजधानी घोषित किया गया है, इसलिए सन् 2024 तक इन दोनों राज्यों की राजधानी हैदराबाद ही रहेगी। तेलंगाना में इस समय कुल तैंतीस जिले हैं।

तेलंगाना की प्रमुख नदियों कृष्णा और गोदावरी की वजह से राज्य में सिंचाई की अच्छी सुविधा है। तेलंगाना की अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण योगदान है। राज्य की सत्तर फीसदी आबादी कृषि पर निर्भर है। यहाँ की समृद्ध उपजाऊ भूमि चावल, कपास. मक्का और दालों साहित अनेक फसलों के लिए उपयुक्त है। यहाँ तंबाकू और आम की फसल भी खूब होती है।

सूचना प्रौद्योगिकी (आई०टी०) के क्षेत्र में तेलंगाना का बड़ा नाम है। राजधानी हैदराबाद इसके लिए विख्यात है जहाँ अनेक बहुराष्ट्रीय कंपनियों के कार्यालय संचालित है। तेलंगाना में प्रसिद्ध उस्मानिया विश्वविद्यालय है जिसे सन् 1918 में स्थापित किया गया था। यह देश के सबसे पुराने विश्वविद्यालयों में से एक है। हैदराबाद विश्वविद्यालय, राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान और अंतर्राष्ट्रीय सूचना प्रौद्योगिकी संस्थान राज्य के कुछ अन्य उल्लेखनीय शैक्षणिक संस्थान है।

तेलंगाना अपनी समृद्ध हथकरपा बुनाई परंपराओं के लिए भी प्रसिद्ध है, विशेष रूप से वारंगल, निजामाबाद और आदिलाबाद जिलों में महीने रेशमी साड़ियाँ जो हथकरघा पर बुनी जाती है और अपने चटक रंगों के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ की पोचमपल्ली और गढ़वाल साड़ी बेहद लोकप्रिय है। पोचमपल्ली साड़ी को बौद्धिक संपदा अधिकार का सरंक्षण भी प्राप्त है और इसे जी आई टैग हासिल है। तेलंगाना को बेहतरीन ऐतिहासिक कपड़ा बनाने हेतु भी जाना जाता है। यहाँ आज भी महिलाएं साड़ी पहनने को तरजीह देती हैं।

तेलंगाना अपनी प्राकृतिक सुंदरता के लिए बड़ा आकर्षण का केन्द्र है और इसीलिए यह राज्य हर वर्ष लाखों पर्यटकों की अगवानी करता है। तेलंगाना के मुख्य पर्यटक स्थलों में चारमीनार, फलकनुमा पैलेस, गोलकुंडा किला, कुतुब शाही महवरा, आदिलाबाद में कुंतला वॉटरफॉल, संगारेड्डी में श्री मलिकार्जुन स्वामी मंदिर, मंजीरा वाइल्डलाइफ, मंजीरा डैम, निजामाबाद में स्थित श्री राम सागर बांध, निजाम सागर बांध, श्री लक्ष्मी नरसिम्हा स्वामी मंदिर, निजामाबाद का किला एवं अन्य ऐतिहासिक इमारतें शामिल हैं। तेलंगाना राज्य के प्रसिद्ध तथा आकर्षक केंद्रों में खम्मम भी शामिल है। यह स्थान प्राचीन समय में राजाओं की राजधानी हुआ करता था। कहा जाता है कि यहां पर बना हुआ राजशाही भवन हजार वर्ष पुराना है । खम्मम के मुख्य रूप से चार चांद लगाने वाले स्थान में किन्नरसानी वन्यजीव अभयारण्य है। इतना ही नहीं, यहां रामागुंडम बांध तथा भद्राचलम राम मंदिर अत्यंत प्राचीन और आकर्षक है, जो पर्यटकों को अपनी ओर लुभाते हैं । यहाँ वारंगल का हजार स्तंभ मंदिर, वारंगल यूनेस्को की शीर्ष विरासत स्थलों की सूची में है ।यह 12वीं शताब्दी में बनाया गया था । भुवनागिरी का लक्ष्मी नरसिम्हा मंदिर भी बड़ी आस्था का केन्द्र है, जहाँ बड़ी संख्या में श्रद्धालु आते हैं।

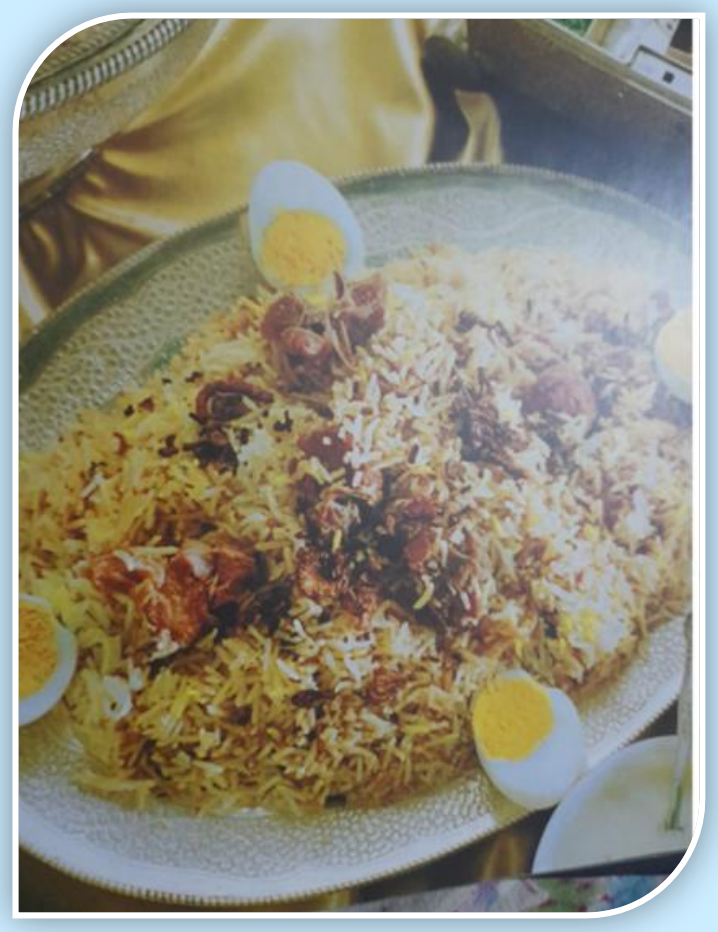

तेलंगाना में लोग विविध प्रकार के लोक पर्व भी मनाते हैं जिसमें बथुकम्मा लोक पर्व हैं । बोनालु का पर्व भी बहुत ही खास तरह से मनाया जाता है जो यहां के लोगों की आस्था के साथ एक विशेष महत्व भी रखता है। तेलंगाना कुचिपुड़ी और भरतनाट्यम सहित कई शास्त्रीय नृत्य रूपों का घर है। तेलंगाना अपने प्राचीन लोक नृत्य पेरिनी तांडव के लिए भी जाना जाता है। पेरिनी शिव तांडवम एक नृत्य है जो आम तौर पर पुरुषों द्वारा किया जाता है। इसे 'डांस ऑफ वॉरियर्स' भी कहा जाता है। इसी के साथ यहां गुस्साड़ी लोक नृत्य भी काफी प्रसिद्ध हैं जो आंध्र प्रदेश में भी गोंड जनजाति के लोगों द्वारा किया जाता है। आदिलाबाद जनपद में 'राजगड' जनजाति का विशिष्ठ स्थान हैं । इनके द्वारा मनाये जाने वाले उत्सवों में इनकी संस्कृति की स्पष्ट झलक मिलती है। एशिया का सबसे बड़ा जनजातीय मेला 'मेदाराम जात्रा'

तेलंगाना मे मुलुगु जिले में आयोजित होता है जिसे कुंभ के बाद सबसे बड़ा मेला माना जाता है। तेलंगाना की कोया जनजाति द्वारा मनाया जाने वाला यह मेला चार दिनों तक चलता है । राजकीय त्यौहार घोषित यह मेला दो वर्ष में एक बार माघ पूर्णिमा के अवसर पर आयोजित होता है। इस मेले में भारत की सभ्यता और सांस्कृतिक विरासत की अद्भुत छटा देखने को मिलती है। पर्यटकों का भारी हुजूम इस मेले में उमड़ता है।

तेलंगाना का पारंपरिक व्यंजन पोलेलु है पोलेलु को नक्सालू के नाम से भी जाना जाता है जो तेलंगाना का पारंपरिक व्यंजन है। यह गुड़, चना दाल, घी और इलायची पाउडर का मिश्रण है। इसके साथ ही यहाँ इडली, डोसा, ईरानी चाय, सकीनालु, हैदराबादी स्पेशल बिरयानी काफी प्रसिद्ध है। तेलंगाना में ज्यादातार व्यंजन रोटी आधारित होते हैं जैसे जॉन्न रोटी, डिब्बा रोटी, सज्जारोटी, उत्पदी पिंडी आदि ।

उल्लेखनीय है कि इस वर्ष अप्रैल माह में प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी ने तेलंगाना में रू11,300 करोड से अधिक की परियोजनाओं का उद्घाटन और शिलान्यास किया जिसके अंतर्गत उन्होंने हैदराबाद स्थित एम्स बीबीनगर का शिलान्यास किया। इसके साथ ही प्रधानमंत्री जी ने पांच राष्ट्रीय राजमार्ग परियोजनाएं सिकंदराबाद रेलवे स्टेशन के पुनर्विकास और अन्य विकास परियोजनाओं की आधारशिला भी रखी। उन्होंने सिकंदराबाद एवं तिरूपति, दो बंदे भारत एक्सप्रेस को भी झंडी दिखाकर रवाना किया।

समसामयिक ई–पत्रिका

अकस्मात

आज़ादी अंक
15 अगस्त,

प्रधान संपादक: **अशोक आत्रेय**

संपादक: **सुभाष दीपक**

अतिथि संपादक: **'द्विवागीश' गुडला परमेश्वर** विशिष्ट संपादक: **नंदिनी सिधारेड्डी**

ग्राफ़िक्स: **गिर्राज जाँगिड़**

प्रबंधक: **लोमष ऋषि**

सम्पर्क सूत्र: संपादकीय - **भू-ऋषि, डी 38-39, देव नगर,**

टोक रोड़, जयपुर - 302018

दूरभाष व व्हाट एप्स: **+91 88248 88775**

सम्पर्क सूत्र: प्रबंधकीय - **बी-3, राधा निकुजं बी, गणेश नगर, ईस्कान मंदिर रोड़,**

मानसरोवर, जयपुर - 302 018

दूरभाष व व्हाट एप्स: **+91-88248 88775**